सम्पूर्ण

टीका प्रिय प्रवास

(हरिऔध)

लेखक :—

शान्ति प्रसाद अग्रवाल

एम० ए० (संस्कृत और हिन्दी)

एवं

सरला अग्रवाल

एम० ए० (हिन्दी) साहित्यरत्न

प्रकाशक :—

स्टूडेन्ट स्टोर

बिहारीपुर, बरेली ।

प्रियप्रवास की टीका

लेखक

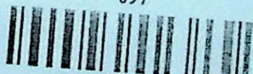
शान्तीप्रसाद अग्रवाल एम० ए०

एवं

सरला अग्रवाल एम० ए०



लिटरेरी पब्लिकेशन ब्यूरो, बरेली



● प्रकाशक ।
लिटरेरी पब्लिकेशन ब्यूरो, बरेली

● प्रथमवार : १९६८

● मूल्य ४·५०

● मुद्रक :
श्रीराम प्रेस, बरेली

विषय सूची

—......

प्रिय-प्रवास

प्रथम सर्ग

पृष्ठ १—दिवस का अवसान समीप था…कुल-वल्लभ की प्रभा ॥१॥

शब्दार्थ—लोहित=लाल। तरु-शिखा=वृक्ष की चोटी। राजती=शोभायमान होती। कमलिनी-कुल-वल्लभ=कमलिनियों के समूह का स्वामी अर्थात् सूर्य।

भावार्थ—दिन का अन्त होने ही वाला था। आकाश कुछ-कुछ लाल हो गया था। वृक्षों की चोटियों पर सूर्य का प्रकाश सुशोभित हो रहा था। तात्पर्य यह है कि सूर्य छिपने वाला था और उसकी किरणें वृक्षों की चोटियों (अतः केवल ऊँचे स्थलों) पर पहुंच पाती थीं।

विपिन बीच विहंगम-वृन्द का…उड़ रही नभ-मण्डल मध्य थी ॥२॥

शब्दार्थ—विपिन=वन। विहंगम-वृन्द=पक्षियों का समूह। कलनिनाद=मधुर चहचहाहट। विवर्द्धित=बढ़ा हुआ। विहगावली=पक्षियों की पंक्तियाँ।

भावार्थ—वन में पक्षियों के समूह की मधुर चहचहाहट बढ़ती जाती थी। विभिन्न प्रकार के पक्षियों की पंक्तियाँ आकाश में मधुर शब्द करती उड़ रही थीं। (सायंकाल पक्षी चहचहाने लगते हैं)।

अधिक और हुई नभ-लालिमा … … विनिमज्जित सी हुई ॥३॥

शब्दार्थ—अनुरंजित=लाल। हरीतिमा=हरियाली। अरुणिमा=लालिमा। विनिमज्जित=डूबी हुई।

भावार्थ—आकाश में लालिमा और भी बढ़ गई। दसों दिशाएँ उस लाली से रंग गईं। उस लालिमा में सभी वृक्षों की हरियाली भी छिप सी गई।

अलंकार—अन्तिम पंक्ति में उपमा अलंकार।

पृष्ठ २—झलकने पुलिनों पर भी लगी···अति ही रमणीय थी।।४।।

शब्दार्थ—पुलिनों=किनारों। सरि=नदी।

भावार्थ—आकाश की यह लालिमा (नदी व तालाबों के) किनारों पर भी प्रतिबिम्बित होने लगी। नदी व तालाब के जल में पड़ती हुई यह लाली अत्यन्त मनोरम लगती थी।

अचल के शिखरों पर जा चढ़ी ··· ··· मध्य शनैः शनैः ।।५।।

शब्दार्थ—पादप-शीश-विहारिणी=वृक्षों की चोटियों पर विहार करने वाली अर्थात् किरणें (छन्द १)। तरणि-बिम्ब=सूर्य मण्डल।

भावार्थ - पहले वृक्षों की चोटियों पर विहार करने वाली किरणें अब पर्वतों की चोटियों पर चमकने लगीं। सूर्य धीरे-धीरे आकाश में छिपने लगा।

अलंकार — अन्तिम पंक्ति में पुनरुक्ति-प्रकाश अलंकार।

ध्वनि-मयी कर के ··· ··· ··· राजित-कंज में ।।६।।

शब्दार्थ—कलित-कानन=सुन्दर वन। केलि निकुंज=क्रीड़ा-स्थल। तरणिजा=तरणि+जा=यमुना (सूर्य की पुत्री)। कुंज=वृक्षों और लताओं से घिरा स्थान।

भावार्थ—उसी समय यमुना-तट पर सुशोभित कुंज में मुरली बज उठी। मुरली की धुन से पर्वतों की गुफाएँ व सुन्दर वन में स्थित क्रीड़ा स्थल सभी गूंज उठे।

अलंकार—'कलित-कानन केलि' में वृत्यानुप्रास अलंकार है।

कणित मंजु-विषाण ··· ··· स्वर धावित-धेनु का ।।७।।

शब्दार्थ—क्वणित=बजने लगे। मजु=सुन्दर। विषाण, शृङ्ग= सींग का बाजा। प्रान्तर=वन। धावित=दौड़ती हुई।

भावार्थ—उस (मुरली के साथ ही अनेक मधुर वाद्य बजने लगे और साथ ही अनेक सींगों की ध्वनि भी सुनाई देने लगी उसके उपरान्त शान्त वन में दौड़ती हुई गायों की ध्वनि सुनाई पड़ी।

निमिष में वन-व्यापित ··· जिनके दल साथ था ।।८।।

शब्दार्थ—निमिष=पल। वन-व्यापित-वीथिका=वन में फैले हुए मार्ग। विलसता=सुशोभित होता था।

भावार्थ—क्षण भर में वन में फैली हुई गलियों में भाँति-भाँति की गौएँ सुशोभित हो गईं। उन गौओं के साथ ही श्वेत और मटमैले रंगों के बछड़ों का समूह भी सुशोभित हो रहा था।

अलंकार—'धवल-धूसर' में छेकानुप्रास अलंकार है।

जब हुए समवेत शनैः शनैः ... गोकुल-ग्राम को ॥९॥

शब्दार्थ—समवेत=इकट्ठे। सधेनु=गौओं सहित। व्रज भूषण=श्री कृष्ण। अति अलंकृत=सजा हुआ, अतः सुन्दर।

भावार्थ—जब सम्पूर्ण गोप अपनी-अपनी गौओं के साथ धीरे-धीरे एकत्र हो गये तब वे श्री कृष्ण को साथ लेकर सुन्दर गोकुल गाँव को चले।

अलंकार—प्रथम पंक्ति में 'शनैः शनैः' में पुनरुक्ति-प्रकाश है।

पृष्ठ ३—गगन-मण्डल में रज ... वर स्रोत विनोद का ॥१०॥

शब्दार्थ—विशद=विशाल। वर-स्रोत=श्रेष्ठ झरना। गेह=घर।

भावार्थ—(गोपों और गौओं के चलने से) आकाश में सर्वत्र धूलि छा गई। दसों दिशाएँ शब्दायमान हो उठीं। श्री कृष्ण के लौटने का समय समझ कर) विशाल गोकुल के घर-घर में आनन्द का मनोरम झरना बह निकला।

सकल वासर आकुल ... ... विभूषण-दर्शन-लालसा ॥११॥

शब्दार्थ—वासर=दिन। दिनान्त=संध्या। विलोकत ही=देखते ही।

भावार्थ—गोकुल ग्राम के सब लोग दिन भर श्री कृष्ण को न देख पाने के कारण व्याकुल से हो रहे थे। संध्या देखते ही श्रीकृष्ण के दर्शन करने की उनकी लालसा बढ़ चली।

सुन पड़ा स्वर ज्यों ... ... अनियंत्रित भाव से ॥१२॥

शब्दार्थ—कल-वेणु=सुन्दर वंशी । समुत्सुक=समान इच्छुक । हृदय-यंत्र=हृदय रूपी वाद्य-यंत्र निनादित होना=बज उठना ।

भावार्थ—श्रीकृष्ण की वंशी की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ते ही सारे ग्राम-वासी उनके दर्शनों को उत्सुक हो गए । उनका हृदय रूपी वाद्य-यन्त्र बेरोक-टोक बज उठा अर्थात् वे श्रीकृष्ण दर्शन को उतावले हो उठे ।

अलंकार—हृदय यंत्र में रूपक अलंकार है ।

बहु युवा युवती गृह ... ... दुख-मोचन के लिए ।।१३।।

शब्दार्थ—बहु=अनेक । विपुल=बहुत । स्वदृग=अपने नेत्रों से ।

भावार्थ—अनेक युवक व युवतियाँ, घर की बालिकाएँ व बालक, वृद्ध और प्रौढ़ व्यक्ति अर्थात् सभी आयु के स्त्री-पुरुष अपने-अपने घरों से विवश से होकर श्रीकृष्ण के दर्शन करके अपने नेत्रों का कष्ट मिटाने के लिए निकल पड़े ।

इधर गोकुल ... ... विमंडित-मण्डली ।।१४।।

शब्दार्थ कढ़ी=निकली । उमगती=उमंग में डूबी हुई । पगती=डूबती । विमंडित=शोभित ।

भावार्थ—इस ओर से जनता उल्लास और उमंग में डूबी हुई गोकुल से निकली । उस ओर से श्रीकृष्ण का दल जो अनेक गौओं से सुशोभित था, आ पहुंचा ।

ककुभ-शोभित गोरज ... ... नभ में नलिनीश है ।।१५।।

शब्दार्थ—ककुभ=दिशा । कदन=नष्ट । नलिनीश=सूर्य ।

भावार्थ—गौओं के पावों से उड़ी धूल में से निकलते हुए श्रीकृष्ण ऐसे शोभित हो रहे थे मानो सभी दिशाओं में अंधकार नष्ट करके सूर्य आकाश में विराजमान हो ।

अलंकार—उपमा अलंकार ।

पृष्ठ ४—अतसि-पुष्प ... ... कल-कान्ति थी ।।१६।।

शब्दार्थ--अतसि=अलसी । अलंकृत-कारिणी=विभूषित करने वाली । नील-सरोरुह=नीला कमल । रंजिनी=शोभा प्रदान करने वाली । नीरद=बादल । कल-कान्ति=सुन्दर आभा ।

भावार्थ—श्रीकृष्ण के श्याम शरीर की शोभा जल भरे मेघ जैसी थी । उनकी यह आभा अलसी के फूल को भी विभूषित करने वाली तथा शरद् ऋतु के नीले कमल (जो अत्यन्त सुन्दर होता है) को भी शोभा प्रदान करने वाली थी ।

अलंकार-- पहली-दूसरी पंक्तियों में प्रदीप, चौथी पंक्ति में उपमा ।

अति-समुत्तम ··· ··· प्रतिबिम्बित हो रही ।।१७।।

शब्दार्थ—मुकुर-मंजुल=शीशे के समान स्वच्छ । सतत= निरन्तर ।

भावार्थ--उनके अंग-प्रत्यंग अत्यन्त सुन्दर, शीशे के समान स्वच्छ व मनमोहक थे । उनके शरीर में सुकुमारता और सरसता निरन्तर छलकी पड़ती थी ।

अलंकार—दूसरी पंक्ति में उपमा ।

बिलसता कटि ··· ··· ··· स्कंध था ।।१८।।

शब्दार्थ—पटपीत=पीला वस्त्र । रुचिर=सुन्दर । कल-दुकूल-अलंकृत=सुन्दर दुपट्टे से सजी हुई ।

भावार्थ—श्रीकृष्ण की कमर में पीला वस्त्र (पीताम्बर) सुशोभित होता था तथा उनका शरीर सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित था । उनके हृदय (वक्षस्थल) पर वनमाला शोभायमान थी तथा उनका कंधा सुन्दर दुपट्टे से सजा हुआ था ।

मकर-केतन के ··· ··· भावमयी अलकावली ।।१९।।

शब्दार्थ- मकर-केतन=कामदेव । कल केतु=सुन्दर पताका । अलकावली=केश राशि ।

भावार्थ—उनके कानों में सुन्दर कुण्डल ऐसे सुशोभित थे जैसे

कामदेव की सुन्दर पताका। कुण्डलों के चारों ओर अनेक प्रकार की भावपूर्ण केशराशि बिखरी हुई थी।

अलंकार—प्रथम पंक्ति में उपमा अलंकार है।

मुकुट मस्तक का ... ... जिसकी वर-चन्द्रिका ॥२०॥

शब्दार्थ—शिखिपक्ष = मोर-पंख। मधुरिमामय = मनोहर। मञ्जु = सुन्दर। असित रत्न = नीलम। सुरंजिता = सुन्दर।

भावार्थ—श्रीकृष्ण के मस्तक पर जो मोर पंख का मुकुट था वह बहुत सुन्दर व रमणीय था। मोर के पंख की चन्द्रिका (चाँद जैसा चिह्न) नीलम के समान सुन्दर थी।

अलकार—प्रथम पंक्ति में छेकानुप्रास और अन्तिम दोनों पंक्तियों में उपमा है।

विशद उज्जवल ... ... पीत-सरोज की ॥२१॥

शब्दार्थ—विशद = स्वच्छ। खौर = आड़ा तिलक। असित = नीला। रज = धूलि। दल = पंखुड़ी।

भावार्थ—उनके स्वच्छ, उज्जवल व ऊँचे मस्तक पर केसर का आड़ा तिलक ऐसा सुशोभित हो रहा था जैसे नीले कमल की पंखुड़ी में पीले कमल की धूलि (पराग) पड़ी हो।

अलंकार—उपमा।

पृष्ठ ५—मधुरता-मय था ... ... की कमनीयता ॥२२॥

शब्दार्थ—समद = मद से। मोहती = आकर्षित होती। कमनीयता = शोभा।

भावार्थ—उनकी वाणी में माधुर्य था। उनकी मुसकान अमृत से सिंची हुई अर्थात् अत्यन्त प्रिय थी। उनके कमल जैसे नेत्रों की मद भरी शोभा नर-नारियों के मन को आर्कषित करती थी।

अलंकार—उपमा और रूपक।

सबल-जानु ... ... पद्म-समान था ॥२३॥

शब्दार्थ—सबल=शक्तिशाली। जानु=घुटनों। विलम्बित=विशाल। लसितांग=लसित+अंग=सुशोभित अंग। वय-किशोर-कला=किशोरावस्था का सौन्दर्य।

भावार्थ—उनकी विशाल भुजाएँ शक्तिशाली घुटनों तक लम्बी थीं। उनका वक्षस्थल अत्यन्त सुदृढ़ और उभरा हुआ था। उनके अंग किशोरावस्था के सौन्दर्य से सुशोभित थे। उनका मुख खिले हुए कमल के समान सुन्दर था।

अलंकार—दूसरी पंक्ति में छेकानुप्रास व अन्तिम में उपमा है।

विशेष—भुजाओं का घुटनों तक लम्बा होना चक्रवर्ती राजा का चिह्न माना जाता है।

सरस-राग ... ... में मधुवर्षिणी ॥२४॥

शब्दार्थ—सरस-राग-समूह=मधुर रागों के समूह। मन मोहन=मन को मोहने वाली। कल-नादिनी=मधुर आवाज करने वाली। मधुवर्षिणी=अमृत की वर्षा करने वाली।

भावार्थ—श्रीकृष्ण के हाथ में अमृत की वर्षा करने वाली वंशी थी। वह मधुर रागों के समूह की सहेली थी। यह वंशी कृष्ण के मन को मोहने वाले मंत्र की साथिन थी अर्थात् मन को मोहने वाली थी। वह सरसता को जन्म देने वाली तथा मधुर आवाज करने वाली थी।

विशेष—कवि श्रीकृष्ण की प्रशंसा करता-करता बंशी की प्रशंसा करने लगता है।

छलकती मुख ... ... कान्ति सी ॥२५॥

शब्दार्थ—छवि-पुंजता=सौन्दर्य-राशि। क्षिति=पृथ्वी। बगरती=फैलती। क्षणदा-कर=चन्द्रमा।

भावार्थ– उनके मुख की सौन्दर्य-राशि छलक रही थी। उनके शरीर की शोभा पृथ्वी को स्पर्श कर फैल रही थी। उनका श्रेष्ठ तेज सभी दिशाओं में फैल रहा था। आकाश में उनकी कान्ति चाँदनी के समान बिखर रही थी,

अलंकार– द्वितीय पंक्ति में वृत्यानुप्रास तथा अन्तिम पंक्ति में उपमा अलंकार है।

मुदित गोकुल की ... ... घन की घटा ।।२६।।

शब्दार्थ—मुदित=आनन्दित । व्रजाधिप=कृष्ण । तृषित=प्यासा ।

भावार्थ—गोकुल का आनन्दित जन-समुदाय जिस समय कृष्ण के सामने जा कर खड़ा हुआ उस समय जिस प्रकार प्यासा पपीहा बादलों को देखने में तल्लीन हो जाता है उसी प्रकार वे सब गोकुल वासी कृष्ण के मुख के सौन्दर्य को देखने लगे।

अलंकार—अन्तिम पंक्ति में उपमा अलंकार है।

पलक लोचन ... ... पुत्तलिका यथा ।।२७।।

शब्दार्थ—पड़ती=झपकती । लोभ=रोम । छवि-रता=सौन्दर्य देखने में लीन । बनिता=स्त्रियाँ । उपल=पत्थर । पुत्तलिका=मूर्त्तियाँ ।

भावार्थ—किसी के नेत्रों की भी पलक नहीं झपकती थी। किसी के शरीर का रोम तक नहीं हिलता था। सारी स्त्रियाँ सौन्दर्य देखने में इतनी लीन हो गईं जैसे पत्थर की बनी मूर्तियाँ हों अर्थात् वे निश्चल खड़ी हो गईं।

अलंकार—अन्तिम दो पंक्तियों में उपमा अलंकार है।

पृष्ठ ६ उछलते शिशु थे ... ... सुखमूल की ।।२८।।

शब्दार्थ जरठ=बूढ़े। सुषमा=शोभा। सुखमूल=श्रीकृष्ण।

भावार्थ—कृष्ण को देखकर बच्चे आनन्द से कूद रहे थे। युवक मानो रस का भण्डार ही लूट रहे थे। श्रीकृष्ण की शोभा निहार कर वृद्धों को भी नेत्रों का लाभ मिल रहा था।

बहु-विनोदित थीं ... ... व्रजेन्दु की ।।२९।।

शब्दार्थ विनोदित=हास-परिहास करने वाली। वयोवती=प्रौढ़ाएँ।

भावार्थ—कृष्ण की शोभा देखकर ब्रज-बालाएँ बहुत हास-परिहास करतीं थी। सभी युवातयाँ कृष्ण को नजर लगने से बचाने के लिए तिनके तोड़ती थीं तथा प्रौढ़ा-स्त्रियाँ ब त बार बलिहारी जाती थीं।

मुरलिका कर··· ··· ··· ···था अवगाहता ॥३०॥

शब्दार्थ—कर पंकज=हाथ रूपी कमल। सुधारस=अमृत। मंजु प्रवाह=मधुर-प्रवाह। अवगाहता=स्नान करता।

भावार्थ—जब कभी भी कृष्ण के हाथ रूपी कमल में उलझी बाँसुरी बज उठती थी उसी समय सारा जन-समूह अमृत के मधुर प्रवाह में स्नान करने लगता था।

अलंकार—प्रथम पंक्ति और तृतीय पंक्ति में रूपक है।

ढिग सुशोभित··· ··· ··· ··ओरवि राजती ॥३१॥

शब्दार्थ—ढिग=निकट। गातवती=रंगवाली। सुरभि=गौएँ।

भावार्थ—कृष्ण के निकट ही बलराम व ग्वालों के समूह विराजमान थे। विविध रंगों वाली तथा शोभावाली गाएँ चारों ओर शोभा पा रही थीं।

बज रहे बहु-शृंग ··· ··· ··· मुदिता दिशा ॥३२॥

शब्दार्थ—शृङ्ग-विषाण = सींग के बाजे। क्वणित=बजता।

भावार्थ—उस समय अनेकों सींग के बने हुए बाजे बज रहे थे और श्रेष्ठ मुरली बज रही थी। मधुर रागों के बजने से सभी दिशाएँ रसलीन होकर मोहित हो रही थीं।

विविध भाव··· ··· ··· की कलकिंकिणी ॥३३॥

शब्दार्थ—विमुग्ध=मोहित। कलकिंकणी=तगडी।

भावार्थ—अनेकों भावों में डूबी हुई दर्शकों की मण्डली मोहित हो रही थी। कभी अचानक ही किसी की कमर की तागड़ी बज उठती थी और अत्यन्त मधुर ध्वनि करती थी।

पृष्ठ ७ इधर था इस ··· ··· थी कहीं ॥३४॥

भावार्थ—समा=वातावरण। व्योम=आकाश।

भावार्थ—पृथ्वी पर ऐसा सफल वातावरण बना हुआ था उधर आकाश में कुछ और ही हो रहा था। उधर आकाश में न तो अब सूर्य सुशोभित था और न ही उसकी कोई किरण शोभायमान थी अर्थात् दि पूरी तरह ढल गया था।

अरुणिमा ... ... हो रहो ॥३५॥

शब्दार्थ—जगती-तल=पृथ्वी तल अर्थात् संसार। रंजिनी=प्रसन्न करने वाली। रागमयी=लालिमा युक्त। अवनि=पृथ्वी। तमसावृत=अन्धकार से ढकी हुई।

भावार्थ—वह पृथ्वी जो पहले तो लालिमा से प्रसन्न थी अब कालिमा का भार उठाए थी। पहले लालिमा युक्त रहने वाली दिशाएँ अब अँधेरी थीं। पृथ्वी अन्धकार से ढकी हुई थी।

तिमिर की यह ·· ··· ···मूर्त्ति विराम की ॥३६॥

शब्दार्थ—तिमिर=अन्धकार। विकाश=प्रकाश। विराम=रोक।

भावार्थ सारी पृथ्वी पर व्याप्त होने वाली तथा प्रकाश को रोकने वाली अँधकार की यह धारा, कृष्ण के दर्शनों के लिए उपस्थित जन समुदाय के नेत्रों की रुकावट की मूर्त्ति बन गई। अर्थात् अब वे कृष्ण का दर्शन करने में असमर्थ थे।

अलंकार—उपमा अलंकार है।

द्युतिमती उतनी ··· ··· श्रीघनश्याम की ॥३७॥

शब्दार्थ—द्युतिमती=प्रकाशवान। कनीनिका=आँख की पुतली।

भावार्थ—अब उनकी आँखों की अलौकिक पुतलियों में देखने की उतनी सामर्थ्य नहीं थी। अतः वह (आंख) श्री कृष्ण की मधुर शोभा को नहीं देख पाती थीं।

यह अभावुकता तम ·· ··मण्डल में लगी ॥३८॥

शब्दार्थ—अभावुकता=निष्ठुरता। तम-पुँज=गहन अन्धकार। नभस्तल=आकाश में स्थित। विवर्द्धन=बढ़ाना।

भावार्थ—गहन अन्धकार की इस निष्ठुरता को आकाश में स्थित तारा मण्डली नहीं सह सकी। अतः प्रकाश को बढ़ाने के लिए तारे आकाश में उदित होने लगे।

अलंकार—हेतूत्प्रेक्षा अलंकार।

तदपि दर्शक ... सरसीरुह भी लगे ॥३६॥

शब्दार्थ—तदपि=फिर भी। सरसीरुह=कमल।

भावार्थ—तारों के निकलने पर भी जब नेत्रों की दर्शन करने की इच्छा बिलकुल भी पूरी नहीं हुई तो यह देखकर (नेत्रों की असमर्थता) कमल भी सकुचाने लगे।

अलंकार—हेतूत्प्रेक्षा अलंकार है।

पृष्ठ ८—खग-समूह ... तरु-वृन्द थे ॥४०॥

शब्दार्थ—खग-समूह=पक्षी समूह। विटप=वृक्ष। अलाप=संगीत। यंत्र=वाद्य यंत्र।

भावार्थ– पक्षी समूह की चहचहाट अब बन्द हो गई थी। वृक्ष बिल्कुल शान्त हो गए थे। अब वृक्ष मधुर और सुन्दर संगीत के वाद्य-यन्त्र नहीं रह गये थे। अर्थात् वृक्षों पर बैठे पक्षियों का मधुर गान अब बन्द हो गया था।

विगह औ ... ... वादन वेरण का ॥४१॥

शब्दार्थ—विगह=पक्षी। विटपी-कुल=वृक्षों का समूह। मर्म्म=रहस्य।

भावार्थ—पक्षी व वृक्ष-समूह की यह मौनता एक रहस्य को प्रकट कर रही थी। वास्तव में वे वंशी की एक दर्द भरी अन्तिम तान को सुनने के लिए शान्त हो गए थे।

अलंकार—यहाँ हेतूत्प्रेक्षा अलंकार है।

विहग - नीरवता ... वर - वंशिका ॥४२॥

शब्दार्थ—शृंग=सींग से बने। विषाण=वाद्य यन्त्र।

भावार्थ—पक्षियों के शान्त होने के पश्चात् ही विभिन्न वाद्य-यन्त्रों

का स्वर रुक गया । इस प्रकार यह मधुर गान समाप्त हो गया पर मधर-वंशी निरन्तर बजती रही ।

विविध-मर्म्मभरी ... ... भी मिली ।।४३।।

शब्दार्थ--विराग-विबोधिनी=विरक्ति जागृत करने वाली ।

भावार्थ--वंशी की अनेक रहस्यों से भर पूर, करुणा-उत्पादक तथा विरह और विरक्ति को जाग्रत करने वाली धुन कुछ समय के लिए आकाश में गूँजती रही और तत्पश्चात् वायु में बिलीन हो गई ।

विशेष--आगे आने वाले करुणा-प्रसंगों की भूमिका कवि इस पद द्वारा बाँधने का प्रयत्न कर रहा है ।

ब्रज-धरा ... . निहिता हुई ।।४४।।

शब्दार्थ--निहिता हुई=मूक हो गई ।

भावार्थ--ब्रज-भूमि के जन समुदाय के जीवन का संचालन करने वाली, वृक्षों तथा लताओं को आनन्द प्रदान करने वाली व नर-नारियों के मन को मोहने वाली वंशी मूकता में डूब गई अर्थात् शान्त वातावरण में वंशी भी शान्त हो गई । तात्पर्य यह है कि पूर्ण नीरवता छा गई ।

प्रथम ही करता सुधा ।।४५।।

शब्दार्थ--निनाद=मधुर-ध्वनि । श्रवण=कान ।

भावार्थ--अन्धकार के कार्य से अर्थात् अन्धकार के छा जाने से कृष्ण की छवि का दर्शन नेत्र पहले ही नहीं कर सकते थे और मुरली की मधुर-ध्वनि भी रुक जाने से अब कान भी अमृत रूपी मधुर संगीत को सुनने से बंचित हो गए ।

पृष्ठ ६--इस लिए ... ... गुण - मालिका ।।४६।।

शब्दार्थ--रसना=जिह्वा । समुत्सुकता=उल्लास । ग्रथन=गूंथना वर्णन ।

भावार्थ--जब जन-समुदाय कृष्ण के दर्शन करने व बन्शी सुनने में असमर्थ हो गया तब उसकी जिह्वा उल्लास व उमंग से भरकर बड़े गर्व से उनके गुणों का वर्णन करने लगी ।

पृष्ठ ६—जब दशा ... ... गोकुल ग्राम में।।४७।।

शब्दार्थ—जलज-लोचन=कमल नयन=कृष्ण। अवनि-गौरव= पृथ्वी का गौरव-स्थल।

भावार्थ—जिस समय जन समुदाय इस अवस्था को प्राप्त हो रहा था उस समय कमल नयन श्रीकृष्ण गौओं तथा ग्वालों सहित पृथ्वी के गौरवस्थल गोकुल गांव की ओर जा रहे थे।

कुछ घड़ी ... ... सुनसान था ।।४८।।

शब्दार्थ—कान्त=रमणीय।

भावार्थ—कुछ समय में गमन की यह रमणीय क्रिया समाप्त हो गई अर्थात् कृष्ण व अन्य सभी अपने-अपने घरों को चले गए। जिस स्थान पर कुछ समय पूर्व धूम सी मची थी वहीं अब नीरवता बढ़ती जा रही थी।

कर विदूरित ... ... वृन्द भी ।।४६।।

शब्दार्थ– विदूरित=दूर करना। रसनेन्द्रिय=जिह्वा।

भावार्थ—दर्शक गण भी कृष्ण-दर्शन की अभिलाषा-पूर्ण करके, ध्वनि से उत्पन्न अमृत कानों को पिला कर अर्थात् बंशी का मधुर गायन सुन कर तथा जिह्वा से कृष्ण के गुणों का बखान करके अपने घरों को चले गए।

प्रथम थी ... ... नीरवता हुई ।।५०।।

शब्दार्थ—सुप्लावित होना=भली-भाँति लहराना।

भावार्थ—पहले जिस स्थान पर मधुर ध्वनि की लहरें वायु में गूंज रही थीं तथा सुन्दर गायन भली भाँति लहरा रहा था, वहीं पर अब पूर्ण निस्तब्धता छा गई।

विशद ... ... काल को ।।५१।।

शब्दार्थ—चित्रपटी=चित्र-भूमि।

भावार्थ—ब्रज भूमि रूपी विशाल चित्र-भूमि आज एक उत्कृष्ट चित्र से वंचित हो गई है परन्तु कृष्ण की जो छवि (मधुर-मूर्त्ति) यहाँ

चित्रित हो गई है वह सदैव के लिए लुप्त हो गई अर्थात् अब श्रीकृष्ण गोकुल में कभी दर्शन नहीं देंगे ।

विशेष—इस सर्ग के अन्तिम छन्द में आने वाली घटना का संकेत है ।

———

द्वितीय सर्ग

पृष्ठ १०—गत हुई ... ... तारक-मालिका ।।१।।

शब्दार्थ—द्वि-घटी=दो घड़ी । मेदिनी=पृथ्वी ।

भावार्थ—दो घड़ी रात्रि बीत चुकी थी । पृथ्वी अंधकार से पूर्णतया आच्छादित थी । आकाश में तारों की पंक्तियाँ शोभायमान थीं ।

तम ढके ... ... इस काल था ।।२।।

शब्दार्थ—तमस-पादप=अंधकार के वृक्ष ।

भावार्थ—अन्धकार से आच्छादित वृक्ष अन्धकार से बने वृक्षों के समान दृष्टि गोचर हो रहे थे । गोकुल ग्राम के सभी घर भी इस समय अंधकार से बने प्रतीत होते थे अर्थात् गहन-अन्धकार छाया हुआ था ।

अलंकार—उपमा ।

इस तमो ... ... हरते जहाँ ।।३।।

शब्दार्थ—सर्व-सुकक्ष=सबसे अधिक सुन्दर कमरा ।

भावार्थ—अन्धकार से आच्छादित इन घरों में एक कमरा अन्य कमरों की अपेक्षा अधिक सुन्दर व अत्यन्त प्रकाशवान था । इस कमरे में अनेक प्रकाशवान दीपक पूर्ण अन्धकार को नष्ट कर रहे थे ।

इस प्रभा ... ... तात की ।।४।

शब्दार्थ—सदन=घर । ब्रजाधिप-तात=ब्रज के मुखिया के पुत्र कृष्ण ।

भावार्थ—सारे गृहकार्य को निपटा कर कुल वधुयें इस प्रकाशवान सुन्दर कमरे में एकत्रित होकर कृष्ण के सुयश का वर्णन करती थीं ।

पृष्ठ ११—सदन ... ... अनुरक्त थी ।।५।।

शब्दार्थ—अनुरक्त=लीन ।

भावार्थ – घरों के सामने स्थित श्रेष्ठ बैठकों में, जो सुन्दर प्रकाश से प्रकाशित थीं, सभी पुरुष एकत्रित होकर कृष्ण के उत्तम गुणों के वर्णन में तल्लीन थे ।

रमणियाँ ... ... विरदावली ॥६॥

शब्दार्थ—कल-कंठ=मधुर स्वर । विरदावली=यशगान ।

भावार्थ—स्त्रियाँ घर की बालिकाओं के साथ तथा पुरुष बालकों के दल के साथ मधुर-स्वर से श्रीकृष्ण, जो ब्रज का आभूषण थे, का यशगान कर रहे थे ।

सब पड़ौस ... ... कीर्ति की ॥७॥

शब्दार्थ—कुसुमावलि=पुष्पमाला ।

भावार्थ—कहीं पड़ौस के सभी व्यक्ति एकत्रित थे तो कहीं घर के सब लोग और कहीं पुरुष व स्त्रियाँ मिलकर कृष्ण के यश रूपी पुष्पों को चुन रहे थे अर्थात् कृष्ण के यश का वर्णन कर रहे थे ।

रसवती ... ... थी कहीं ॥८॥

शब्दार्थ—रसना=जिह्वा । रसवती=रसीली, सरस ।

भावार्थ—किसी स्थान पर तो सरस जिह्वा कृष्ण के श्रेष्ठ गुणों का वर्णन कर रही थी अर्थात् नर-नारी मधुर परन्तु उच्चस्वर से उनका कीर्तन कर रहे थे और किसी स्थान पर उनके यश का गान संगीतात्मक ढंग पर हो रहा था ।

बज रहे मृदु ... ... हो रहा ॥९॥

शब्दार्थ—करताल=ताली । मधु-वर्षण=अमृत वर्षा ।

भावार्थ—मधुर नगाड़े बज रहे थे । तालियों का स्वर सुनाई पड़ता था । श्रेष्ठ वीणा के सुमधुर वादन से जैसे अपार अमृत की वर्षा हो रही थी । तात्पर्य यह है कि संकीर्तन हो रहा था । संकीर्तन में नगाड़ो, वीणा व ताली का प्रयोग होता है ।

प्रति निकेतन ... ... ग्राम था ॥१०॥

शब्दार्थ—निकेतन=घर ।

भावार्थ—इस समय प्रत्येक घर से मधुर गान का स्वर लहरियाँ निकल रही थी अर्थात सब घरों में कीर्तन हो रहा था। सारी गलियाँ आनन्द-विभोर थीं और सम्पूर्ण गोकुल गूंज रहा।

पृष्ठ १२—सुन पड़ी ... ... अविराम थी ॥११॥

शब्दार्थ अनर्थकरी=अनिष्ट करने वाली। अविराम=निरन्तर।

भावार्थ—इसी समय एक अत्यन्त अनिष्टकारी स्वर इस ग्राम में सुनाई पड़ने लगा। यह स्वर एक वाद्य-यन्त्र को अत्यधिक बजाये जाने के कारण अब निरन्तर निकल रहा था।

मनुज एक ... ... स्वर-तार से ॥१२॥

शब्दार्थ—विघोषक=गंभीर शब्द करने वाला नगाड़ा। स्वर-तार=ऊँचा स्वर।

भावार्थ—एक मनुष्य पहले तो नगाड़े को जोर-जोर से पीट कर गंभीर शब्द करता था तत्पश्चात् ऊँचे स्वर से कृष्ण के गोकुल से चले जाने के समाचार की घोषणा यूँ करता था।

अमित ... ... है किया ॥१३॥

शब्दार्थ - अमित-विक्रम=अत्यन्त पराक्रमी। समादर=आदर सहित।

भावार्थ—अत्यन्त पराक्रमी राजा कंस ने धनुष-यज्ञ देखने के लिए व्रज अधिपति (नन्द) को उनके पुत्र अर्थात् कृष्ण सहित अत्यन्त सम्मान से आमंत्रण दिया है।

यह निमंत्रण ... ... हो चुका ॥१४॥

शब्दार्थ—सुत-स्वफल्क=अक्रूर। अवधारित=निश्चित।

भावार्थ - आज ही इस निमत्रण को लेकर अक्रूर जी आए हैं। कल प्रातःकाल ही मथुरा जाने का निश्चय भी हो चुका है।

इस सुविस्तृत ... ... मथुरापुरी ॥१५॥

शब्दार्थ—उपढौकन=उपहार।

भावार्थ—इस विशाल गोकुल गाँव में जितने भी श्रेष्ठ ग्वाले रहते हैं उन सभी को उपहार आदि लेकर मथुरा चलना चाहिए।

इसलिए ... ... विलम्ब हो ॥१६॥

शब्दार्थ—भूपनिदेश=राजाज्ञा। समाहित=एकत्रित।

भावार्थ—इस कारण राजा नन्द की आज्ञा है कि सभी गोप एकत्रित होकर सुन लें। आज रात्रि में ही जाने के सब प्रबन्ध हो जाने चाहिए जिससे कि प्रातःकाल जाने में देरी हो गई।

पृष्ठ १३—निमिष ... ... ग्राममयी हुई ॥१७॥

शब्दार्थ—निमिष=क्षण। रजनि-अंक-कलंकित-कारिणी=काली रात्रि को भी कलंकित करने वाली।

भावार्थ—क्षण भर में ही रात्रि को भी कलंकित करने वाली अर्थात् अत्यन्त निकृष्ट भयानक घोषणा मधुर वायु के सहयोग से सम्पूर्ण गोकुल गाँव में फैल गई।

अलंकार—अतिशयोक्ति अलंकार।

कमल-लोचन ... ... घटना हुई ॥१८॥

शब्दार्थ—अशनि=वज्र। अनिष्टकारी=दुःखदायी।

भावार्थ—कमल-नयन कृष्ण के जाने का यह समाचार वज्रपात के समान था। अत्यन्त चिन्तातुर गोकुल वासियों के लिए यह घटना अत्यन्त दुःखदायी थी।

चकित भीत ... ... उर-वेदना ॥१९॥

शब्दार्थ—कुलमानव=सम्पूर्ण नर-नारी। नृशंस=निर्दयी।

भावार्थ—सम्पूर्ण जन समुदाय इस घोषणा को सुनकर आश्चर्य तथा भय से काँप उठा और स्तब्ध हो गया। निर्दयी कंस की धोकेबाजी को याद करके उनके हृदय का कष्ट और अधिक बढ़ गया अर्थात् श्रीकृष्ण की सुरक्षा की चिन्ता हो गई।

कुछ घड़ी ... ... विषाद का ॥२०॥

शब्दार्थ—प्रवहमान=प्रवाहित। खर=तीव्र।

भावार्थ—कुछ समय पूर्व जहाँ आनन्द की धारा प्रवाहित हो रही थी अब उसी आनन्दमयी भूमि में दुःख का तीव्र स्रोत बह चला अर्थात् सुख अब दुःख में बदल गया।

अलंकार—१. रूपक अलंकार। २. दूसरी पंक्ति में वृत्यनुप्रास है।

कर रहे ... ... दिगन्त को ॥२१॥

शब्दार्थ—कुण्ठित=अवरुद्ध।

भावार्थ—जो व्यक्ति कृष्ण की प्रशंसा में सुन्दर गायन कर रहे थे वे सहसा अवरुद्ध हो गए और इसलिए अपूर्व गायन आकाश में नहीं गूंज रहा था।

उतर तार ... ... करताल भी ॥२२॥

शब्दार्थ मुरजादि=वाद्य-यंत्र। वादक-वृन्द=बजाने वाले।

भावार्थ—इस कुसमाचार के कारण अनेक वीणाओं के तार गिर गए तथा वाद्य-यन्त्रों में सरसता समाप्त हो गई। लाचारी के कारण करताल बजाने वालों के हाथों से करतालें स्वयं गिर गये अर्थात् उनके हाथों में शक्ति नहीं रही।

पृष्ठ १४ - सकल ... मयी हुई ॥२३॥

शब्दार्थ—कल कंठता=सुन्दर गले वाली। कातरता=विवशता।

भावार्थ—सारी ग्राम-वधुएं जिनके गले से मधुर गान निकलता था अब अत्यन्त दयनीय और विवश अवस्था को पहुंच गईं। उनके हृदय की मधुर आकांक्षाएँ अब अनेक संकल्प-विकल्पों में लीन हो गईं।

दुख-भरी ... ... भी लगे॥ ४॥

शब्दार्थ—कुत्सित=कलुषित। करुण-प्लावित=पीड़ा मय।

भावार्थ—उनके हृदय को दुःखपूर्ण व कलुषित विचार आकर मथने लगे। पीड़ा से भरपूर उनके नेत्रों के किनारों पर आँसू की बूंदे झलकने लगीं।

नव-उमंग ... ... कुम्हला गया ॥२५।

शब्दार्थ—मलिन=आभाहीन। वदन=मुख।

भावार्थ—ग्राम की बालिकाएँ जो नई उत्कंठाओं से भरपूर थीं अब

आभाहीन तथा (आने वाले कष्टों के) शंकित हो गईं। अत्यन्त प्रसन्न रहने वाले बाल-समूह मुख भी (शोक से) मुरझा गए।

ब्रज-धराधिप ... काल थी ॥२६॥

शब्दार्थ ब्रज-धराधिप तात=कृष्ण।

भावार्थ—इस समय प्रत्येक स्थान पर केवल एक विषय पर बात हो रही थी कि कल प्रातःकाल हमें छोड़कर श्रीकृष्ण मथुरा चले जायेंगे।

सब परस्पर ... ... यथेष्ट था ॥२७॥

शब्दार्थ—ब्रजेश=नन्द। स्वबन्धु=सगे सम्बन्धी।

भावार्थ—सभी लोग आपस में यही कह रहे थे कि कृष्ण को निमंत्रण क्यों भेजा गया है। इसमें कंस की अवश्य कोई चाल है। उनका विचार था कि नन्द को अपने कुछ सगे-सम्बन्धियों सहित चले जाना ही पर्याप्त रहेगा (कृष्ण के जाने की क्या आवश्यकता है ?)

पर निमंत्रित ... ... में छिपी ॥२८।

शब्दार्थ—दुरभि सधि=दुष्ट नीति। नृशंस=क्रूर।

भावार्थ—इसके बावजूद भी कृष्ण को जो आमंत्रण दिया गया है, उसमें भी कोई न कोई चाल अवश्य है क्योंकि क्रूर राजा कंस की दुष्ट-नीति ब्रज में अब छिपी हुई नहीं है अर्थात् सर्वविदित है।

पृष्ठ १५—विवश है ... ... नव-व्याधि है ॥२६॥

शब्दार्थ—विधि=भाग्य। वामता=उल्टा पना। व्याधि=विपत्ति।

भावार्थ—सब कह रहे थे कि हमारा भाग्य उलट गया है और उसने विवश कर दिया है। सम्भवतः ब्रजभूमि के बुरे दिन आ गए हैं और हम सभी दुर्भाग्यशाली हैं क्योंकि नित नई विपत्ति आती ही रहती है।

किस परिश्रम ... ... है दिखा ॥३०॥

शब्दार्थ—सुरोत्तम=इन्द्र। परिसेवना=पूजा। जराजित=वृद्धावस्था। महर=यशोदा।

भावार्थ—बड़ी मेहनत तथा साधना से इन्द्र की सेवा करके इस वृद्धावस्था में यशोदा ने पुत्र का मुंह देखा है अर्थात् उन्हें पुत्र प्राप्त हुआ है।

अलंकार—'जराजित-जीवन' में छेकानुप्रास है ।

सुअन भी ... ... जीवन प्राण है ॥३१।

शब्दार्थ सुअन=पुत्र । प्रसाद=कृपा ।

भावार्थ—देवताओं और ब्राह्मणों की कृपा से उन्हें पुत्र भी अत्यन्त अनुपम व दिव्य प्राप्त हुआ है। वह अपने गुणों की खान के कारण इस समय ब्रजभूमि के जन-जीवन का प्राण बन गया है ।

पर बड़े ... ... की व्यथा ॥३२॥

शब्दार्थ—दग्धकरी=जलाने वाली, कष्ट देने वाली ।

भावार्थ—परन्तु यह अत्यन्त शोक की बात है कि विपत्ति अब भी नहीं दूर होती । हृदय को पीड़ित करने वाली वेदना को शब्दों द्वारा अभि-व्यक्त नहीं किया जा सकता ।

जनम की ... ... हो सकी ॥३३॥

शब्दार्थ—विकटता=भयंकरता । अपसारित=दूर ।

भावार्थ कृष्ण के जन्म-दिवस से ही ब्रज में अनेकों उपद्रव हुए हैं। इन उपद्रवों की भयंकरता का ध्यान आज भी चित्त से दूर नहीं होता ।

परम-पातक ... ... विनाश थी ॥३४॥

शब्दार्थ—अपावनतामय=पाप मय । पय-अपेय=न पीने योग्य ।

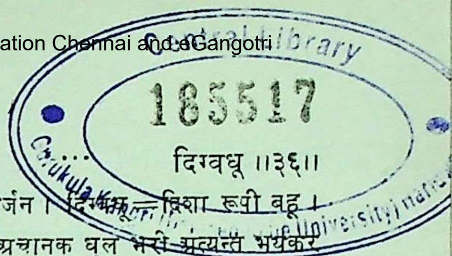
भावार्थ—पाप की साक्षात् मूर्ति के समान अत्यन्त अपवित्र पूतना ने कृष्ण को विषयुक्त दूध पिलाया और इस प्रकार अपनी ओर से तो वह ब्रज-भूमि का सर्वनाश कर ही चुकी थी ।

पृष्ठ १६—पर किसी ... ... का हुई ॥३५॥

शब्दार्थ—गरल=विष । अर्भक=बालक । कवल=कौर । काल-भुजंगम=काल रूपी सर्प ।

भावार्थ—परन्तु किसी पुराने एकत्रित पुण्यों के कारण बालक (कृष्ण) के लिए विष अमृत बन गया । पूतना स्वयं विषाक्त होकर काल रूपी सर्प का कौर बन गई अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हुई ।

अलंकार—चौथी पंक्ति में रूपक है ।



फिर अचानक ... ... दिग्वधू ॥३६॥

शब्दार्थ—गुरु-गर्जना=भयंकर गर्जन। दिग्वधू=दिशा रूपी बहू।

भावार्थ – उसके बाद एक दिन अचानक धूल भरी अत्यन्त भयंकर आंधी चलने लगी। उस आंधी के भयंकर गर्जन को केवल सुनने मात्र से अचानक ही सारी दिशाएँ कांप उठीं।

अलंकार—अन्तिम पंक्ति में रूपक है।

उपल वृष्टि ... ... हो गई ॥३७॥

शब्दार्थ—उपल=ओले। महि=पृथ्वी। वारिद-व्यूह=मेघ-समूह। ककुभ=दिशा।

भावार्थ—एक दिन ओलों की भयंकर वर्षा हुई, पूर्ण अन्धकार छा गया तथा पृथ्वी पत्थर रूपी ओलों से लद गई। मेघ-समूह की भयंकर गर्जना सब दिशाओं में फैल गई।

उखड़ पेड़ ... ... निकेत भी ॥३८॥

शब्दार्थ—शिखर=मकानों के कलश। निकेत=घर।

भावार्थ—परिणाम स्वरूप कई वृक्ष जड़ से ही उखड़ गये। पृथ्वी पर वृक्षों की डालियाँ गिर पड़ी। मकानों के कलश टूट गये और छतें नष्ट हो गईं। यहां तक कि सब मजबूत मकान भी हिल गये।

बहु रजोमय ... ... की हुई ॥३९॥

शब्दार्थ—रजोमय=धूल भरा। पांशु=धूलि। आनन=मुख।

भावार्थ—सब मनुष्यों के मुखों पर धूलि जम गई। दोनों नेत्रों में धूल भर गई। वायु द्वारा संचालित धूल के आक्रमण से ब्रज वासियों की बहुत बुरी दशा हो गई।

घिर गया ... ... वसुन्धरा ॥४०॥

शब्दार्थ—तम-तोम=अन्धकार-समूह। निशि=रात्रि।

भावार्थ– इतना अधिक अन्धकार छा गया कि दिन भी रात्रि में परिवर्तित हो गया। वायु की गर्जना व बादलों की गड़गड़ाहट से सारी ब्रज-भूमि काँप उठी।

पृष्ठ १७—प्रकृति थी ... हो उठा ।।४१।।

शब्दार्थ अदृश्य=अन्तर्ध्यान । क्रन्दन=विलाप ।

भावार्थ—जिस समय प्रकृति ने इतना अधिक उग्र रूप धारण कर रखा था उसी समय अचानक ही श्रीकृष्ण अन्तर्ध्यान (लापता) हो गए। इस कारण राजा नन्द के घर में बहुत भयंकर विलाप प्रारंभ हो गया।

सकल-गोकुल ... ... हो गया ।।४२।।

शब्दार्थ—प्रभंजन=तूफान । पवि-समाहत=वज्र से चोटिल ।

भावार्थ—एक तो पहले ही सारा गोकुल भयंकर आंधी, तूफान आदि से व्याकुल था अब नन्द के घर का यह समाचार सुना तो उन पर जैसे वज्र टूट पड़ा।

अलकार—अन्तिम पवित में उपमा है।

पर व्यतीत ... ... हो गया ।।४३।।

शब्दार्थ—द्विघटी=दो घड़ी । तृणावरतीय=तृणासुर नामक राक्षस द्वारा उत्पादित बवंडर।

भावार्थ—दो घड़ी टलने पर तृणासुर नामक राक्षस द्वारा उत्पन्न वह बवंडर समाप्त हो गया। आँधी रुक गई, अन्धकार दूर हो गया व मेघ-समूह नष्ट हो गया।

प्रकृति ... ... भी मिले ।।४४।।

शब्दार्थ—व्योम=आकाश । सद्म=घर ।

भावार्थ- प्रकृति का प्रकोप शान्त हो गया। सूर्य की किरणें आकाश में चमकने लगीं और अपने सुन्दर घर के निकट ही हँसते-खेलते श्रीकृष्ण मिल गए।

अति पुरातन ... ... जो बचा ।।४५।।

शब्दार्थ—पुरातन-पुण्य=चिर-संचित-पुण्य ।

भावार्थ—इस समय राजा नन्द का कोई पुराना पुण्य स्वयं ही उदय हो गया था क्योंकि भयंकर वायु के रोष में पुष्प समान कोमल बालक (कृष्ण) बच गया था।

अलंकार—अन्तिम पंक्ति में उपमा है।

शकट-पात ... बलवीर को ।।४६।।

शब्दार्थ—शकट=एक राक्षस का नाम, गाड़ी। कुलिशोपम=वज्र के समान। चंचु=चोंच।

भावार्थ—एक बार कृष्ण के निकट गाड़ी (जो वास्तव में एक राक्षस था) गिर पड़ी व एक बार अर्जुन के समान विशाल वृक्ष आ पड़ा। अन्य समय बकासुर नामक बगुले (राक्षस) ने अपनी वज्र के समान कठोर चोंच से कृष्ण को पकड़ने का प्रयत्न किया (परन्तु हर बार श्रीकृष्ण बच गए)।

पृष्ठ १८—वधन ... ... अरिष्ट का ।।४७।।

शब्दार्थ—वधन-उद्यम=हत्या का प्रयत्न। अघ संज्ञक=अघासुर। घोटक=केशी नामक एक राक्षस। अपकारिता=शत्रुता। निपातन=गिराना। अरिष्ट=अरिष्टासुर।

भावार्थ—अत्यन्त शक्तिशाली वत्सासुर ने बछड़े के रूप में कृष्ण की हत्या का प्रयत्न किया। अघासुर ने सर्प के रूप में कृष्ण को धोखे से मारना चाहा। केशी नामक राक्षस ने घोड़े के रूप में कृष्ण से शत्रुता की और अरिष्टासुर ने कृष्ण को गिराना चाहा (परन्तु कृष्ण प्रत्येक समय बच गये)।

कपट-रूप ... ... जिनसे बचे ।। ८।।

शब्दार्थ—प्रलम्ब=प्रलम्बासुर। व्योम=व्योमासुर।

भावार्थ—प्रलम्बासुर ने छद्म-वेश धारण कर धोखा देने का प्रयत्न किया। व्योमासुर ने पशुपालक के रूप में दुष्टता करनी चाही। ये सब की सब भयंकर विपत्तियाँ थीं जिनसे ब्रज के भूषण श्रीकृष्ण बच गये।

पर दुरन्त ... ... मख में हुए ।।४६।।

शब्दार्थ—दुरन्त=दुष्ट (जिसका अंत कठिन हो)। मख=यज्ञ।

भावार्थ—(इन सब प्रयत्नों में असफल होने पर) इस बार दुष्ट कंस ने भयंकर षड्यन्त्र रचा है। इसलिए उसने राजा नन्द के साथ दोनों बालकों—बलराम व कृष्ण—को यज्ञ में निमंत्रित किया है।

गमन जो ... ... प्रदायिनी ॥५०॥

शब्दार्थ—कष्ट-प्रदायिनी=दु:ख देने वाली।

भावार्थ—वे लोग नहीं जायें, ऐसा भी नहीं हो सकता और उनके प्रस्थान से विपत्ति की आशंका है। इस कुशल षड्यंत्र की जटिलता अत्यन्त दु:ख देने वाली है।

प्रणतपाल ... ... पोत है ॥५१॥

शब्दार्थ—श्रीपते=लक्ष्मी के स्वामी, विष्णु। मज्जित=डूबते हुए। पोत=जहाज।

भावार्थ—दीन-बंधु, दया-सागर, लक्ष्मी के स्वामी विष्णु के चरण-कमल ही फलदायक हैं। वे संसार के कष्ट रूपी सागर (भव-सागर) में डूबते का सबसे श्रेष्ठ जहाज (सहारा) हैं।

अलंकार—रूपक अलकार है।

विषम संकट ... ... नख-ज्योति का ॥५२॥

शब्दार्थ—निबिड़=घना। पामरता=दीनता।

भावार्थ—ब्रज-भूमि पर मयंकर विपत्ति टूट पड़ी है परन्तु हमारा एक मात्र सहारा घनी दीनता ही है। अंधकार फैल गया है परन्तु हे भगवान् हमें आपके पाँव के नाखून के प्रकाश का सहारा है।

अलंकार—सांगरूपक है।

पृष्ठ १६—विपद ज्यों ... ... है यही ॥५३॥

शब्दार्थ—बहुधा=अधिकतर।

भावार्थ—हे भगवन्! जिस प्रकार अन्य सभी विपत्तियाँ आपकी कृपा से टल गई हैं उसी प्रकार यह विपत्ति भी दूर हो जाए अर्थात श्रीकृष्ण मथुरा जाने से रुक जायें। हे दया-निधान! इस दु:खी हृदय की आपसे यही अत्यन्त विनम्र प्रार्थना है।

व्रज-विभाकर ... ... हो चुकी ॥५४॥

शब्दार्थ—ब्रज-विभाकर=कृष्ण। तमसावृत=अंधकार आछन्न।

भावार्थ इस चिन्तित नर-समुदाय का एक मात्र सहारा श्रीकृष्ण

ही हैं। यदि कृष्ण का कुछ भी अनिष्ट हुआ तो व्रज भूमि शोक के अन्धकार से आच्छादित हो जायेगी।

विशेष—विभाकर के पश्चात् तमसावृत शब्द का प्रयोग सार्थक है। सूर्यास्त के पश्चात् अन्धकार छा ही जाता है।

अलंकार—अतः परिकरांकुर अलंकार है।

पुरुष यों करते ... ... विमोचती ॥५५॥

शब्दार्थ—व्यथिता=दुःखी। विषाद-उपेत=दुःख से भरी। विमोचती=छोड़ती थी।

भावार्थ—पुरुष इस प्रकार कह-कह कर अपना दुःख प्रकट कर रहे थे। गोकुल की स्त्रियाँ और अधिक दुःखी थीं। अत्यन्त कष्टों से युक्त वे रो-रोकर अपने नेत्रों से जल गिरा रही थीं अर्थात् आँसू गिरा रही थीं।

दुख प्रकाशन ... ... अतिरिक्त था॥५६॥

शब्दार्थ—बिसूरना=सिसकना।

भावार्थ—स्त्रियों द्वारा जो दुःख प्रकट किया जा रहा था वह पुरुषों की तरह अत्यधिक था परन्तु रोना, चिल्लाना, सिसकना व दहाड़ मार कर रोना उनमें पुरुषों से अधिक था।

ब्रज-धरा ... ... पल हो रहा॥५७॥

शब्दार्थ—विमोहक=अचेत करने वाला।

भावार्थ—रात्रि के बढ़ने के साथ ही गोकुल वासियों की व्याकुलता भी बढ़ती जा रही थी। बढ़ते हुए अन्धकार के साथ ही अचेत करने वाला शोक भी बढ़ता जा रहा था क्योंकि कृष्ण के जाने का समय क्षण प्रति क्षण निकट आता जा रहा था।

अलंकार—सहोक्ति अलंकार है।

विशद-गोकुल ... ... वे हुईं॥५८॥

शब्दार्थ—विवर्द्धित=बढ़ी हुई।

भावार्थ—विशाल गोकुल ग्राम में शोक की जो अनियन्त्रित लहरें उठीं वे रात्रि में ही बहुत अधिक बढ़कर सम्पूर्ण व्रज भूमि में फैल गईं।

पृष्ठ २०—विलसती ... ... विभीषिका ॥५९॥

शब्दार्थ—प्रफुल्लता=प्रसन्नता। विभीषिका=भयंकरता।

भावार्थ—वहाँ अब प्रसन्नता विराजमान नहीं थी और न ही हास-परिहास व क्रीड़ा थी। इसके विपरीत ब्रजभूमि का भीषण दुःख देखकर हृदय की धड़कन बहुत बढ़ जाती थी।

तिमिर था ... ... ब्रज की धरा ॥६०॥

शब्दार्थ—महातम=गहन अन्धकार।

भावार्थ—यूं तो नित्य ही रात्रि को अन्धकार छा जाता था पर आज की रात्रि जो अन्धकार छाया था, उस शोक रूपी गहन अन्धकार से ब्रजभूमि को कभी मुक्ती नहीं मिली अर्थात् आज के पश्चात् कृष्ण फिर कभी ब्रज में नहीं आए।

अलंकार—तीसरी पंक्ति में रूपक है।

बहु-भयंकर ... खो चला ॥६१॥

शब्दार्थ—बहु-कला युत=सोलह कलाओं से युक्त।

भावार्थ—रोते हुए ब्रजवासियों के लिए यह रात्रि बहुत भीषण थी क्योंकि सोलह कलाओं से युक्त उनका चन्द्रमा (श्रीकृष्ण) गहन अन्धकार में विलीन हो गया था।

अलंकार—रूपक।

विशेष—कलायुक्त चन्द्रमा कभी नहीं छिपता जबकि कला युक्त कृष्ण अन्धकार में छुप गए हैं।

घहरती ... ... लोचनवारि थी ॥६२॥

शब्दार्थ—घहरती=उमड़ती। लोचनवारि=आँसू।

भावार्थ—आज रात्रि को अचानक ही दुःख के जो मेघ उमड़े थे वे बहुत समय तक ब्रजभूमि में आँसुओं के रूप में बरसते रहे।

अलंकार—रूपक।

ब्रज धरा ... ... प्रवाह भी ॥६३॥

शब्दार्थ—विरह-जात=विरह से उत्पन्न। कालिमा=कलंक।

भावार्थ--श्रीकृष्ण के विरह से उत्पन्न जो कलंक व्रजवासियों के हृदय में लगा उस कलंक को उनके नेत्रों का जल-प्रवाह कभी नहीं धो सका अर्थात् आँसू गिराने से उनके हृदय पर लगी ठेस ठीक नहीं हो सकी

अलंकार--रूपक ।

सुखद थे ... ... की निशा ॥६४॥

शब्दार्थ--समुज्वलता=स्वच्छता ।

भावार्थ—व्रजवासियों के जो बहुद सुखमय दिन थे वे पुनः उन्हें प्राप्त नहीं हुए । शोक की जो मलिनता छा गई थी वह प्रसन्नता की उज्ज-वलता में कभी भी परिवर्तित नहीं हो सकी । शोक-रात्रि कभी सुख-रात्रि नहीं बन सकी अर्थात् श्रीकृष्ण कभी लौटकर व्रज नहीं आए ।

अलंकार--रूपक ।

विशेष—आगे आने वाली कथा की ओर संकेत अन्तिम पद से होता है ।

तृतीय सर्ग

पृष्ठ २१—समय था ... ... शान्त थी ॥१॥

शब्दार्थ—निशीथ=रात्रि । प्रसुप्त=सोई हुई ।

भावार्थ- सुनसान रात्रि थी व सम्पूर्ण पृथ्वी पर अन्धकार का साम्राज्य था अर्थात् अन्धकार छाया हुआ था । जिस प्रकार प्रलय के समय पृथ्वी स्थिर व शान्त हो जाती है उसी प्रकार पृथ्वी इस समय भी शान्त थी । तात्पर्य यह है कि प्रलय आने वाली थी (कृष्ण का मथुरा जाना व्रजवासियों के लिए प्रलय से कम नहीं था) ।

अलंकार—उपमा ।

परम-धीर ... ... विलोक के ॥२॥

शब्दार्थ—सुप्रसुप्त=सोकर ।

भावार्थ- वायु का प्रवाह अत्यन्त मन्द था सम्भवतः उसे भी नींद आ रही थी अथवा प्रकृति को सोता देखकर उसने (वायु ने) भी अपनी गति मन्द कर दी थी जिससे कि प्रकृति की नींद उचट न जाए ।

अलंकार—उत्प्रेक्षा।

सकल-पादप ... पर हो रहा ॥३॥

शब्दार्थ—च्युत होना=वंचित होना, पेड़ पर से गिरना।

भावार्थ—सारे वृक्ष निस्तब्ध खड़े थे। उनका एक पत्ता तक नहीं हिलता था। यदि कोई पत्ता टूट कर गिरता भी था तो भी शब्द नहीं होता था।

विविध-शब्द ... ... लवलेश था ॥४॥

शब्दार्थ—ककुभ=दिशा। लवलेश=तनिक भी।

भावार्थ – अनेक प्रकार के स्वरों से गूंजने वाली वन-भूमि इस समय अत्यन्त शान्त थी। आकाश तथा दिशाओं में तनिक भी शब्द नहीं था।

अलंकार—अतिशयोक्ति। आकाश का स्वाभाविक गुण शब्द है पर आकाश तक में शब्द का न होना पूर्ण निस्तब्धता की ओर संकेत करता है और अतिशयोक्ति है।

सकल-तारक ... ... हो रही ॥५॥

शब्दार्थ—वितरते=फैलाते। कियत=कुछ-कुछ। अपसारित=दूर।

भावार्थ – सारे तारे भी चुपचाप ही पृथ्वी पर अपना प्रकाश फैला रहे थे। इस प्रकाश से गहन अन्धकार की भीषणता कुछ २ दूर हो रही थी।

पृष्ठ २२—अवश तुल्य... ... ...थी हुई ॥६॥

शब्दार्थ—अवश=बेबस।

भावार्थ—सम्पूर्ण प्राणी, मनुष्य व जीव-जन्तु, रात्रि की गोद में बेबस के समान चुपचाप पड़े थे। वृक्षों व लताओं आदि के मध्य निद्रा की प्रगाढ़ता दृष्टिगोचर होती थी अर्थात् सम्पूर्ण शान्ति छाई हुई थी।

अलंकार—उपमा।

रुक गया... ... ... सो रहा ॥७॥

शब्दार्थ—वसुमती=पृथ्वी।

भावार्थ—प्रकृति व प्राणि मात्र का सारा काम-काज रुक गया था। पृथ्वी पर अपार शान्ति थी। यह विश्व चलायमान है पर लगता था मानो

विश्व ने अपना यह गुण छोड़कर स्थिरता धारण की हो और वह सो रहा हो क्योंकि पूर्ण स्थिरता, अचलता छाई हुई थी।

अलंकार—उत्प्रेक्षा अलंकार ।

सतत ... ... भी न था ॥८॥

शब्दार्थ—विजनता=निर्जनता । विनिद्रित=जागकर ।

भावार्थ—घरों में सदैव विद्यमान रहने वाली हर्ष ध्वनियाँ अब निर्जनता में परिवर्तित हो गई थीं। इस निर्जनता में एक झींगुर भी कभी जागकर अपनी झंकार तक नहीं करता था।

अलंकार—अतिशयोक्ति अलकार ।

बदन से ... ... गृह-दीप था ॥९॥

शब्दार्थ—मिष=बहाने । शयन-सूचना=सोने की सूचना देने वाली ।

भावार्थ—घर का दीपक अत्यन्त नींद से भरकर झिलमिलाती तेजहीन लौ लिए धुआं छोड़ रहा था जो दीपक के सोता हुआ होने का प्रमाण था ।

अलंकार—अपन्हुति व उपमा ।

भनक थो ... ... जनु व्योम था ॥१०॥

शब्दार्थ—निमज्जित=डूबी हुई । जनु=मानो ।

भावार्थ—झंकार रात्रि के मध्य में छिप गई थी। शब्द अन्धकार में डूब गया था। प्रत्येक स्थान पर पूर्ण निस्तब्धता छाई हुई थी मानो आकाश ने अपना गुण 'शब्द करना' त्याग दिया था।

अलंकार—उत्प्रेक्षा ।

इस तमोमय ... ... विराम प्रदायिनी ॥११॥

शब्दार्थ—निशीथ=अर्द्ध रात्रि। क्षिति=पृथ्वी। कलुषिता=दुःखिता।

भावार्थ—इस अन्धकार पूर्ण अर्द्ध रात्रि की स्वाभाविक शान्ति सम्पूर्ण पृथ्वी पर फैली हुई थी। यह शान्ति व्रज के लिए बिलकुल भी विश्राम प्रदान करने वाली नहीं थी। (सहज शान्ति आरामदायक होती है परन्तु व्रज के लिए नही।)

पृष्ठ २३—दलन थी ... ... शब्द से ॥१२॥

शब्दार्थ—समागता=आई हुई। प्रतिघातिता=आघात पहुँचाने वाली। विबोधक=जगाने वाला।

भावार्थ—कहीं दूर से आने वाली रोने की ध्वनि उस शान्ति को कभी-कभी भंग कर देती थी। यह रोने की ध्वनि, जो कठोरता के कारण सोते हुए मनुष्य को जगा देती थी, शान्ति को आघात पहुँचाती थी।

पृष्ठ २३—कल प्रयाण··· ··· विनाश था ।१३॥

शब्दार्थ—श्रमा-सना=थकावट-युक्त। प्रायश:=बहुधा।

भावार्थ—कई स्थानों पर प्रात: काल मथुरा जाने के लिए जो व्यक्ति अनेक वस्तुएँ इधर-उधर ढो रहे थे, उनकी थकावट का शब्द प्राय: रात्रि की शान्ति को भंग कर रहा था।

प्रगटती··· ··· ··· समीप थे ॥१४॥

शब्दार्थ—बिकट-दन्त=विकराल दाँत मूल=जड़।

भावार्थ—अनेक भयंकर मूर्तियाँ प्रकट हो रही थीं। भय डरावना नाच कर रहा था अर्थात् सम्पूर्ण भय व्याप्त था। विकराल दांतों वाले भीषण भूत-प्रेत वृक्षों के निकट घूम रहे थे।

विशेष—भूतों व उनकी डरावनी शक्ल के वर्णन से रात्रि की भयंकरता और बढ़ जाती है।

वदन··· ··· ··· त्रासकरी-शिखा ॥१५॥

शब्दार्थ - व्यादन=खोले हुए। त्रासकरी=भयावह।

भावार्थ—प्रेतिनी अपना सारा मुख फाड़कर अत्यन्त भयानक वातावरण उत्पन्न कर रही थी। उसके मुख से अग्नि की अत्यन्त भयावह लौ निरन्तर निकल रही थी।

तिमिर-लीन··· ··· ··· ···चित्त को ॥१६॥

शब्दार्थ—पवि-चित्त=कठोर हृदय।

भावार्थ—अन्धकार के शिकार वृक्ष बड़े-बड़े राक्षस जैसे प्रतीत हो रहे थे। उन विशाल वृक्षों को, जो अन्धकार के कारण भ्रम वश विकराल राक्षस जान पड़ते थे, देखकर कठोर से कठोर हृदय भी कांप उठता था।

अति-सशंकित नृप कंस के ।।१७।

शब्दार्थ—सभीत=भयभीत । निशाचर=राक्षस ।

भावार्थ—उन राक्षस दिखाई देने वाले वृक्षों को देखकर सन्देह और भय से भरपूर हृदय यह अनुमान लगाने लगता कि ये वृक्ष नहीं, बल्कि राजा कंस के भेजे हुए राक्षस खड़े हैं जो ये ब्रज को जड़ सहित नष्ट कर देंगे ।

पृष्ट २४ अति भयानक ... अवलोक थे ।।१८।।

शब्दार्थ—ससान=श्मशान । शव-राशि=शव-समूह ।

भावार्थ—श्मशान भूमि में अत्यन्त भयंकर शवों की ढेरी थी । यह इतना अधिक भयंकर दृष्टि गोचर होता था कि नेत्रों से इसे देख पाना सम्भव नहीं था ।

पृष्ट २४—विकट-दन्त ... ... वन - भैरवी ।।१९।।

शब्दार्थ भैरव-हास=भयंकर अट्टहास । भैरवी=काली ।

भावार्थ मुर्दे की खोपड़ी विकराल दाँत दिखाकर अत्यन्त भयंकर अट्टहास कर रही थी । हड्डियों के विशाल समूह की भयंकरता काली के समान डरावनी थी ।

इस भयंकर ... ...निकेत में ।।२०।।

शब्दार्थ—नन्द-निकेत=नन्द के घर । कातरता=दीनता ।

भावार्थ—इस अत्यन्त भयावह अर्भ रात्रि में पूर्णशान्त नन्द के घर में दीनता पूर्ण व्याकुलता बढ़ती जा रही थी ।

सित हुए अपने... ... ...ब्रजेश थे ।।२१।।

शब्दार्थ—सित=श्वेत । लोभ=दाढ़ी ।

भावार्थ—नन्द अपने मुख के श्वेत बालों को (अपने बुढ़ापे के चिन्हों को) अपने हाथ में पकड़े थे अर्थात् चिन्ता में डूबे थे । वे एक भयकर विपत्ति में पड़े हुए, गुप चुप सिसक रहे थे ।

हृदय-निर्गत ... ... उसास थी ।।२२।।

शब्दार्थ—निर्गत=निकले हुए । उसास=श्वास ।

शब्दार्थ—शतधा=सैंकड़ों खंड ।

भावार्थ—यशोदा रो तो रही थीं पर, इस डर से कि कृष्ण जाग न जाएँ वे शब्द नहीं कर रही थीं। इसलिए कष्ट से उनेके हृदय के सैकड़ों खंड हो गए थे ।

महरि का ... ... हो रही ॥३४॥

शब्दार्थ—महरि=यशोदा । परिपूरित=पूर्ण भरी हुई । लुंठित=मध्य पड़ना ।

भावार्थ—यशोदा का यह कष्ट दृष्टिगोचर करके घर का दीपक भी दुःख से सिर धुन रहा था (दीपक की लौ तेजी से हिल रही थी)। घर में पूर्णरूपेण भरा हुआ प्रकाश भी इसी कारण मध्यम पड़ रहा था ।

अलंकार—हेतूत्प्रेक्षा ।

पर बिना ... ... पीड़ित वे रहीं ॥३५॥

शब्दार्थ—प्रबोधक=समझाने-बुझाने वाला ।

भावार्थ—इस समय इस शान्त कमरे में दीपक की ज्योति के अलावा और कोई अन्य नहीं था जो यशोदा को समझा-बुझा सकता (धैर्य दिला सकता)। अतः वे और भी ज्यादा दुःखी हो रही थीं ।

पृष्ठ २७—वरन कम्पित ... ... लगती उन्हें ॥३६॥

शब्दार्थ—शीश-प्रदीप=दीपक की लौ ।

भावार्थ—(दीपक उन्हें धैर्य तो क्या बंधाता इसके विपरीत) दीपक की काँपती लौ उन्हें और भी अधिक व्याकुल करती थी। दीपक की ज्योति अत्यन्त प्रकाशवान व सुन्दर होने पर भी उन्हें अत्यन्त धूमिल प्रतीत हो रही थी ।

जब कभी ... ... चुपचाप थीं ॥३७॥

भावार्थ—जब भी उनके दुःख की तीव्रता कुछ कम होती (तथा वह सचेत होतीं) तो वे पृथ्वी पर साष्टांग लेट कर, हाथ जोड़ कर व सिर झुका कर मन ही मन भगवान से इस प्रकार प्रार्थना करने लगतीं—

सकल-मंगल ... ... अनुकूलता ॥३८॥

शब्दार्थ—कुशलतालय=कुशलताओं के निधान अर्थात् रक्षक। संकुल=आच्छादित। वांछित=आवश्यक, इच्छित।

भावार्थ—हे कुलदेवता ! तुम सम्पूर्ण शुभ कार्यों के प्रवर्त्तक हो, दयानिधान हो, रक्षक हो। इस समय परिवार विपत्तियों से आच्छादित है अतः आपकी कृपा की बहुत आवश्यकता है।

परम-कोमल ... ... है उठा ॥३९॥

शब्दार्थ—कलपते=रुदन करते। प्रचंड समीरण=तूफान, ववडंर।

भावार्थ—हे प्रभो ! इस रुदन करते परिवार का केवल मात्र सहारा यह अत्यन्त कोमल बालक कृष्ण है। हे भगवान् ! उस एक मात्र सहारे के विरुद्ध भी यह भयंकर ववंडर उठ खड़ा हुआ है।

यदि हुई ... ... अवलम्ब है ॥४०॥

शब्दार्थ—कंज, सरोरुह=कमल।

भावार्थ—हे भगवन् ! यदि आपके चरण-कमलों की अर्थात् आपकी कृपा नहीं हुई तो यह विपत्ति नहीं टल सकती। मैं कृष्ण की सुरक्षा के प्रति सदा शंकित रहती हूं और मुझे सदा आपके चरण-कमलों का ही सहारा है।

कुल विवर्द्धन ... ... काल भी ॥४१॥

शब्दार्थ—विवर्द्धन=वृद्धि। अपेक्षित=आवश्यक। भवदीय=आपकी।

भावार्थ—हे प्रभो ! आपकी दृष्टि सदा इस कुल की वृद्धि तथा पालन की ओर रही है अर्थात् आपने सदा इस कुल की वृद्धि की है तथा पालन किया है। इस समय भी इस मंगलकारिणी दृष्टि की आवश्यकता है।

पृष्ठ २८—समझ के ... ... सकती नहीं ॥४२॥

शब्दार्थ सेविका=दासी।

भावार्थ—मैंने स्वयं को आपके चरण-कमलों की दासी माना है तथा अपनी समझ में कोई अपराध नहीं किया है। परन्तु मैं भी मनुष्य हूं (और मनुष्य गलती करता ही है) इसलिए मैंने अवश्य ही कोई अपराध किया होगा।

इसलिए ... ... क्षम्य है ॥४३॥

शब्दार्थ—विधि=प्रकार। क्षम्य=क्षमायोग्य।

भावार्थ—अतः हे कुल रक्षक ! यदि भूल से मैंने आपका कोई अपराध कर भी दिया हो तो भी मेरी इस विपत्ति के समय वह अपराध प्रत्येक प्रकार से क्षमायोग्य है।

(यशोदा का विचार है कि उसने जो अपराध जाने या अनजाने में कर दिया है उसका दंड, कृष्ण को मथुरा भेजकर, कुलपति दे रहे हैं)।

प्रथम तो ... ... अपराध हैं ॥४४॥

शब्दार्थ—अबोध=वे समझ। सदाशय=उच्च विचारों वाले।

भावार्थ—(मैं आपसे क्षमा करने के लिए प्रार्थना कर रही हूं, उसके ये कारण हैं)—पहली बात तो यह है कि वे समझ के अपराधों की सदा उपेक्षा की जाती है तथा दूसरी यह कि आप जैसे उदार के लिए तो सभी छोटे-बड़े अपराध तुच्छ हैं।

सरलतामय ... ... पात्र है ॥४५॥

शब्दार्थ—निरीह=भोला।

भावार्थ—हे कृपानिधान ! कृष्ण तो सीधे, निरपराधी व अत्यन्त भोले हैं अतः इस समय वे तुम्हारी दया के पात्र हैं अर्थात् उन पर कृपा करना आवश्यक है।

प्रमुदित ... ... स्वामी हमारे ॥४६॥

शब्दार्थ—प्रमुदित=आनन्दित।

भावार्थ—जिस दिन मेरे पति (नन्द) मथुरा-वासियों को आनन्दित करके, स्वयं सकुशल रहकर तथा सम्पूर्ण विपत्तियों से अपने दोनों प्रिय पुत्रों को बचाकर गोकुल लौटेंगे—

प्रभु दिवस ... ... सत्कृपा से ॥४७॥

शब्दार्थ—सत्त्विकी=पवित्र। शुचि=पवित्र। पादाब्ज=चरण-कमल। उपकृत=कृतज्ञ।

भावार्थ—उस दिन, हे भगवन् आपकी इस कृपा से कृतज्ञ होकर, मैं पवित्र पद्धति से, अत्यन्त पावन दिव्य तैयारी सहित तथा विधिपूर्वक आप के सुन्दर चरण-कमलों की वन्दना करूँगी।

पृष्ठ २९ यह प्रलोभन ... ... अवतारणा ॥४८॥

शब्दार्थ – अकोर = रिश्वत । अवतारणा = अभिव्यक्ति ।

भावार्थ—हे दयानिधान ! मैं न तो आपको लालच दे रही हूं और न रिश्वत । इसके विपरीत ये तो मेरे दुःखी हृदय को अत्यन्त शान्ति प्रदान करने वाली आत्म-अभिव्यक्ति है ।

कलुष ... ... कुछ जानता ॥४९॥

शब्दार्थ—कलुष=पाप । निकंदिनी=नाश करने वाली । भव-वल्लभे=शंकरप्रिया अर्थात् पार्वती, विश्व-स्वामिनी ।

भावार्थ—हे शिव प्रिया पार्वती जी आप पापों को नष्ट करने वाली तथा अत्याचारियों का नाश करने वाली हो, इस विश्व की जन्मदात्री हो अतः माता हो । माता के हृदय की सम्पूर्ण पीड़ा को माता का हृदय ही जान सकता है । (क्योंकि तुम माता हो इसलिए मेरे दुःख को समझ सकती हो) ।

अवनि में ... ... करती नहीं ॥५०॥

शब्दार्थ—ललना=पुत्र । अनपत्यता=निस्सन्तानता ।

भावार्थ—पृथ्वी पर (स्त्रियाँ) पुत्र को जन्म देकर अपने जन्म (जीवन) की निस्सन्तानता को दूर करती हैं । वे अपने पुत्र के स्वाभाविक जीवन को कष्टों में नहीं पड़ने देतीं ।

उपजती ... ... करती वृथा ॥५१॥

शब्दार्थ—सतत=निरन्तर । वृथा=व्यर्थ ।

भावार्थ—परन्तु संतान की सुरक्षा के निरन्तर डर से हृदय में जो चिंता रूपी रोग लग जाता है उससे जीवन केवल कष्टमय ही नहीं हो जाता बल्कि व्यर्थ हो जाता है ।

बहुत चिन्तित ... ... हो रहा ॥५२॥

भावार्थ—पहले मैं आपके चरणों की दासी, एक सन्तान-प्राप्ति के लिए बहुत चिन्तातुर रहती थी और अब सन्तान प्राप्ति के पश्चात् सन्तान पर पड़ने वाले कष्टों से मेरा हृदय टुकड़े-टुकड़े हो रहा है ।

जननि जो ... ... पुत्र को ॥५३॥

शब्दार्थ—जरठता=वृद्धावस्था ।

भावार्थ—हे माता ! आपके हृदय में अपने दास (राजा नन्द) की वृद्धावस्था देख कर दया उत्पन्न हुई और आपकी कृपा से मैं पुत्र पाकर भाग्यशालिनी बनी ।

पृष्ठ ३०—किसलिए ... ... की घटा ।।५४।।

शब्दार्थ—निपीड़ित=दुःखी ।

भावार्थ—हे माता ! अब किस कारण से आपकी यह दासी प्रति-दिन दुःखी हो रही है और किस कारण बालक कृष्ण पर कष्टों के ब दल छा रहे हैं ।

'जनविनाश' ... ... बाहु में ।।५५।।

शब्दार्थ—जन-विनाश=नर-हत्या ।

भावार्थ—'निरुद्देश्य नर-हत्या' कंस को स्वभाव से ही अच्छी लगती है । हे जगत की रक्षक माँ, क्या तुम्हारी भुजाओं में अब उसको नष्ट करने की शक्ति नहीं है ?

स्वसुत ... ... 'जगदम्बिका' ।।५६।।

शब्दार्थ—जगदम्बिका=जगत की माता ।

भावार्थ – अपने पुत्र की रक्षा तथा दूसरे के पुत्र को नष्ट करने की यह कठोर प्रार्थना सम्भवतः जगजननी (सबकी माता) कैसे स्वीकार कर सकती हैं ।

पर निवेदन ... ... न्याय की ।।५७।।

शब्दार्थ—ज्ञानदे=हे बुद्धि प्रदान करने वाली । अवमानना=अवहेलना।

भावार्थ—हे बुद्धि प्रदान करने वाली, मेरी केवल यह प्रार्थना है कि निर्बल की शक्ति तो केवल न्याय माँगना है । हे विधि-विधानों को मानने वाली माता, क्या शास्त्रोचित न्याय की अवहेलना करना ठीक है ?

परम क्रूर ... . की प्रजा ।।५८।।

शब्दार्थ—महीपति=सम्राट ।

भावार्थ—अत्यन्त निर्दयी सम्राट कंस की कुटिल चालें अब बहुत दुःखदायी हो गई हैं। उसके छल-कपट से ब्रजवासी अब प्रतिदिन ही बहुत सताए जाते हैं।

सरलतामय ... ... प्राण भी ॥५६॥

शब्दार्थ – पवि=वज्र। विनिर्मित=बना हुआ।

भावार्थ—हे माता! इस भोले बालक को कष्ट पहुँचाने के लिए जो चालाकी खेली गई है उसे वज्र से बना मनुष्य भी (अत्यन्त कठोर हृदय वाला मनुष्य भी) नहीं सह सकता।

पृष्ठ ३१—कुवलया ... ... है हुआ ॥६०॥

शब्दार्थ—कुवलया=कंस का हाथी। दनुजात=राक्षस।

भावार्थ—कंस का हाथी कुवलापीड़ इतना शक्तिशाली है कि राक्षस भी उससे युद्ध नहीं कर सकते। वह हाथी अत्यन्त कोमल बालक कृष्ण से युद्ध करने के लिए तैयार हुआ है।

विकट ... ... के लिए ॥६१॥

शब्दार्थ—कज्जल-मेरु=काजल का पर्वत। सुर-गजेन्द्र=इन्द्र का हाथी–ऐरावत। द्विरद=हाथी। पयो-मुख=दुध-मुंहा।

भावार्थ—देखने में काजल के पर्वत के समान भयंकर तथा इन्द्र के हाथी ऐरावत जैसा शक्तिशाली यह कुवलया हाथी है। हे माता! क्या इस दुध-मुंहे बालक कृष्ण से लड़ाने के लिए यह हाथी उचित है?

अलंकार—पहली व दूसरी पंक्ति में उपमा अलंकार है।

व्यथित ... ... शैल का ॥६२॥

शब्दार्थ—मृदु-कुरंगम शावक=कोमल हिरण का बालक।

भावार्थ—हे माता! मैं दुःखी होकर कैसे व्याकुल न होऊँ। हाय! मुझे कैसे धैर्य हो। क्या कभी किसी कोमल हिरण के बालक ने हिमालय की चट्टान को गिराया है? अर्थात् क्या बालक कृष्ण, कुवलया हाथीं से लड़ सकता है।

विदित है ... ... मल्ल भी ॥६३॥

शब्दार्थ — शल, तोशल=राक्षसों के नाम । क्रूर=दुष्ट । मुष्टिक=नाम ।

भावार्थ—दुष्ट शल व तोशल राक्षसों के शरीर की कठोरता, विकरालता व शक्ति को सभी जानते हैं । बलवान मुष्टिक नामक पहलवान घूंसेंबाजी में अत्तन्त चतुर है । वह मुष्टि प्रहार में इतना शक्तिशाली था कि उसका नाम ही मुष्टिक पड़ गया था) और इन सभी से कृष्ण को युद्ध करना पड़ेगा ।

पृथुल ... ... कुमार से ।।६४।।

शब्दार्थ —पृथुल=विशाल । अपर=अन्य ।

भावार्थ (इनके अतिरिक्त) कंस के अन्य जितने भी विशाल व भयंकर शरीर वाले योद्धा हैं वे सभी किशोरावस्था वाले कृष्ण से युद्ध करने के लिए तैयार हैं ।

विपुल ... ... हैं हुये ।।६५।।

शब्दार्थ – विवुध-वृन्द=देव-समूह । विलोड़क=नाशक । समुद्यत= तैयार ।

भावार्थ—और भी अनेक वीर शस्त्र-सज्जित हैं । स्वयं राजा कंस देव-समूहों को नष्ट करने की शक्ति रखने वाले अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर इस बालक के विरुद्ध तैयार हैं ।

पृष्ठ ३२—जिस नराधिप ... ... अविधेय हैं ।।६६।।

शब्दार्थ—वशवर्तिनी=आज्ञाकारिणी । अविधेय=अन्याय्य ।

भावार्थ—जिस राजा की प्रजा सदा आज्ञाकारिणी हो अर्थात् राजा कंस की प्रजा आज्ञा मानने वाली है । (प्रजा में ब्रजवासी व कृष्ण भी आ जाते हैं ।) हे माता ! उस राजा का कमर कस के कुटिल चालें चलना अन्याय्य है ।

जन प्रपीड़ित ... ... कौन है ? ।।६७।।

शब्दार्थ—गहता=ग्रहण करता । नरनाथ=राजा ।

भावार्थ—दूसरों से कष्ट पाकर मनुष्य राजा की शरण ग्रहण करता है परन्तु यदि स्वयं राजा ही कष्ट देने लगे तो फिर संसार में कौन रक्षक है।

गगन में ... ... नृप-कंस से ॥६८॥

शब्दार्थ--पलायित--भाग कर।

भावार्थ—न तो मैं आकाश में उड़ कर जा सकती हूं और न पाताल में छिप जाना संभव है। पृथ्वी पर कहीं भी भाग कर चले जाने से राजा कंस से नहीं बचा जा सकता अर्थात् अब कृष्ण को बचाना संभव नहीं जान पड़ता।

पृष्ठ ३२—विवशता··· ··· ··· ··है चला ॥६९॥

शब्दार्थ—हिंस्रक=खूँखार।

भावार्थ—हे माता ! मैं अपनी बेबसी किसे बताऊँ अर्थात् अपना दुखड़ा किसके आगे रोऊँ। मैं बहुत दु:खी क्यों न होऊँ जब कि कंस के दरबारी रूपी खूँखार जंगली पशुओं के मध्य कृष्ण रूपी मृगछौना जारहा है।

अलंकार—उपमा।

सकल भाँति··· ··· ··· ···शून्य है ॥७०॥

शब्दार्थ—जगतीतल=पृथ्वी।

भावार्थ—हे अम्बा माता ! अब तो प्रत्येक रूप में केवल आपके चरण-कमलों का ही सहारा है यदि मुझे यहाँ भी शरण न मिली तो मेरी दुनिया उजाड़ हो जायेगी।

विधि अहो ··· ··· ··· कष्टदा ॥७१॥

शब्दार्थ—भवदीय=आपकी। मति=बुद्धि। अगोचरता=समझ से परे। भूति=बहुत।

भावार्थ—हे माता ! आपके नियम-विधान अनेकरूपेण तथा मनुष्य की समझ से दूर हैं। आपकी सृष्टि अत्यन्त तर्कसम्मत और श्रेष्ठ है पर कहीं-कहीं वह (आपकी सृष्टि) अत्यन्त कष्टदायक है (जैसे कंस का होना)।

पृष्ठ ३३—जगत में··· ··· ··· ···है जहाँ ॥७२॥

शब्दार्थ—बिलटता=लुटता। वसन=वस्त्र।

भावार्थ—आपकी सृष्टि विचित्र है कही तो एक पुत्र न होने के कारण ही देवताओं द्वारा इच्छित (अर्थात् अत्यन्त समृद्ध) राज्य लुट जाता है और कही इतनी संतानें होती हैं कि वस्त्र और भोजन मिलना भी कठिन है।

कलप के ... ... जातु को ॥७३॥

शब्दार्थ— कलप के=रो-झींकके। वसुयाम=आठ पहर दिन-रात।

भावार्थ—कुछ लोग तो रात-दिन रोने-झींकने के पश्चात् भी पुत्र-प्राप्ति में असमर्थ रहते हैं और कुछ मनुष्य अधिक संतानों के कारण दुःखी है।

सुअन का ... ... मलीनता ॥७४॥

शब्दार्थ—वदनांवुज=मुख-कमल। मलीनता=उदासी।

भावार्थ— कितने ही लोग तो सदैव ही अपनी सतानों का मुख-कमल देखकर प्रसन्न होते हैं और कुछ लोग अपनी संतानों की उदासी देखकर हर समय रोते रहते हैं।

सुखित हैं ... ... आपदा ॥७५॥

शब्दार्थ—निरापद=दुःख और विपत्ति रहित।

भावार्थ—अनेक माताएँ अपनी संतानों को दुःख व विपत्ति से रहित देखकर सुखी रहती हैं जब कि अनेक माताएँ मेरे समान ही अपनी संतानों पर प्रतिदिन आने वाली आपत्तियों को देखकर कष्ट पाती हैं।

प्रभु, कभी ... ... सेविका ॥७६॥

शब्दार्थ—तदपि=तव भी।

भावार्थ—हे भगवन् ! मैं यह मानती हूँ कि आपके नियमों में कभी बिल्कुल भी परिवर्तन नहीं हो सकता इतके वावजूद भी आपकी यह दासी स्वामी से सादर प्रार्थना करती है।

यदि कभी ... ... न अन्य है ॥७७॥

शब्दार्थ—पतित हो सकती=पड़ सकती।

भावार्थ—हे प्रभु ! यदि आपकी दयालु दृष्टि पृथ्वी पर पड़ सके तो भगवन्, इस समय उस कृपा पर मेरा ही अधिकार है क्योंकि मेरे समान दुर्भाग्यशालिनी यहाँ अन्य कोई नहीं है।

पृष्ठ ३४—प्रकृति ... ... पद - अर्चना ॥७८॥

शब्दार्थ—सांग=सम्पूर्ण ।

भावार्थ—हे प्रभु ! आप प्रकृति के प्राणाधार हैं, जगत के पिता हैं, सब लोकों के स्वामी हैं, प्रभुता के भंडार हैं । जिस स्थान पर आपके चरणों की पूजा नहीं होती है वहां सारा कार्य सम्पूर्ण नहीं होता ।

यदि च ... ... के बिना ॥७९॥

शब्दार्थ—यदि च=यद्यपि । प्रपंच=झँझट ।

भावार्थ—हे भगवन् ! यद्यपि आप सदा विश्व की सम्पूर्ण झँझटों से अलग रहतीं हैं तथापि मनुष्य को आपके चरण-कमलों के अलावा और सहारा नहीं है ।

विविध ... ... आप हैं ॥८०॥

शब्दार्थ – निर्जर=देवता । यजन=यज्ञ । यजित=जिसके लिए यज्ञ किया गया हो ।

भावार्थ—हे भगवन् ! विभिन्न देवी-देवताओं में आपकी कला ही विद्यमान है । यद्यपि मनुष्य इन देवी-देवताओं की पूजा के लिए यज्ञादि करते हैं तथापि वास्तव में इन सब से आपकी ही पूजा होती है ।

विशेष - यहाँ 'सर्ववाद' का स्पष्ट प्रभाव हैं ।

तदपि जो··· ... ... ···जगतीपते ॥८१॥

शब्दार्थ—सुर-पादप=देवताओं का वृक्ष, कल्प वृक्ष ।

भावार्थ—हे जगत्पिता ! जो शान्ति किसी को कल्प वृक्ष के नीचे मिल सकती है वह साधारण फल-फूल आदि से नहीं मिल सकती अर्थात् जो शान्ति आपके चरणों में प्राप्त हो सकती है वह इन देवी-देवताओं की सेवा से नहीं मिल सकती ।

झलकती ... ... है प्रभो ॥८२॥

शब्दार्थ—तरणि=सूर्य । कल-ज्योति=सुन्दर-प्रकाश ।

भावार्थ—हे प्रभो आपकी पावन तथा दयालु कान्ति [सभी छोटे बड़े पदार्थों जैसे] सूर्य तथा तिनके में समान रूप से दृष्टिगोचर होती है ।

आपके इस सुन्दर प्रकाश की एक किरण मात्र ही मेरे अन्धकार रूपी कष्टों को दूर करने में समर्थ है।

अवनि में ... ... समर्थ है ।।८३।।

शब्दार्थ—वर=श्रेष्ठ शमन=शान्त । ताप=दुःख ।

भावार्थ—हे प्रभो ! आपके प्रेम का सागर तो पृथ्वी, जल तथा श्रेष्ठ आकाश में सभी जगह लहरा रहा है। इस श्रेष्ठ प्रेम-सागर की केवल एक बूंद का कण-मात्र मेरे सारे कष्ट हरने में सक्षम है।

अलंकार—रूपक ।

पृष्ठ ३५—अधिक और ... ... मम-प्राण की ।।८४।।

शब्दार्थ—किंकरी=दासी ।

भावार्थ—हे भगवन् ! यह दासी और अधिक प्रार्थना नहीं कर सकती। हे दया सागर ! मेरे हृदय, मन तथा प्राण की अवस्था आपसे छिपी नहीं है।

विनय यों ... ... अवलोकती ।।८५।।

शब्दार्थ—व्रजपांगना=नन्द की पत्नी, यशोदा ।

भावार्थ - इस प्रकार यशोदा भगवान से प्रार्थना कर रही थीं और उनके नेत्रों से अश्रुधारा बह रही थी। व्याकुलता के कारण वे बार-बार वस्त्र हटा कर पुत्र का मुख देख रही थीं।

ज्यों-ज्यों थीं ... ... हो रही ।।८६।।

शब्दार्थ—दुर्दान्त=अत्यन्त कष्ट कर, असहनीय ।

भावार्थ—जैसे ही जैसे आकाश की ओर देखती हुई यशोदा रात बिता रही थीं, वैसे ही वैसे उनका अपार कष्ट असहनीय होता जा रहा था। उनके नेत्रों से निरन्तर अश्रुधारा बह रही थी पर उन्हें शान्ति नहीं मिलती थी। शक्तिहीन यशोदा बार-बार अचेत हो जाती थीं।

विकलता ... ... बहु-वारि था ।।८७।।

शब्दार्थ—मिष=बहाने । अनुताप=दुःख प्रकट ।

भावार्थ—यशोदा की व्याकुलता देखकर रात्रि भी दुःख प्रकट कर रही थी। रात्रि के नेत्रों से ओस के बहाने चुपचाप ही बहुत जल बरस रहा था।

अलंकार—मानवीकरण तथा अपन्हुति अलंकार।

विपुल-नीर ... ... व्रज की धरा ॥८८॥

शब्दार्थ—कलिन्द-कुमारि-प्रवाह=यमुना का प्रवाह।

भावार्थ—यमुना के प्रवाह के बहाने व्रजभूमि अत्यन्त दुःखी होकर चुपचाप ही अपने नेत्रों से बहुत पानी बहाकर रो रही थी।

अलंकार—मानवीकरण तथा छेकानुप्रास अलंकार।

युग बने ... ... विभावरी ॥८९॥

शब्दार्थ—धृति=धैर्य। विभावरी=रात्रि।

भावार्थ—सब की यह इच्छा थी कि रात्रि युग बन जाए और कभी भी नहीं बीत सके। रात्रि का एक-एक क्षण बीतना अप्रिय लग रहा था। माता का हृदय धैर्य पाने के लिए व्याकुल हो रहा था और रात्रि अत्यन्त कष्टमय बन गई थी।

———

चतुर्थ सर्ग

पृष्ठ ३६—विशद-गोकुल ... सौरभवान थी ॥१-३॥

शब्दार्थ—उपेन्द्र=विष्णु। वृषभानु=राधा के पिता। सुमेर=माला का सबसे बड़ा दाना। आहत=सम्माननीय। सुयश-सौरभ=कीर्ति रूपी सुगन्ध।

भावार्थ—विशाल गोकुल गाँव के निकट ही बसे एक सुन्दर ग्राम में बहुत से लोग रहते थे। उस गाँव में विष्णु के समान समृद्ध राजा वृषभानु अपने परिवार सहित रहते थे।

वे गोपों में अत्यन्त सम्माननीय थे। राजा नन्द उनका अत्यधिक सम्मान करते थे। व्रज-भूमि इनके ऐश्वर्य के कारण पृथ्वी पर अपने को गौरवान्वित अनुभव कर रही थी।

उनकी एक पुत्री अत्यन्त तेजस्वी थी। वह राधा स्त्री-समूह में श्रेष्ठ थी। उसकी कीर्ति रूपी सुगन्ध से ब्रज-भूमि सदा ही बहुत प्रसिद्धि पा रही थी।

अलंकार—तीसरी पंक्ति में उपमा, सुयश-सौरभ में रूपक है।

रूपोद्यान ... ... की मूर्ति थी ।।४।।

शब्दार्थ—रूपोद्यान=सौन्दर्य रूपी बाग। प्रफुल्ल-प्राय=अधखिली। राकेन्दु=पूर्णिमा का चाँद। विम्बानना=प्रतिबिम्ब। तन्वंगी=कृशाँगी। कल-हासिनी=सुन्दर मुस्कान वाली। लावण्य-लीला-मयी=सुन्दरता व आकर्षण वाली। मृगदृगी=हरिन जैसे नेत्र वाली।

भावार्थ—राधा सौन्दर्य-रूपी बाग की अध-खिली कली के समान थीं। वह पूर्णिमा के चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब सी, इकहरे बदन वाली, सुन्दर मुसकान वाली, मधुर, क्रीड़ाओं और कलाओं की प्रतिमा थी। राधा की शोभा सागर की बहुमूल्य मणि के समान सुन्दर व आर्कषक थी। राजा जी मधुर बोलने वाली तथा हरिणी के नेत्रों की मधुरता की प्रतिमा सी थीं।।४।

अलंकार—उपमा तथा रूपक अलंकार। प्रथम, द्वितीय और तृतीय पंक्ति में छेकानुप्रास है।

विशेष—राधा वय:सन्धि की नायिका हैं।

फूले कंज ... ... मानसोन्मादिनी ।।५।।

शब्दार्थ—मत्तता-कारिणी=मस्त करने वाली। दृष्टि-उन्मेषिनी=नेत्रों को अपलक करने वाली। मुग्धता-मूर्त्ति=वशीभूत करने वाली। कुंचित=घुंघराली। मानसोन्मदिनी=मन-मोहित करने वाली।

भावार्थ—राधा के नेत्रों की सुन्दरता खिले हुए पुष्पों के समान मस्त करने वाली थी। उसके शरीर की आभा सोने की सुन्दरता के समान नेत्रों को अपलक करने वाली थी। राधा की मुस्कान का माधुर्य मोहित करने वाला था। उसके केश मन को झकझोरने वाले काले, घुंघराले व लम्बे थे।

अलंकार—पहली पंक्ति में उपमा, दूसरी में छेकानुप्रास व तीसरी में उपमा और छेकानुप्रास है।

पृष्ठ ३७—नाना-भाव ... ... आन्दोलिता ॥६॥

शब्दार्थ— आपूरिता=परिपूर्ण। लोल=चंचल। वादित्रादि=वाद्य-यन्त्र। समोद=आनन्द पूर्वक। परा=निपुण।

भावार्थ—राधा हाव-भाव-विभाव आदि शारीरिक चेष्टाओं में चतुर, आनन्द से परिपूर्ण, नेत्रों से लीलामय चंचल कटाक्ष करने में पारंगत, भौंह चलाने में कुशल, वाद्य-यन्त्रों को आनन्दपूर्वक बजाने वाली, आभूषणों से सुसज्जित, सुन्दर मुख वाली, विशाल-नेत्रों वाली तथा आनन्द से भरपूर थी।

लाली थी ... ... कामांगना मोहिनी ॥७॥

शब्दार्थ—भूपृष्ठ=पृथ्वी। विद्रुम=मूँगा। अकान्त=आभाहीन। कामांगना=रति।

भावार्थ—राधा के चरण-कमलों की लालिमा पृथ्वी को सुशोभित करती थी। उसके होंठों की लालिमा बिम्बाफल और मूँगे को आभाहीन करती थी अर्थात् मूंगे व बिम्बाफल से भी अधिक लाल उसके होंठ थे। प्रसन्नता से खिले मुख-कमल का गौरव मानो सुन्दरता का आधार था। राधा की सुन्दर आभा काम की पत्नी रति को भी मोहित करने वाली थी।

अलंकार—पहली पंक्ति में रूपक, दूसरी में व्यतिरेक व अन्तिम में अतिशयोक्ति अलंकार है।

सद्वस्त्रा ... ... रत्नोपमा ॥८॥

शब्दार्थ—सच्छास्त्र=सत्यशास्त्र। सद्भ वातिरता=पवित्र विचारों वाली।

भावार्थ—राधा अच्छे वस्त्र तथा आभूषण पहनती थी। वह गुणवान थी तथा प्रत्येक स्थान पर आदर पाती थी। वह रोगियों और बूढ़े मनुष्यों का उपकार करने वाली, सच्चे शास्त्रों का चिन्तन करने वाली, पवित्र विचारों तथा अद्वितीय हृदय वाली, सच्चे-प्रेम का पोषण करने वाली थी। वह सुन्दर मन, प्रसन्न मुख तथा नारियों में रत्न के समान थी।

अलंकार—प्रथम पक्ति में छेकानुप्रास तथा अन्तिम में उपमा है।

यह विचित्र-सुता··· ··· ···निबद्ध था ।।९-१०।।

शब्दार्थ—व्रज-धराधिप=नन्द।

भावार्थ—वृषभानु की यह अनुपम पुत्री कृष्ण से प्रेम करती थी। अच्छे हृदय वाली यह सुन्दर बालिका कृष्ण को अपना सम्पूर्ण हृदय अर्पित कर चुकी थी।

राजा नन्द तथा राजा वृषभानु में भी परस्पर अपार प्रेम था। इस कारण से उनके परिवारों में भी अत्यधिक प्रेम-सम्बन्ध थे।

पृष्ठ ३७-३८—जब नितान्त ···पुत्तलिका रही ।।११-१२।।

शब्दार्थ—गृहीत=बुलाए जाते थे।

भावार्थ—जिस समय कृष्ण अत्यन्त छोटे व भोले थे और गोद में खेलते थे तभी से उन्हें वृषभानु के घर में अत्यन्त सम्मान के साथ बुलाया जाता था।

इसी प्रकार जिस समय वृषभानु की पुत्री राधा, जो अत्यत आभामयी थी, बिल्कुल दुधमुँही थी तभी से वह राजा नन्द के परिवार में अत्यन्त कौतूहल की पुतली अर्थात् मनोरंजन का साधन थी।

विशेष—कृष्ण और राधा के परिवारों में अत्यन्त स्नेह था और वे दोनों बचपन से ही एक दूसरे के आते-जाते थे यही स्नेह आगे चलकर प्रेम में विकसित हो गया।

यह अलौकिक ··· में वृषभानु के ।।१३-१४।।

शब्दार्थ–क्रीड़न=खेलने।

भावार्थ—ये दोनों बालक—कृष्ण व राधा-जब सुन्दर खेल खेलने योग्य हुए तो दोनों इकट्ठे मिलकर सुधबुध भूलकर खेलते थे।

इनके सुन्दर खेलों से कभी तो नन्द का घर गूंज उठता था और कभी वृषभानु के सुन्दर घर में क्रान्ति सी फैल जाती थी। अर्थात् वे दोनों इकट्ठे खेलते थे कभी नन्द के घर और कभी वृषभानु के।

जब कभी कल··· ··· ···था हुआ ।।१५-१६।।

शब्दार्थ—कटि-किंकिणी=कमर की तगड़ी। वादिता=ध्वनि।

भावार्थ—जिस समय दोनों के खेल में पाँव के घुंघरू और कमर की तगड़ी बज उठतीं थीं तब घर में मधुर संगीत की ध्वनि फैल जाती थी।

आयु के साथ २ राधा व कृष्ण का प्रेम भी अव्यक्त रूप में बढ़ता जा रहा था। बड़े होने पर बचपन का यही स्नेह प्रणय में बदल गया।

अलकार—सहोक्ति।

पृष्ठ ३८-३९—बलवती कुछ··· ···सुशीलता ॥१७-१८॥

शब्दार्थ—उर-भूमि=हृदय रूपी भूमि।

भावार्थ—राधा के हृदय रूपी भूमि में प्रेम रूपी लता इतनी दृढ़ हो गई कि व सोते-जागते, भोजन करते, हर समय कृष्ण की आभा में मस्त बनी रहतीं।

श्री कृष्ण के मधुर वचन, मुख-कमल की सुन्दरता, सीधापन, प्रेम व शील स्वभाव राधा के हृदय से किसी क्षण भी नहीं हटता था।

अलंकार—दूसरी पंक्ति में रूपक है।

पृष्ठ ३९—मधुपुरी ··· ··· कहाँ की नहीं ॥१९-२०॥

शब्दार्थ—मधुपुरी=मथुरा। उबरी=विकसित हुई। कुत्सित=कुटिल।

भावार्थ—कृष्ण के मथुरा-गमन के समाचार से प्रणय की विकसित हो रही लता पर पर्वत का प्रहार हुआ। हे विधाता! यह तेरी कैसी प्रवचना है।

काले व कुटिल कीड़े की सुन्दर पुष्प में आवश्यकता नहीं थी। मनोहर कमल की बनावट में काँटें न होने पर कोई कमी नहीं आ जाती। ईख की पोरियों में अनेक गाठों का होना कोई अच्छी बात नहीं है फिर भी हे ईश्वर, तुमने ये सब अनुचित वस्तुएँ निर्मित कीं। हे धृष्ट विधाता! ये सब तेरी अकुशलता के स्पष्ट उदाहरण हैं।

अलकार—प्रथम पद में सांगरूपक है।

विशेष राधा तथा कृष्ण के मधुर प्रेम के समय कृष्ण का गोकुल जाना विधाता की अकुशलता का परिचय है।

कमल का दल ··· ··· ··· प्रसंग से ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—कलानिधि=चन्द्रमा । मलीन=उदास ।

भावार्थ—कमल की पंखुड़ी सदैव ही हिम-पात से नष्ट होती है। सुन्दर चन्द्रमा को भी दुष्ट राहु निगल जाता है और बहुत कष्ट देता है।

बालिका राधा का विकसित पुष्प सा हृदय भी प्रसन्न न रह सका। वह भी कृष्ण के मथुरा-गमनके समाचार को सुनकर अत्यन्त उदास व खिन्न हो गया ।

अलंकार—दूसरे पद की पहली पंक्ति में उपमा ।

पृष्ठ ३९-४० - सुख जहाँ ... ... हो गया ।।२३-२४।।

शब्दार्थ—सद्म=घर। सुखाकर=सुखों का भंडार । वृषभानुजा= राधा । शोकनिमज्जित=शोक में डूब गया ।

भावार्थ—कितने शोक की बात है कि अत्यन्त सुन्दर घर जहाँ सुख स्वयं अपने अलौकिक रूप से सुन्दर नृत्य करता था इस अपार कष्ट से नहीं बच सका। तात्पर्य यह है कि घर में सुख सर्वत्र छाया हुआ था।।

राधा जी का घर सब सुखों का भंडार, सुसज्जित व स्वर्ग के समान शोभायमान था। इस समाचार को सुनते ही दुःख की अधिकता में सारा घर उदास हो गया और शोक में डूब गया ।

जब हुई श्रुति ... ... वृषभानुसुता हुई ।।२५-२६।।

शब्दार्थ - श्रुति-गोचर=कानों में पड़ी, सुनाई पड़ी। प्रथिता=प्रसिद्ध ।

भावार्थ—जिस समय राजा नन्द के पुत्र कृष्ण के गमन का समाचार राधा के कानों में पड़ा, उसके पास उसकी अनन्य सखी ललिता उपस्थित थी

जिस प्रकार खिली हुई कली तुषारपात से कुम्हला जाती है उसी प्रकार कृष्ण के जाने के समाचार से राधा उदास हो गयी ।

अलंकार—उदाहरण ।

नयन से बरसा ... ... कहने लगीं ।।२७।।

शब्दार्थ—बावली=पागल ।

भावार्थ—राधा पहले तो आँसू बहाती-बहाती पागल हो गई और फिर अपनी सखी ललिता की ओर देखती हुई इस प्रकार कहने लगी—

कल कुवलय ... ... कैसे सकेंगे ।।२८-२९।।

शब्दार्थ—कुवलय=नील कमल । फबीले=शोभायमान । कौशेय=रेशमी वस्त्र । घटिकाएँ=घड़ियाँ ।

भावार्थ—श्रीकृष्ण सुन्दर नील-कमल जैसे सरस नेत्रों वाले हैं । वे भली भाँति बने रेशम के पीले वस्त्रों से सुसज्जित है । अनेक गुणों के भण्डार, मणियों की माला पहनने वाले, मृदुभाषी तथा सुन्दर हैं । वे अत्यन्त शोभाशाली तथा राजा नन्द के लाड़ले हैं ।

अलंकार—पहली पंक्ति में उपमा है ।

भावार्थ—यदि वे सचमुच ही कल प्रातःकाल मथुरा जा रहे हैं तो उनका मुख देखे बिना मेरे प्राण कैसे रहेंगे अर्थात् उन्हें देखे बिना मैं तो मर जाऊँगी । हे सखी ! पहले तो उन्हें देखे बिना कुछ घड़ियाँ ही युग समान लगती थीं और अब तो उन्हें देखे बिना दिन कैसे गुजरेंगे ।

अलंकार—उपमा ।

पृष्ट ४१—जन-मन ... ... होता दिखाता ।।३०-३१।।

शब्दार्थ—कलपाना=दुःखाना । दगध=जलना ।

भावार्थ—हे सखी ! मैं दूसरे व्यक्तियों का दिल दुखाना बुरा मानती हूं । दूसरों पर कष्ट देख कर मैं प्रसन्न नहीं होती हूं । मैंने भूलकर भी किसी को कड़वो बात कह कर उसका हृदय नहीं जलाया फिर भी यह कष्टदायक बात (कृष्ण का मथुरा गमन) क्यों सुननी पड़ रही है ।

हे सखी ! तू मेरी उदासी देखकर यह कहेगी कि क्या किसी अन्य दूसरे के प्रिय-पात्र विदेश नहीं जाते अर्थात् कहेगी कि सबके सम्बन्धी विदेश जाते हैं इसलिए इतनी उदासी की आवश्यकता नहीं है । पर मालूम नहीं क्यो मेरा हृदय जला जा रहा है और मुझे सम्पूर्ण विश्व सूना दिखाई पड़ रहा है ।

यह सकल ... ... क्यों हो रहा ।।३२-३३।।

शब्दार्थ—विजन=निर्जन । विपिन=वन । रुदनरत=रोने में संलग्न । कसक=टीस ।

भावार्थ—मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कि सम्पूर्ण दिशाएँ रो रही हों तथा घर काट खाने को दौड़ता है। मन बेचैन हो गया है तथा ऊब गया है सम्भवतः वह निर्जन-वन में भाग जाना चाहता है।

शायद कोई मुझे रो-रोकर बुला रहा है। हमारे भाग्य की गति पलट रही है। (सौभाग्य, दुर्भाग्य में बदल रहा है)। मेरे हृदय में टीस सी हो रही है तथा वह जला जा रहा है।

अलंकार—पहली पंक्ति में उपमा है।

मधुपुर-पति ... ... जो लिखा है ॥३४-३५॥

शब्दार्थ—मधुपुर-पति=मथुरा का राजा कंस। सविधि-वरण= विवाह। भाल=भाग्य।

भावार्थ—राजा कंस ने कृष्ण को प्रेमपूर्वक निमंत्रण दिया है परन्तु हमें तो उनके जाने में कुशलता नहीं जान पड़ती। जिस प्रकार घटाएँ घिर-घिर कर आती हैं तो उनकी गरज से हृदय काँप उठता है उसी प्रकार श्रीकृष्ण के विरह की घटाएँ घिरती आ रही हैं और मेरा कलेजा कँपा रही है।

वैसे तो मैं अपना हृदय कृष्ण के चरणों में पहले ही चढ़ा चुकी हूं परन्तु मेरे हृदय की यह इच्छा थी कि श्रीकृष्ण से विधि-पूर्वक विवाह हो जाता। मुझे अपनी यह इच्छा पूरी होती दृष्टिगोचर नहीं होती। भला भाग्य का लिखा कब टलता है? अर्थात् जो भाग्य में लिखा होगा, वही होगा।

पृष्ट ४२—सविधि भगवती ... क्यों हो रहा है ॥३६-३७॥

शब्दार्थ—दुख-छाया-पात= दुःख रूपी छाया का घिरना।

भावार्थ—मैं आज भी पार्वती की विधि-पूर्वक पूजा करती हूं। अनेक उपवास रखती हूं और देवताओं से प्रार्थना करती हूं कि श्रीकृष्ण ही मेरे पति बनें। परन्तु जान पड़ता है कि मेरे सारे पुण्यकार्य व्यर्थ हो गए हैं।

हे सखि! न जाने वातावरण में क्यों एक दर्द भरी ध्वनि कहीं से आ गई है। न जाने क्यों सारे वृक्ष उदास खड़े हैं। पृथ्वी अत्यन्त दुःखी सी

क्यों जान पड़ती है यही नहीं आकाश में भी दुःख की छाया न जाने क्यों घिर आई है।

अहह सिसकती ... ... जा रही है ॥३८-३९॥

शब्दार्थ—छार=राख। छन-छन=क्षण-क्षण।

भावार्थ—हे सखि ! मैं किसे और क्यों देखकर रो रही हूं। किसी का उदास मुख मुझे क्यों रुला रहा है। किसका हृदय जल कर राख हुआ जाता है। मेरे विलाप की आहें किसे और क्यों वेध रही हैं। तात्पर्य यह कि मैं कृष्ण का ध्यान करके रो रही हूं और मेरी आहें कृष्ण के हृदय को वेध रही हैं।

हे सखि ! घर में यह कैसा भय सा छा गया है। इस भय के कारण मैं बार-बार चौंक उठती हूं। घर में छाया प्रकाश भी काँप रहा है तथा प्रत्येक क्षण यह प्रकाश मन्द होता जा रहा है।

मनहरण ... ... हमें देखते हैं ॥४०-४१।

शब्दार्थ—जुगुत=युक्ति।

भावार्थ—हे सखि ! हमें ऐसी कोई युक्ति नहीं दिखाई पड़ रही है जिससे हमारे मनमोहन कृष्ण प्रातःकाल मथुरा न जाएँ। परन्तु यदि ये काली रात्रि समाप्त ही नहीं होवे (तो प्रातःकाल होगा ही नहीं) और फिर प्राण-प्यारे कृष्ण ब्रज को छोड़ कर नहीं जा सकेंगे।

हे सखि ! आकाश में जो तारे हैं वे भी कुछ ठिठक कर, चिन्ता में पड़ कर रुके क्यों लगते हैं ? क्या ब्रज का कष्ट देखकर दुःखी हुए हैं ? क्योंकि ऐसा जान पड़ता है कि वे कुछ दुःखी होकर हमें देख रहे हैं।

अलंकार—दूसरे पद में अपह्नुति अलंकार है।

पष्ठ ४३—रह-रह किरणें का हो रहा है ॥४२-४३॥

शब्दार्थ—बोध देते=समझाते। मोचने=मुक्त करने। दुख-अनल-शिखायें=दुःख रूपी अग्नि की लपटें। दिलजले=दुःखी।

भावार्थ—इन सितारों से बार-बार जो किरणें फूटती दिखाई पड़ती हैं शायद इसके बहाने वे हमें समझा रहे हैं अथवा वे (किरणों के माध्यम

से) अत्यधिक दुःखी जीवों का कष्ट मिटाने के लिए शान्ति का हाथ बढ़ा रहे हैं।

आकाश में दुःख रूपी अग्नि की लपटें निकल रही हैं। ये लपटें किस दुखिया का हृदय जला रही हैं? आह! आकाश में तारा टूट रहा है! नहीं, यह तारा नहीं किसी दुःखी मनुष्य का शरीर गिर रहा है।

अलंकार—दोनों पदों में अपह्नुति अलंकार है। दूसरे पद की पहली पंक्ति में रूपक।

चमक-चमक ... ... रही बेकली है ॥४४-४५॥

शब्दार्थ – पर-हित-रत=दूसरों की भलाई में लगे। ठौर=स्थान। उडगण=सितारे। बेकली=व्याकुलता, बेचैनी।

भावार्थ—हे सखी! ये सितारे चमक-चमक कर हमें धैर्य बँधा रहे हैं परन्तु क्या वे मुझ दुखिया की प्रार्थना भी सुनेंगे। यदि वे दूसरों की भलाई में लगकर (अर्थात् मेरे दुःख को देखकर) अपना स्थान न छोड़ें तो रात नहीं बीत सकेगी और मेरा कार्य बन जाएगा।

हे सखि! जान पड़ता है कि सितारे स्थिर हो गए हैं शायद उनके कानों में मेरी प्रार्थना पहुंच गई है अर्थात् उन्होंने मेरी प्रार्थना सुन ली है! इन सितारों में बार-बार रंग आ जा रहा है सम्भवतः ये भी व्याकुल हो रहे हैं। (परेशान व्यक्ति के चेहरे का रंग प्रतिक्षण बदलता है)।

अलंकार—पहले पद की पहली पंक्ति में छेकानुप्रास।

दिन फल जब ... ... नहीं है ॥४६-४७॥

शब्दार्थ—निपट=बिलकुल।

भावार्थ—हे सखि! जब हमारे बुरे दिन आ गए हैं तो ये सितारे हमारा कार्य कैसे कर सकते हैं। ये सितारे प्रत्येक क्षण फीके होते जा रहे हैं अतः मेरी इच्छा पूर्ण करते दृष्टि-गोचर नहीं होते। (सितारों का फीका पड़ना दिन निकलने का द्योतक है)।

हे सखि! हमारे ये नेत्र हमें इतना क्यों सता रहे हैं? आह! सितारों का प्रकाश बिल्कुल मन्द होता जा रहा है। समझ नहीं आता कि ये सितारे

हमारा कष्ट देख कर मन्द पड़ गए हैं या छिपने वाले हैं इसलिए मंद पड़ गए हैं।

अलंकार—दूसरे पद में सन्देह।

पृष्ठ ४४ सखि ! मुख ... देता जलाता ।।४८-५०।।

शब्दार्थ—ताब=सामर्थ्य।

भावार्थ—हे सखि ! ये सितारे अब अपना मुख क्यों छिपा रहे हैं ? क्या उनमें अब हमारा दुःख देखने की सामर्थ्य नहीं है ? या हमारी विपत्ति को दूर करने में पूर्णतया असफल होने पर वे अपना मुख शर्म से छिपा रहे हैं?

हे सखि ! क्षितिज के निकट ये कैसी लालिमा दिखाई पड़ रही है ? यह लालिमा किसी सुन्दरी का रक्त है क्या ? ये पक्षी क्या व्याकुल होकर चिल्ला रहे हैं ? हे सखि ! सारी दिशाओं में ये आग सी क्यों लग रही है ? (सवेरा होने से पहले अकाश में लाली छा जाती है)।

हे सखि ! मैं अब समय की क्रूरता को समझ गई हूं अर्थात् समय की गति नहीं रुक सकती। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है त्यों-त्यों मेरा हृदय काँपता जाता है। थोड़ी देर बाद ही आकाश में आग का एक गोला निकलेगा अर्थात् सूर्य प्रकट होगा। यह आग का गोला (सूर्य) सारी ब्रज-भूमि को जला देगा। सूर्य निकलने पर कृष्ण मथुरा चले जायेंगे तथा सम्पूर्ण ब्रजवासी विरह की आग में जलेंगे।

अलंकार—पहले पद में सन्देह अलंकार।

हा ! हा ! ... ... अंधेरा करेगा ।।५१।।

शब्दार्थ—कमलिनिपते=सूर्य।

भावार्थ—हे कमलिनिपति सूर्य ! तूने मेरी अवस्था अपने नेत्रों से देखकर भी मेरे कष्टों पर विचार नहीं किया और न ही मेरी प्रार्थना को सुना। सूर्य निकलने पर अब सम्पूर्ण पृथ्वी को तो प्रत्येक दिन जैसा प्रकाश मिलेगा परन्तु सूर्य निकलने से ब्रजभूमि पर तो अंधकार छा जायेगा। सूर्य निकलने से कृष्ण ब्रज से चले जाएँगे और शोक रूपी अन्धकार छा जायेगा।

नाना बातें ... ... — होती कभी थीं ।।५२।।

शब्दार्थ—शमन=नष्ट ।

भावार्थ—राधा की सखि ललिता उसे अनेक बातें प्रेमपूर्वक सुना रही थी जिससे कि उसका दुःख शान्त हो जाये । वह धीरे धीरे राधा के नेत्रों से आँसू पोंछ रही थी । परन्तु राधा को समभाती-समझती ललिता स्वयं व्याकुल होकर रोने लगती थी ।

सूखा जाता ... ... राधिका थीं ।५३।।

शब्दार्थ—खिन्ना=उदास । उन्मना=अनमनी ।

भावार्थ—राधा का कमल जैसा सुन्दर मुख सूखता जा रहा था और उसके होंठ नीले पड़ते जा रहे थे । उसके दोनों नेत्रों से इतना अश्रु-जल बह रहा था कि नेत्र उसमें डूबे जा रहे थे । श्रीकृष्ण पर आने वाली विपत्तियों का सन्देह उसके हृदय को व्याकुल कर रहा था । राधा उदास, दीन, अत्यंत कुम्हलाई व अनमनी हो गई थी ।

— — —

पंचम सर्ग

पृष्ठ ४५—तारे डूबे . ज्योति फैली ।।१-२।।

शब्दार्थ—तमचुर=मुर्गे । निचय=समूह । मेदनी=पृथ्वी । भानु-जा=यमुना ।

भावार्थ सितारे छिप गये तथा अंधेरा दूर हो गया । आकाश में लाली फैल गई । पक्षी चहचहाने लगे तथा मुर्गे जाग गये (व बाँग देने लगे) । सब ओर प्रकाश छा गया । वृक्ष-समूह की शाखाएँ हिलने लगीं । तालाबों में कमल खिल उठे । धीरे-धीरे सूर्य निकल आया तथा अंधकार-पूर्ण रात्रि व्यतीत हो गई ।

विकसित, सुन्दर व इधर-उधर फैली हुई लताएँ वायु के झोंको से धीरे-धीरे हिलने लगीं । (वायु के वेग से) यमुना में सुन्दर लहरें उठने लगीं । सूर्य की सोने के समान सुनहरी किरणें पृथ्वी पर पड़ने लगीं । (यमुना के) किनारों, उद्यानों तथा पुष्प-वाटिकाओं में प्रकाश छा गया ।

अलंकार— दूसरे पद की तीसरी पंक्ति में उपमा है ।

प्रातः शाभा ... ... कपिता थी ॥३-४॥

शब्दार्थ -- दव=अग्नि । व्याली=सर्पिनी ।

भावार्थ—प्रातःकाल में ब्रजभूमि अत्यन्त शोभायमान होती थी पर यही शोभा आज बिल्कुल भी प्रिय नहीं लगती थी । पक्षियों की चहचहाहट अत्यन्त कर्ण-प्रिय होने पर मन को अच्छी नहीं लगती थी । खिले हुए कमल नेत्रों को शान्ति प्रदान करने वाले होते हैं पर इस समय वही कमल नेत्रों में अग्नि लगा रहे थे । आकाश में फैली लालिमा अत्यन्त प्रिय लगती है परन्तु इस समय यही लालिमा काली सर्पिणी के समान भयंकर प्रतीत होती थी ।

यमुना में जो लहरें उठ रही थीं उनसे ऐसा मालूम होता था जैसे कि उसके हृदय में शोक की लहरें उठ रही हों । लता-बेलें हल्की हवा के झोंकों से नहीं हिल रही थीं बल्कि वे श्रीकृष्ण के जाने के शोक से कांप रही थीं ।

अलंकार—दोनों पदों में उपमा व उत्प्रेक्षा तथा दूसरे में अपन्हुति अलकार भी है ।

पृष्ठ ४६- फूलों पत्तों ... ... दे वही थी ॥५-६॥

शब्दार्थ - निपतित = गिरी । सिक्तता=सींचना ।

भावार्थ—सारे पुष्पों तथा पत्तों पर ओस की बूंदें दिखाई पड़ रही थीं । ऐसा लगता था मानो सभी वृक्ष रो रहे थे और आँसू टपका रहे थे अर्थात् ये ओस की बूदें वृक्षों के आँसू थीं । अथवा नन्द की पत्नी यशोदा के दुःख को देखकर रात्रि भी रोने लगी थी और रोने के कारण उसकी आँखों से बूदे गिरी थीं ।

सर्वत्र पुष्पों तथा पत्तों से लदी वृक्षों की शाखाएँ तथा लताएँ पानी से भरपूर थीं । ऐसा लगता था मानो शोक के कारण उनके सम्पूर्ण शरीर से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी हो तथा उनको पूर्णतया भिगो दिया हो । (ओस से ढके वृक्षों, लताओं, पुष्पों तथा पत्तों को कवि ने शोक विह्वल दिखाकर आँसुओं से भरपूर बताया है ।)

अलंकार—पहले पद में भ्रम तथा दूसरे में यथाक्रम, उत्प्रेक्षा दोनों में है ।

धीरे-धीरे ... ... हैं दिखाते ॥७-८॥

शब्दार्थ—ढिग=निकट। फुल्लता=विकास।

भावार्थ—वायु धीरे-धीरे पुष्पों से लदे हुए वृक्षों के निकट जाती थी और उनकी शाखाओं से पुष्पों को पृथ्वी पर गिरा रही थी। ऐसा लगता था मानो इस प्रकार वह पुष्पों की प्रफुल्लता को दूर कर रहा था क्योंकि पुष्पों की यह प्रफुल्लता कृष्ण के जाने की व्यथा से आज ब्रजवासियों को अच्छी नहीं लग रही थी।

इस प्रकार पुष्पों का पृथ्वी पर गिरना देखकर ऐसा लगता है मानो सारे वृक्ष अपनी गोद से खिले हुए पुष्प गिराकर अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर रहे थे।

अर्थात् पुष्पों का गिरना प्रत्येक दिन की क्रिया न होकर वायु तथा वृक्षों का शोक प्रकट करना था।

अलंकार—दोनों पदों में उत्प्रेक्षा है। पहले पद में हेतूत्प्रेक्षा भी है।

नीची-ऊँची ... ... मलीना ॥९-१०॥

शब्दार्थ—बीचियाँ=लहरें दावा=भयंकर अग्नि। सलिल=जल। सरि=नदी। अवनत-मुखी=अपना मुख नीचे किए। कोई=कमलिनी।

भावार्थ—नदी और तालाब की उठने-गिरने वाली लहरों तथा ओस की बूंदों में सूर्य की किरणों की कान्ति चमक रही थी। उन लहरों तथा ओस की बूंदों में जो तीव्र प्रकाश उससे ऐसा प्रतीत होता था मानो ये उनके हृदयों की उष्मा को प्रकट कर रहे थे अथवा उनके हृदयों में दुःखों की अग्नि धधक रही थी।

यमुना नदी का सारा नीला जल शोक में व्याप्त दिखाई देता था। भ्रमर कमलों से निकल-निकल कर पागल से घूम रहे थे। कमलिनियों ने मुख नीचे कर रखे थे मानो कृष्ण-विरह की बुरी घड़ी जानकर उन्होंने उदासी और मलीनता के कारण अपना मुख झुका लिया था।

अलंकार—पहले पद में उत्प्रेक्षा तथा दूसरे में हेतूत्प्रेक्षा है।

विशेष—यमुना का जल स्वभाव से नीला है। भ्रमर स्वभावतः मंडराते हैं और कमलिनी भी सूर्योदय समय झुकी होती है। काव्य-चमत्कार इस बात में है कि तीनों प्राकृतिक क्रिया-कलापों को कवि ने कृष्ण वियोग पर घटित किया है।

पृष्ठ ४७—प्रगट चिह्न ... ... निज सहज से ॥११-१२॥

शब्दार्थ—सितता-युत=सफेद। स-दार=पत्नी सहित। सद्म=घर।

भावार्थ—जिस समय सम्पूर्ण पृथ्वी और आकाश में प्रातःकाल होने के चिह्न प्रकट हुए और सारी दिशाएँ प्रकाशवान हो गईं तो ब्रज भूमि अंधकारपूर्ण हो गई। कृष्ण के जाने का समय निकट देखकर सम्पूर्ण ब्रजभूमि दुःखरूपी अंधकार से ढक गयी।

उदास मुख लिए तथा कष्टों से भरपूर अगणित गोकुल निवासी अपनी-अपनी पत्नियों तथा बालक-बालिकाओं सहित अपने-अपने घरों से (कृष्ण को विदाई देने के लिए) दुःखी होकर निकले।

बिलखती ... ... नरमुण्ड ही ॥१३-१४॥

शब्दार्थ—नयन-गोचर=दृष्टि गोचर। नरमुण्ड=मनुष्यों के सिर।

भावार्थ—यह व्याकुल नर-समुदाय रो-रोकर अपने नेत्रों से आँसू गिरा रहा था। वे अत्यन्त व्याकुल होकर राजा नन्द के घर की ओर चल पड़े।

सूर्य निकलने से पहले ही नन्द के घर के निकट मनुष्यों की भीड़ एकत्र हो गई थी। जिधर देखो उधर मनुष्यों के सिर ही सिर दिखाई देते थे।

थे दीखते ... ... निकेत के थे ॥१५-१६॥

शब्दार्थ—स-बामा=स्त्रियों सहित।

भावार्थ—घरों में केवल बहुत बूढ़े, अत्यन्त बीमार या नई ब्याही बहुएँ शेष बची थीं। इनको छोड़कर अन्य कोई भी घरों पर नहीं था। गोकुल के सभी घर सूने हो गए थे।

गोकुल ही नहीं, उसके निकट के ग्रामों के भी अनेक मनुष्य अत्यन्त

दुःखी होकर अपनी पत्नियों सहित नन्द के घर के पास आकर जमा हो गए।

पृष्ठ ४८—जो भूरि-भूत ... चिनगी लगाती ॥१७-१८॥

शब्दार्थ—भूरि भूत=बहुत अधिक। चिनगी=चिन्गारी। समवेत=एकत्रित।

भावार्थ—वहाँ पर जो अत्यधिक जनता एकत्रित हो गई थी, वह राजा कंस के डर से बहुत दुःखी हुई। अनेकों दुःखों, सन्देहों की भयंकरता से वह जनता उद्विग्न हो रही थी।

नर-समुदाय में नाना प्रकार के विषयों पर वार्त्ता चल रही थी जिनसे लोग अत्यन्त शंकित हो रहे थे। उनके होंठ सूख गए थे और कलेजा कांप रहा था। उनके हृदयों में चिंता की चिन्गारी सी लग रही थी।

रोना महा ... ... मण्डली थी ॥१९॥

शब्दार्थ—घन=क्षण। द्विधा=दुविधा।

भावार्थ—नर-समुदाय दुविधा के समुद्र में डूबा था। दुविधा यह थी कि रोयें या न रोयें। श्रीकृष्ण के गमन का समय होने के कारण रोना अत्यन्त अशुभ था अतः आँसू नहीं गिराए जा सकते थे परन्तु कृष्ण के वियोग के दुःख के कारण उनका मन एक क्षण के लिए भी रोये बिना नहीं मानता था।

आई बेला ... ... में से यशोदा ॥२०-२१॥

शब्दार्थ—नलिनपति=सूर्य। स-जनक=पिता सहित। वामा=स्त्री।

भावार्थ—जैसे ही श्रीकृष्ण के प्रस्थान का समय आया सर्वत्र उदासी छा गई। सूर्य भी थोड़ा ऊँचा उठकर वृक्षों के पीछे छुप गया। (गोकुल वासियों का कष्ट न देख पाने के कारण!) तब श्रीकृष्ण अपने पिता नन्द व अक्रूर को साथ ले तथा अपने सभी सम्बन्धियों को आगे करके घर से बाहर निकले।

अपने प्रिय पुत्र कृष्ण के थोड़े पीछे अत्यन्त शोकमग्न यशोदा अनेक स्त्रियों सहित घर से निकलीं। वे बड़ी कठिनाई से अपने नेत्रों में आँसू रोके

हुए थीं तथा उनका हृदय अनेकों सन्देहों (कृष्ण की सुरक्षा) के कारण अत्यन्त मलीन था।

अलंकार—पहले पद में हेतूत्प्रेक्षा है।

द्वारे आया … … … जाते कहाँ हो ॥२२-२३॥

शब्दार्थ—कम्पमाना=काँपना। सलिल=जल।

भावार्थ—ब्रज के राजा नन्द को मथुरा की यात्रा के लिए दरवाजे पर आया देखकर, दोनों कुमारों (बलराम व कृष्ण) के पुष्प जैसे भोले-भाले मुंह देखकर तथा नन्द की पत्नी यशोदा का अत्यन्त उदास मुख देख कर, चिन्ता में डूबा सारा जन-समुदाय काँप उठा।

अचानक ही किसी व्यक्ति के नेत्रों में अत्यन्त प्रयत्न करने पर भी आँसू नहीं रुक सके और वह रो पड़ा। कोई व्यक्ति आहें भरता-भरता पागल सा हो गया। किसी ने कहा कि सम्पूर्ण ब्रज के प्राणाधार प्यारे कृष्ण हम लोगों को व्याकुल करके कहाँ जा रहे हो। (सभी ने किसी न किसी ढंग से अपना शोक प्रकट किया)।

पृष्ठ ४६—रोता-धोता … … ले जायेंगे ॥२४-२५॥

शब्दार्थ—आभीर=अहीर।

भावार्थ—रोता-पीटता व व्याकुल होता एक बूढ़ा अहीर अक्रूर के पास आकर उससे अत्यन्त दीनतापूर्वक कहने लगा – आप इस नर-समुदाय को कोई ऐसी युक्ति समझायें जिससे मेरे प्यारे कुमार कृष्ण मुझ से अलग न हों।

मैं बूढ़ा हूं। मेरे बुढ़ापे को देखकर यदि आप कुछ कृपा करना चाहें तो मेरी यही प्रार्थना है कि आप कृष्ण को छोड़ जायें। मेरा लाड़ला कृष्ण सम्पूर्ण ब्रज-भूमि का प्राण है अतः यदि आप उसे ले जायेंगे तो हम लोग नहीं जी सकेंगे (प्राण चले जाने पर जीवन कैसा ?)

रत्नों की है … … … होता दृगों से ॥२६-२७॥

शब्दार्थ—तातों=ग्वालों।

भावार्थ—हमारे यहाँ रत्नों की बिल्कुल भी कमी नहीं है, आप जितने चाहें ले सकते हैं। यदि आप चाहें तो गाड़ी भर कर सोना-चाँदी ले लें। यही नहीं आप गाय, घोड़े व हाथी अनेक पशु भी ले सकते हैं पर मेरी यही प्रार्थना है कि मेरा धन कृष्ण न ले जायें।

यदि प्रिय व्रजभूमि को रात्रि के समान माना जाए तो अपने पिताओं सहित सारे ग्वाले सितारों के समान हैं। इन सितारों के मध्य श्रीकृष्ण चन्द्रमा हैं अतः उनके चले जाने से जो अंधकार छा जायेगा वह दूर नहीं हो सकेगा। आकाश में कितने ही सितारे क्यों हों, चन्द्रमा बिना अन्धकार दूर नहीं होता।

अलंकार—दूसरे पद में उपमा व रूपक है।

पृष्ठ ४६ ५०—सच्चा प्यारा ... लाल दोनों ॥२८-२६॥

शब्दार्थ – बिवि=दो।

भावार्थ—कृष्ण सम्पूर्ण व्रज के परिवारों के सच्चे और प्रिय प्रकाश हैं। वे गरीबों की प्यारी सम्पत्ति तथा बूढ़ों के आँखों की पुतली है। बालिकाएँ उन्हें अपना प्रिय सम्बन्धी मानती हैं तो लड़के अपना भाई समझते हैं अतः वे सभी वय के स्त्री-पुरुषों को समान रूप से प्रिय हैं। इस प्रकार श्रीकृष्ण हमारे लिए तो कल्पवृक्ष के समान हैं, उन्हें आप क्यों लिए जाते हो।

अक्रूर ने जब उस बूढ़े को इस प्रकार कहते सुना तो उनके नेत्रों में आँसू आ गए। आँसू रोक कर अक्रूर ने अत्यन्त नम्रता से कहा कि आप इतने दुःखित मत होइये और मेरी बात का विश्वास कीजिए कि आपके दोनों कुमार (बलराम व कृष्ण) दो दिन में ही मथुरा से वापिस आ जायेंगे।

आई प्यारे ... ... मेरे करूँगी ॥३०-३१॥

शब्दार्थ—दल=पत्ते।

भावार्थ—एक चतुर वृद्ध स्त्री बड़े प्रयत्न से कृष्ण के निकट पहुंची। उसने पहले तो कृष्ण की प्रेमपूर्वक बलाएँ लीं और उनके मुख रूपी कमल को प्यार से स्पर्श किया। फिर दुःखी होकर वे कृष्ण से कहने लगीं—बेटे! तू मथुरा मत जा। तेरी माता तेरे जाने के दुःख से पागल जैसी हो रही है।

यदि राजा कंस हम पर कुपित होगा तो मैं ब्रज में रहना छोड़ दूंगी। इन विशाल भवनों को छोड़कर वन में रहने लगूंगी। नाना प्रकार के पकवानों को त्याग कर वन के फूल-फल तथा पत्ते खालूंगी। (मैं ये सभी कष्ट सह लूंगी) पर तुझे अपने से दूर नहीं करना चाहती।

जाओगे क्या ... ... लखूँगी ॥३२-३३॥

शब्दार्थ—दंड=जुर्माना।

भावार्थ—कृष्ण तुम मथुरा जाओगे। परन्तु राजा कंस के विषय में क्या कहा जा सकता है। मेरा हृदय इस आशंका से बहुत भयभीत है कि न जाने वह तुमसे क्या व्यवहार करे। तेरे बदले तो मैं इन्द्र का राज्य भी स्वीकार नहीं करूँगी। तेरा सुन्दर प्रिय मुख देखने के लिए मैं स्वर्ग को भी त्याग दूंगी।

यदि इस अपराध के लिए राजा कंस मुझ पर जुर्माना करे तथा उसे अदा करने के लिए मुझे घर के सब बर्त्तन तथा शरीर के वस्त्र भी बेचने पड़े तो भी मैं तुझे मथुरा नहीं भेजूंगी। यदि वह मेरा हृदय मांगेगा तो वह भी निकाल कर दे दूंगी। मैं यह सब कुछ करने के लिए तैयार हूँ परन्तु तुझे मथुरा जाता नहीं देखूंगी।

पृष्ठ ५०-५१—कोई भी ... ... लाड़िला है ॥३४-३५॥

भावार्थ—मेरे हृदय की व्यथा को सुनने वाला कोई नहीं है जिसे मैं सुना सकूं। मेरे अतिरिक्त केवल मेरा हृदय और अनेकों कष्ट हैं। हे वत्स! तेरे अबोध मुख को देखकर मुझे शान्ति प्राप्त होती है अतः यदि तू मथुरा चला गया तो मैं किस प्रकार जीवित रह सकूंगी।

तेरे मथुरा जाने के समाचार को सुनकर दूसरे रो रहे हैं, मैं रो रही हूँ, सम्पूर्ण ब्रजवासी रो रहे हैं। जब दूसरों की यह दशा है तो सोच! तेरी माता यशोदा की क्या अवस्था होगी जिसके एक ही पुत्र है वह भी इतना अबोध और लाड़ला।

पृष्ट ५१—प्राचीना की ... क्या हो गया है ॥३६-३७॥

शब्दार्थ—सुरभि=गौ।

भावार्थ—उस बुढ़िया की सारी बातें कृष्ण ने बड़े दुःख से सुनी और अपने नेत्रों में आँसू भर कर प्रेमपूर्वक बोले— हे माता ! इतनी व्याकुल मत हो। मेरा तनिक भी अनिष्ट न होगा और कुछ दिनों के पश्चात् ही मैं वापिस आ जाऊँगा।

उसी समय एक ग्वाला दौड़ा हुआ राजा नन्द के पास आया और कहने लगा कि आपकी कोई भी गाय वन को नहीं जाती। गायें न तो घास खाती हैं और न बछड़ों को दूध पिलाती हैं। हाय ! न जाने सब गौओं को क्या हो गया है।

देखो देखो ... ... शंकिता हो ॥३८-३९॥

भावार्थ—आती हुई गौओं की ओर संकेत करते हुए ग्वाले ने नन्द से कहा—देखिए ! सारी गौएँ कृष्ण की ओर ही आ रही हैं। ये गाएँ पागल हो गई हैं और रोकने से नहीं रुक सकती। ऐसा कह कर फूट-फूट कर ग्वाला रोने लगा और कृष्ण से कहने लगा कि कुमार हम सब को रुला कर मत जाओ। इधर गोप रो ही रहा था तभी नन्द की सारी गायें पूंछ उठाकर दौड़ती हुई कृष्ण के पास आईं। ये गाए अत्यन्त उदास थीं तथा उनके व्याकुल नेत्रों में जल भरा हुआ था। वे अत्यन्त शंकालु दृष्टि से कृष्ण के मुख रूपी कमल को देख रही थीं।

पृष्ठ ५१-५२—काकातूआ ... ... शिला की ॥४०-४१॥

शब्दार्थ—काकातूआ=बड़ा तोता।

भावार्थ—यशोदा के घर के द्वार का काकातूआ (तोता) भी बहुत दुःखी था। खिन्नता के कारण वह अपनी मधुर वाणी को भी भूल गया था और व्याकुल होकर जोर-जोर से चिल्ला रहा था और यही पुकार रहा था—हे कुमार ! इस प्रकार सब को व्याकुल करके कहाँ जा रहे हो।

(जब उपस्थित नर-समुदाय ने) पक्षियों तथा गौओं की यह अवस्था देखी तो उनका रहा-सहा धैर्य भी जाता रहा। सब लोग हाय ! हाय ! करके इतनी जोर से रोने लगे कि उनको देखकर पत्थर जैसे कठोर हृदय वाले व्यक्ति भी द्रवित हो उठे।

पृष्ठ ५२—ग्रावेगों के ... ... बैठ जाऊँ ।।४२-४३।।

शब्दार्थ—संताप-सिंधु=शोक-सागर । यान=रथ ।

भावार्थ—शोक-सागर को बड़ी शीघ्रता से बढ़ता देखकर उदास अक्रूर ने धीरे से राजानन्द से कहा—अब मुझ से व्रजवासियों का दुःख नहीं देखा जाता और शोक उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है । अतः यशोदा की आज्ञा पाकर कृष्ण उनके पाँव छूकर रथ पर बैठें ।

अपने पिता नन्द की आज्ञा पाकर तथा अक्रूर का परामर्श मान कर अपने बड़े भाई बलराम सहित कृष्ण यशोदा के पास गये । अपनी माता के चरण रूपी कमलों को स्पर्श करके वे धैर्यपूर्वक बोले—माता यदि आज्ञा दें तो मैं रथ पर बैठ जाऊँ ।

अलंकार—पहले पद की पहली पंक्ति में रूपक ।

दोनों प्यारे ... ... गेह आओ ।।४४-४५।।

शब्दार्थ—विधुमुख=चन्द्रमुख । अंशुमाली=सूर्य ।

भावार्थ—जैसे ही दोनों कुमारों ने माता से विदा माँगी तो यशोदा के नेत्रों में रुके हुए आँसू एक दम टपक पड़े । धैर्यपूर्वक परन्तु अत्यन्त कष्ट से वे कहने लगीं—मेरे जीवन के सहारों जाओ । दोनों भाई शीघ्र ही वापिस आकर अपना चन्द्रमुख हमें दिखाओ, (यही मेरी कामना है) ।

(इसके पश्चात् वे शुभकामना करने लगीं जिससे यात्रा सुखपूर्वक हो सके)—मन्द-मन्द वायु चले, सूर्य प्रिय हो अर्थात् अधिक तेज न हो; वृक्षों की प्यारी-प्यारी छाया हो, वनों में सर्वत्र शान्ति विराजमान हो; मार्ग की सब विपत्तियाँ और बाधाएँ नष्ट हो जाएँ । तुम्हारी यात्रा सफल हो तथा सकुशल घर वापिस आओ ।

अलंकार—४४वें पद में उपमा है ।

विशेष—४५वाँ पद माँ के हृदय की झांकी प्रस्तुत करता है ।

पृष्ठ ५२-५३ ले के माता ... ... दुखों से ।।४६-४७।।

शब्दार्थ—बोध=समझाना ।

भावार्थ– कृष्ण और बलराम दोनों ने माता की चरण-धूलि ली। तत्पश्चात् ब्राह्मणों के निकट आकर उनके चरणों को प्रणाम किया। बन्धु-बान्धवों से मिले तथा बड़ों को हाथ जोड़कर प्रणाम किया। अन्त में सब को समझा-बुझा कर वे विशाल रथ में पीछे जा बैठे।

दोनों प्यारे पुत्रों को रथ पर बैठा देखकर यशोदा की व्याकुलता बहुत बढ़ गई। उनके दोनों अश्रुपूर्ण नेत्रों से जलधारा बहने लगी। दुःखाग्नि से जलकर वे अपने पति नन्द से दीनता से कहने लगीं—

अहह दिवस ... ... न होवे ।।४८-४९।।

शब्दार्थ—थाती=धरोहर।

भावार्थ—हाय ! यह कैसा अशुभ दिन है ! आज मैं अपने प्यारे पुत्र से अलग हो रही हूँ। हे स्वामी ! असंख्य गुणों से युक्त, प्राणों से भी प्रिय अपनी इस कृष्ण रूपी धरोहर को मैं आपको सौंपती हूँ।

हे स्वामी ! आप तो मार्ग में आने वाली कठिनइयों को जानते हैं पर ये दोनों कुमार अभी तक कहीं भी नहीं गए हैं (इसलिए मार्ग में आने वाले कष्टों से अनभिज्ञ हैं)। उन्हें मीठे फल खिलाना तथा सुन्दर दृश्य दिखाना। मेरे कुमारों को मार्ग में कोई भी कठिनाई न हो, ऐसा प्रयत्न करना।

अलंकार – पहले पद में रूपक।

खर पवन ... ... भी न देना ।।५०-५१।।

भावार्थ—मेरे प्यारे बालकों को तेज वायु कष्ट न पहुंचा सके। इन्हें सूर्य की किरणों की उष्मा से बचाते रहियेगा। आवश्यकता समझने पर छांह में बैठाना और ध्यान रखना कि इनके मुखरूपी कमल मुरझा नहीं जायें।

इन्हें प्यासा देखकर निर्मल जल मंगा कर पिलाना। कुछ भूखा होते पर ही पकवान (जो मैंने बनाकर रख दिए हैं) खिलाना। अपना सारा दिन पुत्रों का मुख देखते-देखते व्यतीत कर देना। इनके सुन्दर होंठ सूखने न पायें, ध्यान रखना।

अलंकार—५०वें पद में उपमा।

पृष्ठ ५३-५४—युग तुरग ... ... के न आवें ।।५२-५३।।

शब्दार्थ—तुरग=घोड़े। कुवामा=बुरी स्त्रियाँ। वामता=दुष्टता।

भावार्थ—रथ के दोनों घोड़े शक्तिशाली तथा वायु के समान शीघ्र-गामी हैं। इन्हें अधिक तेज मत दौड़ने देना और रथ को धीरे-धीरे चलाना। (रथ के शीघ्र चलने से वह बहुत हिलेगा और परिणामस्वरूप कुमारों को कष्ट होगा।) रथ के बहुत हिलने से कुमारों को कष्ट नहीं होने पाये क्योंकि मेरे कुमारों का हृदय बहुत कोमल है।

हे प्राणनाथ! सब नगरों में बुरी स्त्रियाँ होती हैं। उनकी दुष्टता को सज्जन लोग नहीं समझ पाते। ऐसी विष-भरी स्त्रियों से कुमारों को हमेशा बचाए रखना और वे लाड़ले कुमारों के निकट भी नहीं आने पाये क्योंकि अनिष्ट का डर है।

अलंकार—५२वें पद में उपमा।

पृष्ठ ५४—जब नगर ... ... लाल मेरे ॥५४-५५॥

शब्दार्थ—सुअन=पुत्र। मख=यज्ञ।

भावार्थ—हे नाथ! जब आप अपने भोले पुत्रों को मथुरा नगरी दिखाने के लिए ले जाएँ तो दुष्टों से बचाकर रखना। आप कुमारों को अपने साथ ही रखना तथा साथ ही घर लाना। एक क्षण के लिए भी पुत्रों को अपने नेत्रों से दूर मत करना।

धनुष-यज्ञ-सभा में मेरे पुत्रों को देखकर यदि कंस की भौंहें जरा भी टेढ़ी हों अर्थात् वह जरा भी क्रोधित हो तो अवसर के अनुसार युक्ति निकाल लेना जिससे राजा क्रोधित न हो सके और मेरे पुत्र उसके कोप से बच जाएँ।

यदि विधि वश ... ... जाऊँगी मैं ॥५६-५७॥

शब्दार्थ—विधिवश=भाग्यवश।

भावार्थ—यदि दुर्भाग्यवश राजा कंस ने कुछ और ही निश्चय किया हो अर्थात् कृष्ण का अनिष्ट करने की सोची हो तो बड़ी दीनतापूर्वक यह प्रार्थना करना—यदि आपकी दृष्टि मलिन हो गई अर्थात् यदि आप कुपित

हो गए तो हम जीवित नहीं रह सकेंगे क्योंकि ये दोनों पुत्र ही मेरे प्राणों का अवलम्ब हैं।

इनका शुष्क अर्थात् उदास मुख देखकर मेरा हृदय ही सूख जाता है। इनके कष्टों को देखकर मेरा हृदय काँप जाता है। हे नाथ ! यदि मेरे पुत्रों पर कोई भी विपत्ति आई तो यह पृथ्वी फट जायेगी और मैं उसी में समा जाऊँगी।

पृष्ठ ५४-५५—जागकर ... ... बिताती ॥५८-५९॥

भावार्थ—यदि मेरे पुत्रों को थोड़ी सी भी बेचैनी होती तो मैं सारी रात्रि जागकर काट देती थी। ऐसे प्यारे पुत्रों को यदि जरा भी कष्ट हुआ तो हमारा हृदय कैसे चूर-चूर नहीं होगा।

शीत ऋतु में रात्रि बहुत ठंडी होती है पर मैंने इस सर्दी को कभी भी सर्दी नहीं माना अर्थात् ठंड की परवाह न की। पुत्र को गोद में लेकर शीत से काँपती रहती थी (पर उसे कष्ट नहीं होने दिया)। यदि वह तब भी खुश न होता तो सारी रात्रि को खड़े-खड़े और घूम-घूम कर व्यतीत कर देती थी।

विशेष—माता द्वारा बालक के पालन-पोषण का सच्चा व सजीव चित्र कवि ने खींचा है।

पृष्ठ ५५—निज सुख ... ... मैंने सुनाई ॥६०-६१॥

भावार्थ—अपने पुत्रों के सुख के लिए मैंने कभी भी अपने सुख की ओर ध्यान नहीं दिया। मैं तो पुत्र के सुख से ही सुखी रहती थी। हे नाथ! मैंने तो इसका उदास मुख भी कभी नहीं देखा अर्थात् उसे तनिक भी कष्ट नहीं होने दिया। हाय ! अब मैं अपने प्यारे पुत्र का दुःख कैसे देख सकूँगी। हे स्वामी ! यह मैं भली-भाँति जानती हूँ कि तुम्हारे हृदय का भी यही प्यारा पुत्र एकमात्र धन है, तब भी कहे बिना मेरा हृदय नहीं मानता, इसी लिए लाचार होकर मैंने आपसे यह निवेदन किया है।

अब अधिक ... ... लाड़िलो को ॥६२॥

भावार्थ—हे स्वामी ! मैं आपसे और अधिक क्या कह सकती हूँ। आपसे और अधिक कहना वास्तव में अनुचित ही होगा। अब मैं अपने दोनों हाथ जोड़ भगवान से यही प्रार्थना करती हूँ कि आप अपने दोनों प्रिय पुत्रों सहित कुशलपूर्वक घर लौटें।

सारी बातें ... ... फूटती सी ॥६३-६४॥

शब्दार्थ—उच्छ्वास=आहें। आविर्भूता=व्यक्त।

भावार्थ—नन्द की पत्नी यशोदा के यह कष्टकर कथन सब लोगों को बहुत व्याकुल करते थे और दुःख पहुंचाते थे। उपस्थित नर-समुदाय का शेष धैर्य भी समाप्त हो गया और सब रोने लगे। सम्पूर्ण पृथ्वी पर शोक की आहें छा गईं।

सारे आकाश में निराशा व्यक्त हो रही थी। दिशाओं में भी दुःख की मूर्ति प्रकट हो जाती थी, तात्पर्य यह है कि अतिशंकित हृदय कोई भी आशावान् कल्पना नहीं कर सकता था। ब्रज की दुःखावस्था देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो पृथ्वी के छिद्रों से दुःख की विशाल धारा निकल रही थी।

अलकार—६३वें पद में अतिशयोक्ति तथा ६४वें पद में उत्प्रेक्षा है।

पृष्ठ ५६—सारी बातें -- -- सभी को ॥६५-६६॥

शब्दार्थ—प्रबोधा=समझाया। हाहा=गिड़गिड़ाना।

भावार्थ—नन्द ने अपनी पत्नी की सम्पूर्ण बातें दुःखपूर्वक सुनीं। तत्पश्चात् मधुर वचनों से उसे समझाया तथा धैर्य दिलाया। फिर उपस्थित जन-समूह को भी धैर्य देकर वे अक्रूर सहित अपने रथ पर जा बैठे।

जब नर-समुदाय ने रथ को जाता देखा तो वे सब उसे घेर कर बैठ गए। वे इतनी कष्टकर बातें कहने लगे कि पत्थर जैसे हृदय भी द्रवित हो जाएँ। पहले तो कृष्ण से गिड़गिड़ा कर विनती करने लगे (कि मत जाइए) और फिर उदास होकर कहा—यदि आपको अवश्य जाना है तो हम सभी को साथ ले चलो।

बीसों बैठे --- --- --- मैं फिरूँगा ॥६७-६८॥

शब्दार्थ—रासें=लगामें। चक्र=पहिया।

भावार्थ अनेकों व्यक्ति रथ के पहिए दोनों हाथों से पकड़ कर बैठ गए जब कि अनेकों ने विशाल घोड़ों की जोड़ी की लगामें पकड़ ली। अनेक व्यक्ति उस चंचल रथ के सम्मुख भूमि पर लेट गए क्योंकि दोनों बालकों का मथुरा-गमन सभी को अप्रिय लग रहा था। लोगों को अत्यन्त कष्ट से पागल होता देख नन्द रथ से नीचे उतरे और इस प्रकार समझाने लगे तुम लोग इतने व्याकुल क्यों हो रहे हो और रथ को क्यों रोक रहे हो अर्थात् इतने व्याकुल मत होओ और रथ को मत रोको क्योंकि मैं दो दिन में ही अपने हृदय-धन को लेकर वापिस आऊँगा।

देखो लोगो ... में यशोदा ॥७६-७०॥

शब्दार्थ—चेतनाशून्य=मूर्च्छित।

भावार्थ—तत्पश्चात् नन्द ने नर-समुदाय का ध्यान चढ़ते हुए दिन की ओर दिलाया और कहा कि दिन चढ़ने के साथ ही साथ धूप भी बढ़ती जायेगी। इसलिए यदि रथ को और रोका जायेगा तो उल्टे कृष्ण को कष्ट ही होगा। इसी प्रकार के मधुर वचन कहकर व सब को रथ के पास से हटाकर वे तत्काल रथ में जा बैठे और उसे शीघ्रता से चलाया।

दोनों तीव्रगामी घोड़े उचक कर चले तथा रथ को शीघ्रता से खींचने लगे। आकाश की सम्पूर्ण दिशाओं में हाय-हाय का स्वर गूंजने लगा। ब्रज के सम्पूर्ण प्राणी मूर्च्छित-प्रायः होकर रोने लगे। यशोदा चेतनाहीन होकर पृथ्वी पर गिर पड़ीं।

पृष्ठ ५७—जो आती थी ... ... मिटा जा ॥७१-७२॥

शब्दार्थ—भ्रान्त=विक्षिप्त, पागल।

भावार्थ—घोड़ों के टापों से उड़ी मार्ग की जो धूलि सामने से आ रही थी, उसके निकट जाकर एक विक्षिप्त सी लड़की कहने लगी—हे धूलि! तू इतनी पागल क्यों हो रही है, क्या तू भी कृष्ण से अलग होने के कारण बेचैन है?

हे धूलि ! तू मेरे निकट आ। मेरे हृदय से चिपट जा और नेत्रों में बस जा। तू मेरे अंगों पर आकर गिर जा और मुझे संतोष प्रदान कर। ओ धूलि ! मैं तुझे अपने हाथों से स्पर्श करके सुख अनुभव करती हूँ क्यों कि तू मेरे प्रिय के पास से आरही है इसलिए मेरा क्लेश दूर हो जायेगा।

विशेष—सच्चा प्रेमी अपने प्रिय की धूलि तक से प्रेम करता है। इन पदों में सच्चे प्रेम की स्पष्ट झांकी है।

रत्नों वाले ... ... दिखाती ॥७३-७४॥

शब्दार्थ—किम्वा=अथवा। अलक=बालों की लट।

भावार्थ—हे धूलि ! यदि तू श्रीकृष्ण के रत्नजटित मुकुट पर जा बैठती तो अलौकिक स्थान प्राप्त करती। यदि तू कृष्ण की लट पर छा जाती तो अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होती। हे धूलि ! तू तो मेरे समान ही पूर्ण रूप से दुर्भाग्यशालिनी है तभी तो अत्यन्त कान्तिवान् पाँव रूपी कमल पर न चिपट सकी।

यदि तू उस विशाल रथ में कहीं भी जाकर बैठ जाती अथवा उन दोनों घोड़ों के शरीर पर जा लगती तो तू अपने प्रिय सम्बन्धी (श्रीकृष्ण) के साथ चली जाती और शान्ति प्राप्त करती और मेरे समान ही पागल होकर क्यों भटकती।

हा ! मैं ... ... धूलि ही को ॥७५-७६॥

शब्दार्थ—अपर=दूसरी।

भावार्थ—हाय ! मैं अपने हृदय के कष्ट को किस प्रकार प्रकट करूँ। मेरे हृदय को तो मनुष्य-मात्र से घृणा होने लगी है। यदि मैं घोड़ा, रथ तथा पताका होती तो प्यारे कृष्ण के साथ चली जाती और इस विरह का कष्ट तो नहीं पाती। दूसरी बालिका अत्यन्त व्याकुल होकर बोली—हे सखि ! अब मैं क्या कहूँ ? अब तो मुझे रथ की पताका भी दृष्टिगोचर नहीं हो रहीं। अब तो आकाश में थोड़ी सी धूलि ही उड़ रही है। हे पगली ! अब इस धूलि को ही आँख भर कर (दिल भर कर) देख ले।

पृष्ठ ५८—जी होता है ... ... ऊबे खड़े थे ॥७७-७८

शब्दार्थ--आली=सखि ।

भावार्थ—हे सखि ! मेरा हृदय अत्यन्त व्याकुल हो रहा है और कलेजा मुँह को आ रहा है अर्थात् निकल पड़ना चाहता है । मेरे हृदय में ज्वाला सी जल रही है और मैं उकता गयी हूँ । कृष्ण को लेकर रथ अब बहुत दूर चला गया है । हाय ! अब तो मुझे धूलि भी नहीं दिखाई देती (क्योंकि रथ अत्यधिक दूर चला गया है) ।

जब तक मेरे कानों में घोड़े की टापों का शब्द आता रहा और रथ पर फहराती हुई ऊँची ध्वजा दिखाई देती रही और जब तक रथ की तीव्र गति से उड़कर थोड़ी सी भी धूलि आकाश में छाई रही, तब तक सभी व्यक्ति इसी प्रकार खड़े रहे और बातें करते रहे ।

तदुपरान्त ... ... जनमंडली ।।७९।।

शब्दार्थ—विमोचती=छोड़ती ।

भावार्थ—उसके पश्चात् अत्यन्त दुःखित यशोदा अपने नेत्रों से जल बरसाती अपने घर को चली गई । यशोदा को घर जाता देखकर वहाँ उपस्थित व्याकुल जन-समुदाय अपने-अपने घरों को चला गया ।

धाता ... ... किसी ने ।।८०।।

शब्दार्थ—धाता=ब्रह्मा, विधाता ।

भावार्थ—विधाता द्वारा निर्मित होकर तथा पृथ्वी पर जन्म लेकर अनेक प्राणियों ने वैभव पाकर खोया है । परन्तु जैसा प्यारा वैभव ब्रज-भूमि ने पाकर खो दिया है, वैसा वैभव पृथ्वी पर अन्य किसी ने नहीं खोया ।

षष्ठ सर्ग

पृष्ठ ५६—धीरे-धीरे ... ... से थे ।।१-२।।

शब्दार्थ—पद्मिनीनाथ=सूर्य । दोषा=रात्रि । उद्भ्रान्त=पागल ।

भावार्थ—श्रीकृष्ण के चले जाने के पश्चात् धीरे-धीरे दिन छिप गया और सूर्य अस्त हो गया । उसके पश्चात् रात्रि आई और व्यतीत हो गई और दूसरा दिन निकल आया । इसी प्रकार अनेक घड़ियाँ बीत गईं

और कई दिन व्यतीत हो गए परन्तु मथुरा से न तो कृष्ण आए और न कोई दूसरा ही आया।

ज्यों-ज्यो दिन बीतते जाते थे, त्यों-त्यों चिन्ता बढ़ती जाती थी। कृष्ण का समाचार जानने की इच्छा बढती जाती थी और व्याकुलता अधिकाधिक सताने लगी। हृदय में घबराहट उत्पन्न होती जा रही थी और सम्पूर्ण ब्रजवासी पागल से प्रतीत हो रहे थे।

खाते-पीते ... ... क्यों न आये ॥३-४॥

शब्दार्थ—प्रतिथल=प्रत्येक स्थान पर। मिथः=परस्पर।

भावार्थ—खाते-पीते, चलते-फिरते, उठते-बैठते, सोते-जागते, आते-जाते, वन में गौओं को चराते व देते-लेते अर्थात् अपने दैनिक जीवन के प्रत्येक कार्य को करते हुए सभी ग्वालों तथा ग्वालिनों के हृदय में यही भाव आता था कि कृष्ण अब तक वापिस क्यों नहीं आए।

ब्रजभूमि के कोई भी दो व्यक्ति यदि इक्ट्ठे बैठे होते तो वे कृष्ण के मथुरा से न आने की बात ही करने लगते थे। प्रत्येक स्थान पर सब परस्पर यही प्रश्न करते थे कि दोनों कुमार अब तक लौट कर क्यों नहीं आए।

पृष्ट ५९-६०—आवासों में ... ... देखते थे ॥५-६॥

शब्दार्थ—सुपरिसर=मैदान। विपणि=दुकान। ढोटे=लड़के।

भावार्थ—घरों में तथा मैदानों में, दरवाजों में तथा बैठकों में, बाजारों में तथा दुकानों में, मन्दिरों तथा मठों में, बाग-बगीचों तथा वनों में और मार्ग तथा अमार्ग में अर्थात् प्रत्येक स्थान पर कृष्ण के वापिस आने के विषय में ही बातचीत हो रही थी।

श्रीकृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा के लिए अर्थात् उन्हें लौटता हुआ देखने के लिए उत्सुक व्यक्तियों की टोलियाँ मथुरा की ओर जाने वाले मार्ग पर प्रतिदिन कोसों तक जाती थीं। कृष्ण को आता हुआ देखने के उद्देश्य से अनेक ग्वाले ऊँचे-ऊँचे वृक्षों पर चढ़ जाते थे और कई घंटों तक वृक्ष पर बैठकर प्यासे नेत्रों से मार्ग जोहते थे।

पृष्ठ ६०—आके बैठी— ... ...भात दूँगी ॥७-८॥

शब्दार्थ मोखों=खिड़कियों । तन्वंगी=क्षीण शरीर वाली स्त्री ।

भावार्थ—अपने घरों की खुली छतों पर, खिड़कियों में से तथा मार्ग पर बने प्रकाशवान रोशनदानों में चिन्तायुक्त तथा व्याकुलता से पागल स्त्रियाँ बैठी थीं । उनके दोनों नेत्र वन की ओर जाने वाले मार्ग को देख रही थीं ।

यदि किसी के घर में कौआ आकर बैठ जाता तो उस घर की क्षीण-काय गृहिणी (कृष्ण के विरह से क्षीण) कौए से कहती हे कौए ! क्या कृष्ण आगए हैं यदि आगए हैं तो तू बैठ, मैं तुझे खाने के लिए प्रत्येक दिन दूध और भात दूंगी ।

आता कोई ... ... गेह आये ।।९-१०।।

शब्दार्थ—रेणुओं=धूलि कणों ।

भावार्थ—यदि कोई व्यक्ति मथुरा की ओर से आता दिखाई देता तो सब बड़े दुःख के साथ उससे अनेक बातें पूछते । इसी प्रकार यदि कोई यात्री मथुरा की ओर जाता दिखाई देता तो सब उसके द्वारा अनेकों संदेश श्रीकृष्ण के नाम भेजते थे ।

ब्रजभूमि के सब फूल-पत्तों, वृक्षों, बेल व लताओं, भवनों, मार्गों तथा वाटिकाओं के कण-कण से सदैव एक ही शब्द निकल रहा था कि मेरे प्यारे कृष्ण अब तक घर वापिस क्यों नहीं आए ।

पृष्ठ ६०-६१—यदि दिन ... आ रहे हैं ।।११-१२।।

शब्दार्थ—नियत=नियुक्त ।

भावार्थ—कृष्ण के वियोग में यदि दिन कट जाता तो रात्रि काटे नहीं कटती थी । यदि रात्रि व्यतीत हो जाती तो दिन बिताना मुश्किल हो जाता तथा कल्प के समान बड़ा दिखाई देता । क्षण-प्रतिक्षण यशोदा व्याकुल होती जा रही थीं तथा यही रटती रहतीं थीं कि कृष्ण नहीं आए, कृष्ण नहीं आए ।

अपने प्रिय पुत्र का आगमन जानने के लिए वे अनेकों व्यक्तियों को मार्ग में देखने को भेजती थीं । दोनों कुमार कुशलतापूर्वक आए हैं, ऐसा समाचार सुनाने के लिए अनेकों व्यक्ति नियुक्त कर दिए थे ।

पृष्ठ ६१—दिन-दिन··· — —सजा के ॥१३-१४॥

शब्दार्थ—पथस्रम=मार्ग की थकावट। बार=दिन।

भावार्थ—यशोदा सारे दिन दरवाजे पर बैठी रहती थीं। कृष्ण का मार्ग देखते-देखते वे सारा दिन व्यतीत कर देतीं। यदि कोई यात्री आता दिखाई देता तो उससे यही पूछती थी कि मार्ग में उसने कृष्ण को आता तो नहीं देखा।

अपने पुत्र की मार्ग की थकावट को दूर करने के लिए वे अनेक मेवे, सरस फल, बहुत सी मधुर मिठाई, दूध तथा अनेक व्यंजनों को बर्तनों में सजाकर प्रतिदिन रखती थीं।

जब कुँवर ··· ··· रुद्ध होता ॥१५-१६-१७॥

शब्दार्थ—पुर-बनिता=ग्राम-वधू।

भावार्थ—जब सारा दिन बीत जाता और कृष्ण न आते तो दुःखी होकर वह सब सामान बाँट देती थी। दिन-प्रतिदिन हृदय में निराशा बढ़ती जाती थी और नेत्रों में अन्धकार छाता जाता था।

जब कोई ग्राम-वधू आकर पूँछती कि कोई संदेश आया है तो वे उस का मुँह पागल की तरह देखती थीं। यदि कभी वह कुछ कहना भी चाहतीं तो नहीं कह पाती थीं क्योंकि उनका गला शोक के कारण अवरुद्ध हो जाता था।

पृष्ठ ६१-६२—यदि कुछ ··· ··· फाड़ देगी ॥१७-१८॥

शब्दार्थ—विमना=उदास। रव=शोर।

भावार्थ—यदि घर की दासियाँ उन्हें कुछ समझाने का प्रयत्न करती तो अत्यन्त व्याकुल हो जातीं और उस समझाने-बुझाने पर ध्यान नहीं देती। दिन-प्रतिदिन यशोदा अपने शरीर की सुध-बुध भूलती जा रही थीं और अत्यन्त उदास व चिन्ताकुल बनती जा रही थीं।

यदि दासियाँ दही-मंथन को बैठती तो मंथन से उत्पन्न शब्द उन्हें बेचैन कर देता (क्योंकि दही बिलोने से कृष्ण की याद आ जाती थी)। वे दासियों का दही-बिलोना रोक देतीं और कहतीं क्या तुम सब मिलकर मेरे

कानों को फोड़ देगी। तात्पर्य यह कि दही बिलोने का स्वर उन्हें कर्कश लगता था।

पृष्ठ ६२—दुख-वश ... ... को यशोदा ॥१६-२०॥

शब्दार्थ—शारिकायें=मैनाएँ। यजन=यज्ञ।

भावार्थ—कृष्ण विछोह के दुःख के कारण सारे कार्य प्रायः बन्द हो गए थे। सब व्यक्ति अपना मन मसोसे घर पर पड़े रह कर समय काट देते थे। यशोदा के कष्ट को देखकर मैनाएँ भी चुप थीं और सारे घर में उदासी छाई हुई थी।

यशोदा प्रतिदिन अनेकों देवताओं से मिन्नतें माँगती थीं और ब्राह्मणों से बहुत से यज्ञ कराती थीं। वे प्रतिदिन घर पर किसी ज्योतिषी को बुलातीं और पूंछती कि कृष्ण कब आयेंगे।

सदन ढिग ... ... दृगों को ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—ढिग=निकट। अयुत=दस हजार।

भावार्थ—घर के निकट यदि पत्ता भी हिलता अर्थात् अल्प शब्द भी होता तो यशोदा बड़ी उत्सुकता से कान उठाकर सुनने लगतीं (बड़े ध्यानपूर्वक सुनने लगती)। अगर मार्ग पर कुछ धूल उड़ती दृष्टिगोचर होती तो वे हजार नेत्र लगाकर अर्थात् अत्यन्त ध्यान से देखने लगतीं। तात्पर्य यह कि हर साधारण बात से उन्हें ऐसा लगता कि बस कृष्ण आ गए।

यदि कोई व्यक्ति घर की ओर शीघ्रता से आता होता तो वे दोनों हाथों से अपना हृदय थाम लेतीं (शायद वह उन्हीं के पास कृष्ण का समाचार सुनाने आ रहा है)। परन्तु जब वह घर से आगे दूसरी ओर जाता दृष्टिगोचर होता तो वे अपने हाथों को हृदय से उठाकर नेत्रों पर रख लेती थीं अर्थात् नेत्रों को बन्द कर लेती थीं जिससे जाते हुए पथिक को न देख सकें।

अलंकार—२१वें पद में उपमा है।

पृष्ठ ६२-६३—मधुवन ... ... कामिनी का ॥२३-२४॥

शब्दार्थ—वर्द्धिता=बढ़ रही थी।

भावार्थ—यदि उन्हें मथुरा की ओर से शीघ्रता से आता आकाश में कोई पक्षी दिखाई देता तो वह उसे ऐसी कातर दृष्टि से देखती कि उन्हें देखने वाले के हृदय के खंड-खंड हो जाते।

यशोदा की केवल दृष्टि ही मार्ग पर लगी हो, ऐसा नहीं था बल्कि उनके हृदय में कृष्ण के आने की इच्छा बढ़ती ही जाती थी। यशोदा के शरीर का रोम-रोम प्रतिक्षण अपने प्यारे पुत्रों की प्रतीक्षा कर रहा था।

पृष्ठ ६३—प्रतिफल ... ... कान्ति वाला ॥२५॥

शब्दार्थ निमिष=क्षण।

भावार्थ—उनके नेत्र प्रत्येक क्षण (हर समय) कृष्ण को देखना चाहते थे। हर समय उसी साँवली मूर्ति का ध्यान बना रहता था। नन्द की पत्नी यशोदा प्रतिक्षण यही चाहती थीं कि कृष्ण आएँ और वे कृष्ण का मेघ के समान सलोना व दीप्तिमान मुख देख सकें।

अलकार—उपमा।

रो-रो चिन्ता ... ... वातायनों से ॥२६-२७॥

शब्दार्थ—जलद-वपु=मेघ जैसे शरीर वाले, कृष्ण। सद्‌गंध=सुगन्धि।

भावार्थ—राधा रो-रोकर चिन्तापूर्वक अपना दिन व्यतीत कर देती थीं। उनके नेत्रों में सदा जल भरा रहता था और पगली सी लगती थीं। जिस प्रकार मेघ-दर्शनों के लिए पपीहे बेचैन होते हैं, उसी प्रकार अत्यन्त शोभावान कृष्ण को देखने के लिए राधा उत्सुक थीं। उनके हृदय में कृष्ण को देखने की लालसा व व्यथा बढ़ती ही जाती थी।

एक दिन वह अपने घर में उदास अकेली बैठी थीं, उनके दोनों नेत्रों से अश्रुजल पृथ्वी को भिगो रहा था। उसी समय प्रातःकाल बहने वाली सुगन्धित वायु ने खिड़कियों में से इस घर में प्रवेश किया।

आके पूरा ... ... स्निग्धता थी ॥२८-२९॥

शब्दार्थ—सौरभीला=सुगन्धित। पक्ष्म=पलकें। क्षिति=पृथ्वी।

भावार्थ—उस वायु ने सम्पूर्ण घर को सुगन्धित कर दिया और इस

प्रकार राधा के शरीर का सारा संताप समाप्त करना चाहा। राधा के अश्रुपूर्ण नेत्रों की पलकों में जो जल की बूंदें विद्यमान थीं, उन्हें इस वायु ने धीरे-धीरे बड़ी चतुराई से पृथ्वी पर गिरा दिया।

वायु की ये दुलार भरी चेष्टाएँ राधा को तनिक भी अच्छी न लगीं, इसके विपरीत शत्रुतापूर्ण कार्य प्रतीत हुआ। वायु की मन को लुभाने वाली सुगन्धि राधा के चित्त की शान्ति को नष्ट कर रही थी अर्थात् कृष्ण के विरह के कारण सुगन्धित वायु कष्ट पहुंचा रही थी। वायु का माधुर्य राधा के हृदय को व्याकुल कर रहा था।

विशेष—प्रकृति का उद्दीपक रूप विरह में अधिक कष्टकर लगता है।

पृष्ठ ६४—संतापों को ... ... मुझे है ॥३०-३१॥

शब्दार्थ—कालिन्दी=यमुना। पुलिन=किनारा। सीकरों=कणों, बूंदों। पापिष्ठे=पापिन।

भावार्थ—अपने कष्टों (विरहाग्नि) को अधिक बढ़ता देखकर, दुःखी होकर राधा उस सुगन्धित वायु से कहने लगीं - हे प्रातःकालीन प्यारी वायु! मुझे इतना क्यों सता रही है। क्या कालगति की क्रूरता के साथ-साथ तू भी दुष्टा हो गई है (जो मुझे कष्ट दे रही है)।

हे वायु! तू यमुना के सुन्दर तट पर भ्रमण करती सजल हो गई है। प्यारे-प्यारे पुष्पों का चुम्बन ले ले कर तू सुगन्धित हो गई है। तूने जलकणों का भार उठाया हुआ है अर्थात् तू प्रत्येक दृष्टि से श्रेष्ठ और सुखकारी है। हे पापिन! इसके पश्चात् भी तू मुझे दग्ध कर रही है।

विशेष—जलकण युक्त व सुगन्धित वायु शीतलता पहुंचाने वाली होती है परन्तु राधा को वही कष्टकर लग रही है।

क्यों होती है ... ... तू सुना दे ॥३२-३३॥

शब्दार्थ—प्रणत जन=सज्जन व्यक्ति।

भावार्थ हे पवन! तू इतनी निष्ठुर क्यों है और मेरी व्याकुलता को क्यों बढ़ाए जा रही है। (तू मेरे लिए नई तो नहीं है) पुरानी परिचित है और मुझे अत्यन्त प्यारी है। मेरी बात सुन, मुझे मत सता और अपने

इस उल्टे (सुख न पहुँचा कर दुःख पहुंचाने के) व्यवहार को त्याग दे। (क्या तू नहीं जानती) कि सज्जन व्यक्तियों के कष्ट दूर करने से बड़ा पुण्य मिलता है।

हे पवन ! मेरे प्यारे कृष्ण जो मेघ जैसे सलोने हैं तथा जिनके नेत्र कमल जैसे प्रिय हैं, न तो मथुरा से स्वयं वापिस आए और न ही उन्होंने कोई सन्देश ही भेजा। मैं उनके विरह में रो-रोकर पागल हो रही हूं इस लिए तू कृष्ण के पास जा मेरा सारा कष्ट उन्हें सुना दे।

अलंकार - ३३वें पद में उपमा।

हो पाये ... ... बना दे ॥३४-३५॥

शब्दार्थ—उन्मूलती=नष्ट करती। थल=स्थल।

भावार्थ—यदि तुझ से यह नहीं होने पाये अर्थात् मेरे कष्टों को नहीं सुना पाये तो अपने चतुर अभिनय से मेरे रोने, व्याकुल होने आदि को ही दिखा दे अथवा मेरे प्रिय के पास से कोई सुन्दर वस्तु ही ले आ। हाय ! मैं मरी जा रही हूं, मेरे प्राणों की रक्षा कर।

हे पवन ! तू प्रत्येक स्थान पर जा सकती है। तेरी गति अत्यन्त तेज है। तू सरल प्रकृति की है और दूसरों के हृदयों का कष्ट मिटाती है। हे पवन ! मुझे तुझ पर बहुत विश्वास है। हे बहिन ! किसी न किसी प्रकार मेरी बिगड़ी बात बना दे अर्थात् मेरा सन्देश कृष्ण तक पहुंचा दे।

पृष्ठ ६५—कालिन्दी ... ... विश्राम लेना। ॥३६-३७॥

शब्दार्थ – धवल-गृह=श्वेत भवन। प्रशोभी=शोभायमान।

भावार्थ - यमुना के तट पर अनेक रमणीक बागों से सम्पन्न ऊँचे-ऊँचे श्वेत भवनों की श्रेणियों से शोभायमान, अत्यन्त अनोखा नगर मथुरा है। उसी नगर में मेरा प्राणेश्वर है। हे पवन ! मेरा यह सूना घर छोड़ कर तू शीघ्र ही वहाँ जा।

हे पवन ! जैसे ही मेरा घर छोड़ कर तू कुछ ही आगे बढ़ेगी, मार्ग में अनेक सुन्दर-सुन्दर बाग-वाटिकाएँ मिलेंगी। उन वाटिकाओं में प्यारी-प्यारी छाया विद्यमान होगी जो तुझे अपने मधुर शब्द से मोहित कर देगी।

तेरा दिल वहाँ रुकना चाहेगा पर मेरे कष्ट को ध्यान में रखते हुए तू वहा विश्राम करने के लिए रुकना नहीं ।

विशेष—छाया कोई शब्द नहीं करती परन्तु छाया-ग्राच्छादित उन कुंजों में विद्यमान पक्षी मधुर शब्द करते हैं ।

थोड़ा ग्रागे ... ... सा बनाना ।।३८-३९।।

शब्दार्थ—रव=कलनाद ; मुह्यमाना=मोहित होती हुई । परस=स्पर्श ।

भावार्थ—हे पवन ! ग्रागे जाने पर तुझे वृन्दावन मिलेगा । यह वृन्दावन पक्षियों के मधुर कलनाद से गुंजित, सुन्दर पुष्पों से सज्जित, ग्रनेक सुन्दर वृक्ष व लताग्रों से शोभायमान तथा मन मोहने वाला है । इस सुन्दर वन से मोहित होकर वहीं रुक नहीं जाना, ग्रागे बढ़ना ।

जाते समय यदि मार्ग में कोई थका हुग्रा यात्री दिखाई दे तो उसके पास जाकर उसके कष्टों को नष्ट करना । तू उसके शरीर को धीरे-धीरे स्पर्श करना ग्रौर उसकी उष्णता हर लेना । (तू पुष्पों की सुगन्ध से सुगन्धित होगी), इस सुगन्ध से थके हुए यात्रियों को प्रसन्नचित करना ।

संलग्ना ... ... मिटाना ।।४०-४१।।

शब्दार्थ—निर्धूली=धूल-रहित, स्वच्छ । विकृत=ग्रस्त-व्यस्त ।

भावार्थ—सुख प्रदान करने वाले तथा थकावट दूर करने वाले जल-कणों से भरपूर होकर तथा ग्रनेक पुष्पों की ग्रानन्ददायक सुगन्धि लेकर तथा स्वच्छ होकर प्रस्थान करना । क्रोधित ग्रर्थात् तेज मत होना जिससे मार्ग में यात्री शान्ति प्राप्त कर सकें ।

हे पवन ! मार्ग में यदि कोई लज्जाशील महिला यात्री दृष्टिगोचर हो तो उसके वस्त्रों को ग्रस्त-व्यस्त मत करना । इसके विपरीत यदि वह थकी दिखाई दे तो ग्रपने ग्रंक में लेकर उसकी क्लान्ति को दूर करना । उसके होठों तथा कमल समान सुन्दर मुख की मलीनता को नष्ट कर देना ।

ग्रलंकार—४१वें पद में चौथी पंक्ति में उपमा ।

पृष्ठ ६६—जो पुष्पों ... ... नचाना ।।४२-४३।।

शब्दार्थ—केलि=प्रेम क्रीड़ा ।

भावार्थ—हे पवन ! यदि भ्रमर-भ्रमरी का जोड़ा पुष्पों पर आनन्द से बैठा रसपान कर रहा हो तो सज्जनता दिखाना अर्थात् उन्हें उड़ाना मत। ध्यान रखना कि कोई पुष्प थोड़ा सा भी न हिले (अन्यथा वे उड़ जायेंगे और उनके प्रेम-आलाप में बाधा होगी)। और उन्हें बिलकुल भी घबराहट न होने पाये। उनकी प्रेम क्रीड़ा में कोई विघ्न नहीं होवे।

यदि तू यमुना के किनारे किसी स्थान से निकले तो उसके नीले जल का स्पर्श करके अपने शरीर की उष्णता को शान्त करना। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो यमुना किनारे पर कमलों से क्रीड़ा करना या (तीव्र चलकर) छोटी-छोटी सुन्दर तरंगें उठाना।

प्यारे-प्यारे ... ... सर्वांग होना ॥४४-४५॥

शब्दार्थ—किशलय=कोंपल। कामी=इच्छुक।

भावार्थ—यदि तू वृक्षों की प्यारी-प्यारी कोंपलों को कभी हिलाए तो इतना मन्द-मन्द कि वे कोंपलें टूट न जायें। यदि तू वृक्षों की शाखाओं और पत्तों से क्रीड़ा करे तो ध्यान रखना कि पक्षियों के बच्चों को तनिक भी कष्ट न पहुंचे।

यदि मार्ग में कोई रोगी पड़ा हो जिसे तेरी जैसी आनन्ददायक मधुर पवन की आवश्यकता हो तो मेरी कष्टदायक अवस्था भूल कर उस रोगी के सम्पूर्ण अंगों को शान्ति प्रदान करना तथा सारा क्लेश दूर करना।

कोई क्लान्ता ... ... वनों में ॥४६-४७॥

शब्दार्थ—वापिका=बावड़ी। वीथिका=वाटिका।

भावार्थ—यदि श्वेत पर कोई थकी हुई किसान की पत्नी दृष्टिगोचर हो तो उसके शरीर को धीरे-धीरे स्पर्श करके उसकी थकावट दूर कर देना। यदि कोई बादल आकाश में जा रहा हो तो उसे उड़ा कर नीचे ले आना और इस प्रकार खेत में छाया करके धूप से तप्त उस स्त्री को सुख पहुंचाना।

हे पवन ! बागों में, बगीचों में, बावली और तालावों में, पुष्पों से आच्छादित नये-नये वृक्षों में, पत्तों से लदे पौधों में तुम ठहर मत जाना

(क्योंकि ये सब मनमोहक होते हैं)। वाटिकाओं, कमलों, वनों तथा वन-मार्गों पर आसक्त होकर वहीं रुक मत जाना।

पृष्ठ ६७—जाते-जाते … … देख जाना ॥४८-४९॥

शब्दार्थ—अर्क=सूर्य। अटन=भ्रमण। उद्युक्ता=शीघ्रता।

भावार्थ—चलते-चलते मथुरा नगरी पहुंच जाना। अलौकिक सुन्दर नगरी मथुरा को उत्सुकता से देखकर मोहित हो जाना। पर्वत जैसे ऊंचे भवनों तथा उन पर रखे हुए सूर्य जैसी कान्ति वाले कलशों को देखकर तुझे आश्चर्य होगा।

यदि तेरी इच्छा हो तो मकानों के पर्वत-शिखर जैसी मुंडेरों पर जा कर अनुपम छटा वाली ध्वजाओं को उड़ाना। महलों में भ्रमण करना तथा आंगनों में विहार करना और शीघ्रता से देवताओं जैसे घर देखना।

अलंकार—४८वें पद में उपमा।

कुंजों बागों … … … मोह लेना ॥५०-५१॥

शब्दार्थ—वास=श्वास। कान्तता=सुन्दरता।

भावार्थ—कुंजों, बागों, वनों, यमुना के किनारों या घरों में किसी कामिनी के मुख की सुन्दर सुगन्धित श्वासों की गन्ध पर मुग्ध होकर कोई भ्रमर उसे सता रहा हो तो उसे बड़ी सरलता से डाँट कर भगा देना।

तू सुन्दर नगरी मथुरा के उद्यानों में सुन्दर मालिनों को पायेगी जो पुष्पों के आभूषणों से अलंकृत होगीं। वे अपने पतियों के समान ही कार्य में व्यस्त होंगी। उनमें से जो थक जाएँ उन्हें अपनी मधुर चाल से मोह लेना।

जो इच्छा हो … … … हो बजाना ॥५२-५३॥

शब्दार्थ- किम्वा=अथवा। रुचिर=आकर्षक।

भावार्थ—यदि तेरी इच्छा हो तो उन स्त्रियों के शरीर पर अलंकृत पुष्पों के आभूषणों से सुगन्धि लेकर उनके पतियों को मोहित करना। प्रेम का भेद जानने वाली पवन! जब तू मेरे प्यारे कृष्ण के गगन-चुम्बी महल में जाए तो उपाय सोचकर, इस सुगन्धि को छोड़ देना।

पूजा के समय मथुरा के मन्दिरों में जाना। वहाँ बज रहे अनेक वाद्य-यन्त्रों के मृदुल शब्द को और अधिक मधुर बनाना अथवा किसी आकर्षक वृक्ष के शब्द करने वाले फलों को मन्द गति से बजाना जिससे माधुर्यपूर्ण स्वर निकलने लगे।

पृष्ठ ६८—नीचे फल ... ... स्वच्छता हैं ॥५४-५५॥

शब्दार्थ—उपल-गठित =पत्थर को बनी। वज्र=हीरा।

भावार्थ—यदि किसी पुष्पों से लदे वृक्ष के नीचे भक्त खड़े हों अथवा किसी देवता की पत्थर-निर्मित्त मूर्त्ति रखी हो तो तू शालीनता से उस वृक्ष की शाखाओं को हिलाना और इस प्रकार पुष्प-वर्षा करके पूजनीयों की पूजा करना।

हे पवन! तुझे सुन्दर नगर (मथुरा) में एक अद्‌भुत स्थान मिलेगा। वहाँ अनेक राजमहल शोभायमान होंगे। उद्यान इतने सुन्दर होंगे जैसे सौन्दर्य को वहाँ पर एकत्रित कर दिया हो। तालाबों की निर्मलता हीरों से भी अधिक होगी।

अलकार—५५वें पद में उपमा है।

विशेष हीरे को कठोरता के कारण वज्र कहा गया है।

तू देखेगी ... ... सी प्रभा है ॥५६-५७॥

शब्दार्थ—जलद-तन=मेघ जैसे काले शरीर वाले, कृष्ण। तद्‌गता=वहाँ जाकर। लोने=सलोने। उत्कीर्णकारी=फैलाने वाले।

भावार्थ—वहाँ जाकर तू मेघ जैसे शरीर वाले कृष्ण को पायेगी। उनके सलोने नेत्रों से प्रकाश फैल रहा होगा। उनके सुन्दर शरीर की मुद्रा सज्जनता की प्रतिमूर्त्ति होगी। उनकी सरल वाणी अमृत की तरह सरस होगी।

उनके शरीर का श्याम-वर्ण नील-कमल की पंखुड़ी के समान है। वे कमर में सुन्दर पीला वस्त्र (पीताम्बर) पहनते हैं। फैले हुए केश उनके मुख की आभा को वृद्धि प्रदान करते हैं। सुन्दर वस्त्रों में उनके निर्मल शरीर की कान्ति फूटी-सी पड़ती है।

अलंकार— दोनों पदों में उपमा है ।

साँचे ढाला ... ... कंठ होगा ।।५८-५९।।

शब्दार्थ—वपु=शरीर । कलभ-कर=हाथी की सूँड । आपीड़=मुकुट । उभय श्रुति=दोनों कान । केयूर=बाजूबन्द । कम्बु=शंख ।

भावार्थ —उनका सारा शरीर साँचे में ढले हुए के समान अलौकिक सुन्दरता से भरपूर है । कृष्ण के शरीर से आने वाली पुष्पों की सी सुगन्धि प्राणों को जीवन प्रदान करने वाली है । उनके दोनों कन्धे सुन्दर बैल के कन्धों के समान आकर्षक हैं। उनकी विशाल भुजाएँ हाथी की सूंड की तरह शक्ति का भंडार हैं ।

उनके मस्तक पर राजाओं का सुन्दर मुकुट विद्यमान होगा । उनके दोनों कानों में सोने के कुण्डल शोभायमान होगे । उनकी भुजाओं में अनेक रत्नजड़ित बाजूबन्द होंगे । उनका शंख जैसा गला मोतियों की माला से सुशोभित होगा ।

अलंकार—दोनों पदों में उपमा तथा ५८वें में उत्प्रेक्षा भी है ।

प्यारे ऐसे ... ... पुष्पिता सी ।।६०-६१।।

शब्दार्थ—अपर=अन्य । प्रथित=प्रसिद्ध । राका=पूर्णिमा ।

भावार्थ—यदि वहाँ कृष्ण जैसे (सुन्दर व शाक्तिशाली) अन्य व्यक्ति भी बैठे हों तो भी तुम देवताओं जैसे प्रसिद्ध गुण वाले कृष्ण को पहचान लेना । यद्यपि उनकी आयु बहुत कम है तथापि वे अत्यन्त तेजस्वी हैं । पूर्णिमा का चन्द्रमा तारों में नहीं छिप सकता ।

जिस स्थान पर कृष्ण बैठे होंगे वहाँ शालीनता विराजमान होगी । सभी उपस्थित व्यक्ति प्रेमपूर्वक कृष्ण का मुख देख रहे होंगे । कृष्ण का मुख देखने से उन्हें खजाना प्राप्त करने व रत्न लूटने का आनन्द प्राप्त हो रहा होगा । उनके हृदयरूपी क्यारी में आनन्दरूपी पुष्प खिल रहे होंगे ।

अलंकार—६०वें पद में रूपक ।

पृ० ६९ बैठे होंगे ... ... होंगे बनाते ।।६२-६३।।

शब्दार्थ—दुर्वृत्तता=दुराचार । कलित कर=सुन्दर हाथ ।

भावार्थ—उनके निकट जितने व्यक्ति बैठे होंगे वे सभी शान्त व सभ्य होंगे। प्रत्येक पुरुष को मर्यादा का पूरा-पूरा ध्यान होगा। सभी के हृदयों पर कृष्ण का पूर्ण प्रभाव होगा जिसके कारण कोई भी दुराचार की बात नहीं कह सकेगा।

उन सबसे कृष्ण मधुर वार्त्तालाप कर रहे होंगे। सबके हृदय में आनन्द की लता लहलहा उठती होगी। वे उपस्थित व्यक्तियों को अपनी सुन्दर दृष्टि से ही गुणवान बना रहे होंगे मानो लोहे को स्पर्श करके सोना बना रहे हों अर्थात् दुष्ट व्यक्ति भी उनके प्रभाव से सज्जन बन जाते होंगे।

सीधे जाके ... ... विपन्ना ॥६४-६५॥

शब्दार्थ—स्निग्धता=शालीनता। मुरज=वाद्य-यन्त्र। विपन्ना=विकल।

भावार्थ—सर्वप्रथम तू महल के सुन्दर उद्यान में जाकर अपने शरीर में रही-सही उष्णता को जल के स्पर्श से दूर कर लेना। अपनी धूल को त्याग देना और पुष्पों के पराग से युक्त हो जाना। तत्पश्चात् कृष्ण के महल में शालीनता से प्रवेश करना।

यदि मेरे प्रिय कृष्ण के पास मृदुल बीन बज रही हो अथवा कोई मुरली व अन्य वाद्य-यन्त्र बज रहा हो अथवा गायकों की मण्डली मृदुल स्वर से गा रही हो तो संगीत-लहरी तनिक भी विकृत न होने पाए।

पष्ठ ७०—जाते ही — देख जाना ॥६६-६७॥

शब्दार्थ—गण्ड=गाल। दुकूलादिकों=दुपट्टा आदि। व्यापार=कार्य।

भावार्थ—वहाँ जाते ही तू कृष्ण के कमलदल जैसे सुन्दर पैरों का स्पर्श करके पवित्र हो जाना। उनके गालों पर फैली हुई केश-लटाओं को धीरे-धीरे हिलाना। उनके दुपट्टे को उड़ा-उड़ा कर खेल करना। उनके शरीर को मन्द-मन्द स्पर्श करके उनके हृदय में प्रेम उत्पन्न करना।

तेरे में वाक्शक्ति का गुण तो है नहीं, जो मेरी विरह-व्यथा को कृष्ण को सुना सके। इसलिए अपना कार्य (मेरी व्यथा बताने का कार्य)

अपनी तीक्ष्ण बुद्धि व अन्य उपायों से करना । यदि श्रीकृष्ण अपने महल में बैठे हों तो उस भवन में लगे चित्रों को ध्यानपूर्वक देख लेना ।

जो चित्रों .. ... कराना ।।६८-६९।।

शब्दार्थ– विरह-विधुरा=वियोगिनी ।

भावार्थ—यदि उन चित्रों में कोई चित्र विरह से दुःखी रमणी का हो तो उस चित्र को निकट जा कर इस प्रकार हिलाना कि प्यारे कृष्ण चौंक कर उधर ही देखने लगें । आशा है उस विरहणी के चित्र को देख कर कृष्ण को हमारी याद आ जायेगी ।

यदि उन चित्रों में कोई चित्र बाग-बगीचे का हो जिसमें अनेक नर-नारी पागल से घूम रहे हों तो उसे भी निकट जा कर इस प्रकार हिलाना कि दिव्य कृष्ण को व्याकुल ब्रजवासियों का ध्यान आ जाए ।

कोई प्यारा ... ... उत्कण्ठ होतीं ।।७०-७१।।

शब्दार्थ—क्वणित करना=बजाना । कीचकों=बाँसों ।

भावार्थ यदि घर में कोई सुन्दर पुष्प कुम्हलाया हुआ पड़ा हो तो उसे उड़ा कर प्यारे कृष्ण के चरणों पर ला देना । हे पवन ! इस प्रकार तू कृष्ण को बता देना कि एक पुष्प सी बालिका उदास होकर तुम्हारे चरण-कमलों को चूमना चाहती है ।

विशेष--यह प्रेम-निवेदन का अनुपम ढंग है ।

यदि प्यारे कृष्ण सुन्दर उद्यान या बगीचे में खड़े हों तो बाँसों के छेदों में घुस कर उन्हें बाँसुरी की तरह बजाना । इससे उन्हें सारी गोपिकाओं की याद आ जायेगी जो उनकी वंशी सुनने के लिए अत्यधिक उत्सुक रहती थीं ।

अलंकार—दूसरे पद में उपमा ।

पृष्ठ ७१—ला के फूले ... रोमांचिता हूं ।।७२-७३।।

शब्दार्थ—अंभोजनेत्रा=कमल जैसे नेत्र वाली । नीप=कदम्ब ।

भावार्थ—हे पवन ! तू कृष्ण के सम्मुख विकसित कमल को लाकर व्याकुलता से उसे थोड़ा-थोड़ा जल में डुबोना । हे बहन ! इस प्रकार तुम

कृष्ण को बता देना कि एक कमल जैसे नेत्र वाली रमणी अपने नेत्रों को विरहाग्नि के अश्रु-जल में डुबा रही है।

किसी कदम्ब के पुष्प को धीरे-धीरे उड़ा कर लाना और प्रियतम के चंचल नेत्रों के सम्मुख डाल देना। इस प्रकार उन पर यह प्रकट कर देना कि किस प्रकार मैं आशंकाओं से भर कर प्रतिदिन विरह से दुःखी होती रहती हूं।

विशेष कवि-परिपाटी में रोमांच की उपमा कदम्ब के फूल से दी जाती है।

बैठें नीचे ... नित्य जाना ॥७४-७५॥

शब्दार्थ—चिन्ता-विजित=चिन्तित।

भावार्थ—जिस वृक्ष के नीचे कृष्ण बैठे हों, उसी वृक्ष का पत्ता उनके नेत्रों के निकट लाकर हिलाना और इस प्रकार युक्ति से प्रियतम को मेरे चिन्तित हृदय का दुःखी होकर काँपना बता देना।

यदि पृथ्वी पर कुम्हलाई वेल पड़ी सूख रही हो तो उसे कृष्ण के चरणों के पास डाल देना। इस प्रकार स्पष्ट रूप से बता देना कि उनके प्रेम से रहित होकर मैं किस प्रकार कुम्हला कर दिन-प्रतिदिन सूखती जा रही हूं।

कोई पत्ता ... सकूँगी ॥७६-७७॥

शब्दार्थ प्रोषिता=जिसका पति विदेश में हो।

भावार्थ—यदि किसी नए वृक्ष का कोई पत्ता पीला पड़ गया हो तो उसे प्रियतम के नेत्रों के सम्मुख लाकर धीरे से संभाल कर रख देना। और इस प्रकार हम गोपिकाओं का प्रोषित-पतिका नायिकाओं की तरह विरहाग्नि से पीला पड़ना उन्हें बताना।

इस प्रकार मेरी सब पीड़ाएँ प्रियतम को बता देना और उनकी चरण-रज धीरे-धीरे उड़ा कर ले आना। यदि तू थोड़ी भी धूलि लाकर नहीं देगी तो मैं किस प्रकार अपने दुःखी हृदय को समझा सकूंगी।

पृष्ठ ७२—जो ला देगी ... उतफुल्ल होगा ७८-७९॥

शब्दार्थ- पूता=पवित्र। क्षरण करती=बरसाती। श्रवणपुट=कान।

भावार्थ—हे बहिन ! यदि तू प्रियतम कृष्ण की चरण-धूलि ला देगी तो तुझे बहुत पुण्य प्राप्त होगा। मैं उस धूलि को शरीर में लगा कर पवित्र हो जाऊँगी। यदि मैं इस धूलि को वक्षस्थल पर लगाऊँगी तो दिल की व्यथा दूर हो जायेगी मैं उसे सिर पर डालूंगी और आँखों में (काजल बना कर) डालूंगी।

विशेष—यह प्रेम की पराकाष्ठा का रूप है। प्रेमिका प्रियतम की धूलि को सर्वस्व मानती है।

हे पवन ! तू प्रिय का मधुर स्वर ही ला दे जो अत्यन्त मीठा है। उनके सहज स्वर से स्वर्गीय अमृत की वर्षा होती है। उस स्वर रूपी अमृत को यदि तू थोड़ा भी ला कर हमारे कान में डाल देगी तो मेरा शुष्क हृदय तरल हो उठेगा।

भीनी-भीनी ... ... एक ला दे ।।८०-८१।।

शब्दार्थ—सरसे=खिले। मूलीभूता=मूल। अंगरागादिक=शरीर पर मलने के प्रसाधन। विकच=खिला हुआ।

भावार्थ—तू खिले हुए पुष्पों को भी पुष्ट करने वाली, पृथ्वी पर कस्तूरी के यश का भी जो मूल है, श्रीकृष्ण के शरीर की ऐसी अनुपम सुगन्ध ला कर मुझे दे दे और मेरे व्यथित हृदय में शान्ति की धारा बहा दे।

यदि कृष्ण के शरीर पर लगे विभिन्न प्रसाधनों के कण गिर रहे हों तो उन्हें उड़ा कर धीरे-धीरे ले आ। यदि उनके गले में कोई सुन्दर पुष्प-माला सुशोभित हो तो प्रयत्न करके उसका एक खिला हुआ पुष्प ही ला दे।

विशेष—प्रेम की पराकाष्ठा का रूप है।

पूरी होवें ... ... थीं व्यथायें ।।८२-८३।।

शब्दार्थ—भूरि=अत्यधिक। चलित=चलायमान।

भावार्थ—हे पवन! यदि तू हमारी अन्य इच्छाएँ पूर्ण न कर सकती हो तो मेरी एक प्रार्थना अवश्य मान ले और चली जा। तू प्रियतम के कमल रूपी चरण-स्पर्श करके प्रेमपूर्वक आ जा। मैं तुझे हृदय से लगा लूंगी और जीवन पा जाऊँगी।

विशेष—विरह में प्रेम की पराकाष्ठा।

इस प्रकार राधा अत्यन्त दुःख और बड़ी भारी व्याकुलता से पागल बन कर प्रातःकाल की मृदुल वायु या सखी आदि को लेकर प्रतिदिन ही दुःख प्रकट करती थी। उसकी चिन्ताएँ उसके हृदय को चलायमान करती थीं और उसकी वेदना को बढ़ाती थीं।

———

सप्तम सर्ग

पृष्ठ ७३—ऐसा आया ... ... गोपादिकों को ॥१-२॥

शब्दार्थ—चित्रितों=जड़। तरणि=सूर्य। वासर=दिन।

भावार्थ- एक दिन आखिर ऐसा आया जो अत्यन्त हृदय-विदारक था। परमात्मा ने दुःखी ससार में जड़ व्यक्तियों को देखा। तपता और काँपता सूयं धीरे-धीरे निकला परन्तु (सूर्य निकलने पर भी) ब्रज-भूमि में शोक के काले बादल छाये रहे।

जिन दिनों प्रतिदिन कृष्ण की बाट जोही जाती थी उन्हीं दिनों एक ऐसा बुरा दिन आया जब सम्पूर्ण व्रजवासियों ने नन्द व गोप आदि व्यक्तियों को शोक में डूबे व आँखें झुकाए आते देखा।

अलकार—पहले पद में उत्प्रेक्षा व रूपक।

खो के होवे ... ... जाते गड़े थे ॥३-४॥

शब्दार्थ—प्रथित=मुख्य। महि=पृथ्वी।

भावार्थ—अपना सब कुछ नष्ट हो जाने पर जितना कोई दुःखी होता है या साँप अपनी मणि छिन जाने पर जितना व्याकुल होता है उससे भी अधिक पीड़ा गोकुल के राजा नन्द को हो रही थी जब वे अपने दोनों प्यारे कुमारों को छोड़ कर गाँव वापिस आ रहे थे।

शर्म के कारण वे मुख्य मार्ग पर नहीं चल पा रहे थे। जब कोई उन से कृष्ण का सन्देश पूँछता तो वे व्याकुल हो जाते। मार्ग छोड़ कर वे वृक्षों के बीच में से गाँव आ रहे थे। जैसे-जैसे वे निकट आते जाते थे वैसे वैसे वे शर्म के मारे पृथ्वी में गड़े जाते थे।

पृष्ठ ७४—पाँवों को वे ... ... कष्ट पाता ।।५-६।।

शब्दार्थ – संक्षुब्धा=प्रचण्ड ।

भावार्थ—नन्द जी के पाँव शोक के कारण उठ नहीं पा रहे थे मानो वे मनों के हो गए थे अर्थात् अत्यधिक भारी हो गए थे । इसलिए वे बहुत सँभल कर तथा शक्तिपूर्वक उन्हें उठाते थे । शायद वे इसलिए भारी हो गए थे जिससे नन्द जी घर में प्रवेश न कर सकें क्योंकि वहाँ शोक की प्रचण्ड धारा जोर से बह रही थी ।

नन्द रथ से उतर कर, सब को वहीं छोड़ कर, कुछ व्यक्तियों सहित घर जा रहे थे । नन्द का पागलों जैसा मुख जो भी देखता था अत्यधिक दु:खी हो जाता था ।

अलंकार—पाँचवे पद में उत्प्रेक्षा तथा छठे में उपमा ।

पृष्ठ ७४—आँसू लाता ... ... आता अकेले ।।७-८।।

शब्दार्थ—कृशित=दुर्बल । भयद=भयंकर । सूचिभेद्या=घनी । असिता=काली ।

भावार्थ—नन्द के आँसू गिराते हुए नेत्रों में निराशा स्पष्ट झलक रही थी । उनके मुख पर शोक का अन्धकार छाया हुआ था । उनके पैर भूमि पर सीधे नहीं पड़ रहे थे अर्थात् लड़खड़ा रहे थे । मानो वे चिन्ता द्वारा चलायमान हृदय की व्यथा को (टेढ़े-मेढ़े पैर रख कर) भूमि पर प्रकट कर रहे थे ।

भादों मास की अमावस्या की रात्रि गहन अन्धकार से भयंकर हो जाती है । जिस प्रकार बादल छा जाने से वह रात और भी अधिक काली हो जाती है उसी प्रकार पहले से शोकमग्न ब्रजवासियों ने जब पुत्रों वाले नन्द को अकेले आता देखा तो उनका शोक और बढ़ गया ।

अलंकार—८वें पद में उदाहरण ।

एकाकी ही ... ... साथ बोलीं । ९-१०।।

शब्दार्थ—कंत=पति । छिन्नमूला=टूटी हुई जड़ वाली ।

भावार्थ—जब यशोदा ने सुना कि नन्द अकेले ही घर आ रहे हैं

तो वह पागल सी द्वार पर दौड़ी गई। उसी समय शोकाकुल नन्द भी सामने से आ गए। दोनों के हृदय समान रूप से दुःखी थे।

नन्द के आते ही वे जड़कटी लता के समान मूर्च्छित होकर पति के चरणों के निकट गिर पड़ी। लोगों के प्रयत्नों से जब उन्हें होश आया तो वे रो-रोकर व्याकुल होकर पति से कहने लगीं—

अलंकार—१०वें पद में उपमा।

पृष्ठ ७५—प्रिय-पति ... ... कहाँ है ? ॥११-१२॥

शब्दार्थ—नवनलिनी=नई कमलिनी।

भावार्थ—हे प्रिय पति ! मेरा प्राणप्यारा कृष्ण कहाँ है ? मैं दुःख के सागर में डूब रही हूं, मुझे उबारने वाला कहाँ है ? अब तक मैं जिसे देख-देख कर जीवित हूं, वह मेरा आँखों का तारा कहाँ है ?

मैं हर क्षण जिसका मार्ग देख रही थी, रात-दिन मैं जिसके विषय में सोचती थी, जिसके गले में सुन्दर माला शोभायमान थी वह कमल जैसे नेत्रों वाला कृष्ण कहाँ है ?

अलंकार—पहले पद की दूसरी पंक्ति में रूपक व दूसरे पद की अन्तिम पंक्ति में उपमा।

मुझ विजित ... ... कहाँ है ? ॥१३-१४॥

शब्दार्थ—विजित-जरा=बुढ़ापे से पराजित अर्थात् वृद्धा। किशलय=कोंपल।

भावार्थ—मेरी वृद्धावस्था का एकमात्र आधार, मेरा सर्वस्व, अत्यन्त अनोखा, मुझ गरीब का एकमात्र धन, आँखों का प्रकाश जलपूर्ण मेघ जैसी आभा वाला कृष्ण कहाँ है ?

हे स्वामी, प्रतिदिन मैं जिसको गोद में लेकर ब्रह्मा द्वारा अंकित दुर्भाग्यपूर्ण रेखाओं का निराकरण करती थी जिसको अनोखा पीला वस्त्र (पीताम्बर) अत्यन्त प्रिय है और जो कोंपल जैसे कोमल अंग वाला है, वह कहाँ है ?

अलंकार—दोनों पदों में उपमा। १४वें की दूसरी पंक्ति में वृत्यानुप्रास।

वर-वदन ... ... का कहाँ है ? ॥१५-१६॥

शब्दार्थ — अंभोज = कमल। स्वर्ग-मंदाकिनी = आकाश-गंगा।

भावार्थ—जिसका खिले हुए कमल जैसा सुन्दर मुख देखकर ऐसा लगता था मानो आकाश का चन्द्रमा हाथ में आ गया हो, जिसके मधुर शब्द को सुनकर शुष्क नाड़ियों में रक्त का संचार हो जाता है, वह सबके हृदयों को हरने वाला कहाँ है ?

हे नाथ ! जो घर में अपने सरस वचनों से प्रतिदिन स्वर्गीय गंगा बहाता था। मेरे पुण्य कार्यों रूपी पृथ्वी पर जो अमृत का प्रवाह था वह नये मेघ जैसी अनोखी श्यामलता का कृष्ण कहाँ है।

अलंकार—१५वें में उपमा। १६वें पद में सांगरूपक। जल भरा बादल धरती को उर्वरा बनाता है और कृष्ण, यशोदा की 'पुण्य रूपी पृथ्वी' को उर्वरा बनाते थे।

पृष्ठ ७६ स्वकुल जलज ... सोता कहाँ है ॥१७-१८॥

शब्दार्थ —सौजन्य = सज्जनता। समुद्विग्न = अत्यन्त व्याकुल। कृति-सरसी = कर्म रूपी तालाब।

भावार्थ—अपने वंश रूपी कमल को विकसित करने वाला, मेरी अत्यन्त निराशा रूपी रात्रि को नष्ट करने वाला, व्रजवासी रूपी पक्षियों के समूह को आनन्दित करने वाला तथा सूर्य के समान तेजस्वी बलराम का भाई कृष्ण कहाँ है ?

जिसके मुख पर सज्जनता विराजती है तथा जिसका व्यवहार व चरित्र अनुपम व शिष्ट है, दूसरों के कष्ट देखकर जो अत्यन्त व्याकुल हो जाता है वह कर्म रूपी तालाब का निर्मल स्रोत कहाँ है ?

अलंकार—१७वें में उपमा व सांगरूपक, १८वें में रूपक।

निविड़तम ... ... प्यारा कहाँ है ? ॥१९-२०॥

शब्दार्थ —विधु = चन्द्रमा। चितेरा = चित्रकार। निर्जर = देवता।

भावार्थ —मेरा घर गहन अन्धकार से आच्छादित था परन्तु वह चन्द्रमुख की आभा देखते ही दूर हो गया। (कृष्ण का जन्म होते ही घर में

प्रसन्नता का प्रकाश फैल गया)। जिसे पाकर मेरा नारी-जन्म सफल हो गया है वह सुन्दर चित्रों का चित्रकार कहाँ है ?

हे प्रियतम ! मुझे अनेक प्रयत्नो से ये पुत्र मिला है। इसे प्राप्त करने के लिए मैंने अनेक कष्ट व विपत्तियाँ सही हैं। अनेक यज्ञ कराए हैं तथा देवताओं की पूजा की है : वह मेरा प्यारा कृष्ण कहाँ है ?

अलंकार—१९वें पद में रूपक है।

मुखरित ... कहाँ है ? ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—पिक=कोयल। मुखरित=गुंजरित।

भावार्थ—जो तोते के समान घर को गुंजरित करता था, जो वनों में पक्षियों की तरह चहचहाता था, जो बगीचे में कोयल का-सा स्वर सुनाता था वह अनेक प्रकार के स्वरों का निर्माण करने वाला कहाँ है ?

जिसके स्वर को सुनकर मृगादि पशु भी मोहित हो जाते थे, वृक्षों की हरियाली भी अलौकिक रूप धारण कर लेती थी। पुष्पों की क्यारियाँ भी रोमांचित हो उठती थीं, उस मधुर बाँसुरी को बजाने वाला कृष्ण कहाँ है ?

अलंकार—२१वें पद में उपमा।

पृष्ठ ७७—जिस प्रिय मोती कहां है ? ।२३-२४॥

शब्दार्थ - तमवलित=अन्धकार से परिपूर्ण। शारिक=मैना। स्वाती=नक्षत्र।

भावार्थ—जिस प्रिय कृष्ण को खोकर सारा गोकुल ग्राम सूना हो गया है, प्रत्येक घर में उदासी छा गई है, जिसके विना अन्धकार से परिपूर्ण पृथ्वी पर बिल्कुल भी प्रकाश नहीं है, वह अत्यन्त अनोखी आभा वाला कृष्ण कहाँ है ?

जिसकी याद में अनेकों उदास गायें वन-वन फिरती हैं, तोता आँखों में आंसू भर-भर कर घर को देखता रहता है; जिसकी याद करके मैना प्रतिदिन रोती है, वह कानों की इच्छा को पूर्ण करने के लिए स्वाति नक्षत्र के मोती के समान कृष्ण कहाँ है ?

अलंकार—२४वें पद में रूपक।

गृह-गृह ... ... ही जो ॥२५-२६॥

शब्दार्थ—खनि=खान।

भावार्थ—प्रत्येक घर में ग्वालिनें व्याकुल हैं, ग्वाले भी उदास हो कर मार्ग पर भटक रहे हैं। जिस कुमार के बिना मैं धैर्य खोती जा रही हूं वह शोभा रूपी खान का निर्मल हीरा कहा है ?

मेरा हृदय तो कंस के डर के कारण काँपता रहता था। मुझे प्रत्येक क्षण यही आशंका होती थी कि कंस कृष्ण के साथ न जाने क्या व्यवहार करे। परन्तु परमपिता परमात्मा ने मुझ पर बड़ी कृपा की और वह अपने किए पापों से स्वय नष्ट हो गया।

अतुलित ... आ पड़ी ॥२७-२८॥

शब्दार्थ—अनुदिन=प्रतिदिन। भीति=भय। अभिनव=नई।

भावार्थ—अत्यन्त शक्तिशाली कूट आदि जो पहलवान थे तथा पर्वत के समान व संसार में भय उत्पन्न करने वाला वह जो हाथी (कुबलयापीड़) था, वे मेरे मन में प्रतिदिन अत्यन्त भय उत्पन्न करते थे परन्तु आज वे सब मृत्यु को प्राप्त कर चुके हैं।

अनेक भयंकर विपत्तियाँ आईं पर वे सब एक-एक करके दूर हो गईं। हे प्रियतम ! यह जो नई विपत्ति (कृष्ण की मथुरा में रहने की विपत्ति) सामने आई है, उसके विषय में तो सोचा भी न था। (कि कृष्ण से अलग होना पड़ेगा)।

पृष्ठ ७८—मृदु किशलय ... काम आता ? ॥२९-३०॥

शब्दार्थ—पवि=वज्र। कल्पान्त=कल्प के अन्त तक।

भावार्थ—कोंपल तथा कमल जैसा कोमल, नवीन सलोने शरीर वाला मेरा प्यारा पुत्र इन सब वज्र जैसे शरीर वाले राक्षसों का दमन तो कल्पान्त में (अत: कभी भो) नहीं कर सकता था।

विशेष—माता को कभी विश्वास नहीं होता कि उसका पुत्र इतना शक्तिशाली है। ममता का रोचक पहलू।

किन्तु मेरा हृदय तो यही कहता है कि (कृष्ण ने जो ये बड़े-बड़े कार्य किए) ऐसा मेरे पुण्यों के प्रताप के कारण ही हुआ है। कृष्ण जो मुझ से अलग हुए हैं, ऐसा किसी पाप के कारण हुआ है, मेरा वह अत्यन्त अनुपम पुण्य इस पाप को नष्ट करके इस बुरी घड़ी में काम क्यों नहीं आता।

प्रिय-सुअन ... ... ब्रजाभूषणों को ? ॥३१-३२॥

शब्दार्थ—अतिशय=बहुत।

भावार्थ—यशोदा कृष्ण के वापिस न आने का कारण पूँछती हैं—मेरा प्यारा पुत्र घर वापिस क्यों नहीं आया ? क्या वह सुन्दर नगर की शोभा देख कर लोभ में फँस गया ? क्या वह दुष्ट लोगों के जाल में फँस गया है ? हे प्रियतम ! बताइए क्या उसको राज्य भोगना अच्छा लगा है जो वह नहीं आया ?

क्या सम्पूर्ण बुद्धिमान मथुरावासियों ने अपने मृदुल वचनों से, भक्ति-पूर्ण भावनाओं से, विनती व प्रार्थनाओं से, प्यार भरे तर्कों से ब्रज के आभूषणों (कृष्ण व बलराम) को अत्यन्त अपना लिया है ? (जो वह नहीं आया)

बहु विभाव ... ... मार्ग ही में ? ॥३३-३४॥

शब्दार्थ—बिलम गया=रम गया। सुफलक-सुत=अक्रूर।

भावार्थ—क्या कृष्ण मथुरा का ऐश्वर्य देख कर गोकुल आना भूल गया है ? या वह बालकों के समूह में खेलता हुआ रम गया है ? हाय ! अक्रूर ने क्या षडयंत्र फैलाया है कि जिसमें फँस कर मेरा लाल नहीं निकल पाया।

क्या वह मार्ग की कठिनाइयों से बहुत थक कर किसी कुंज में विश्राम लेने के लिए रुक गया है ? हे प्रियतम ! क्या वह तुम तथा अन्य साथियों से मार्ग में अलग हो गया है, और रास्ता भूल कर इधर-उधर भटक रहा है?

पृष्ठ ७९—विपुल कलित ... न आये ? ॥३५-३६॥

शब्दार्थ—भानुजा=यमुना। उन्मोचने=दूर करने।

भावार्थ—यमुना के किनारे अनेक सुन्दर कुंज विद्यमान हैं मेरे प्यारे

पुत्रों को वे अत्यन्त प्रिय थे। क्या वे कुछ दिनों की थकावट दूर करने के लिए उन्हीं कुंजों में प्रसन्नचित्त-से गए हैं ?

क्या मेरे पुत्रों ने अनेक प्रकार की गौओं का समूह लिए ग्वाल-बालों की टोली देख ली है ? क्या वे अपने प्यारे मित्रों में, बछड़ों में और गौओं में तो नहीं रुक गये जो अभी तक नहीं आए ?

निकट आते ... ... क्यों न आया ? ।।३७-३८।।

शब्दार्थ—नीप=कदम्ब। समुद=मोद से।

भावार्थ—कदम्ब के फले-फूले अनुपम वृक्षों के समीप ही यमुना की धारा कल-कल का मधुर शब्द करती हुई बहती है। मेरे प्यारे पुत्र को वह अनूठा दृश्य अत्यन्त प्रिय है। क्या वह आनन्दित हो उसे देखने के लिए रुक गया है ?

कृष्ण के भाई बलराम श्वेत कमल के समान गौरवर्ण के हैं वे यदुकुल-वंशी तथा अपने वंश के आलोक हैं। यदि वे अपने कुल वालों के साथ मिल कर मथुरा में रुक गये थे तो कृष्ण अकेला ही घर वापिस क्यों नहीं आ गया?

अलंकार—३८वें पद में पहली पंक्ति में उपमा।

यदि वह ... ... क्यों रखूँगी ? ।।३९-४०।।

शब्दार्थ—सौजन्य=सज्जनता।

भावार्थ—हे स्वामी ! यदि कृष्ण भाई-प्रेमी, सज्जन व सदाचारी होने के कारण अपने भाई को छोड़ कर घर नहीं आया है तो आप ही बताइए कि उसके बिना ब्रजभूमि कैसे बसी रहेगी ? यदि मैं उसका मुख नहीं देखूंगी तो जीवित कैसे रहूंगी ?

हे नाथ ! अब मेरे प्राण कण्ठ में आ गए हैं अर्थात् अब निकलने ही वाले हैं इसलिए मुझे सत्य बतलाइये कि मेरा प्रिय पुत्र कहाँ है ? यदि मेरा प्राणाधार कृष्ण मुझे नहीं मिलेगा तो मैं भी अपने पापी प्राण को किस प्रकार धारण करूँगी ?

पृष्ठ ८०—विपुल धन ... ... ज्ञात होता ।।४१-४२।।

शब्दार्थ- उपचित=वर्द्धित।

भावार्थ—हे प्रियतम ! तुम रत्न आदि अपार धन साथ लाये हो परन्तु मुझे केवल यही बता दो कि मेरा लाल कहां है ? हे नाथ ? मैं असंख्य रत्न लेकर क्या करूँगी, मुझे तो मेरा अनुपम लाल ही ला दीजिए।

विशेष—लाल से रत्न अधिक मूल्यवान होता है परन्तु यशोदा को असंख्य रत्नों के स्थान पर एक लाल ही चाहिए। 'लाल' में श्लेष है।

(मुझे रत्नादि धन नहीं चाहिए), मुझे तो वह श्रेष्ठ धन चाहिए जिस से वश-बेल की वृद्धि होती है। जो सम्पूर्ण विश्व में जीव-मात्र का मूल है अर्थात् जीव-मात्र की उत्पत्ति का कारण है। जिसे खोकर सम्पूर्ण सांसारिक ऐश्वर्य व्यर्थ हो जाता है।

विशेष—इस पद की तीसरी पंक्ति कृष्ण का पुत्र रूप नहीं परम ब्रह्म रूप स्थापित करती है।

अलंकार—रूपक।

पृष्ठ ८०—इस अरुण ... ... मैं चाहती हूं ॥४३-४४॥

शब्दार्थ—पाहन=कीमती पत्थर अर्थात् रत्न आदि। प्रभा पुंज=तेज। द्युति=कान्ति।

भावार्थ—हे प्रियतम ! मेरे घर में इन लाल रंग के पत्थरों अर्थात् हीरे-रत्नादि की कमी नहीं है। प्रत्येक क्षण मेरे हृदय में उस अत्यन्त अनुपम लाल (कृष्ण) को प्राप्त करने की आकांक्षा बढ़ती जाती है।

हे स्वामी ! मेरे दोनों नेत्रों को जिससे अलौकिक प्रकाश प्राप्त होता है, जो अपने तेज से मेरे हृदय में फैले निराशा के अन्धकार को दूर करता है, जिसकी सुन्दर आभा हृदय की व्याकुलता नष्ट करती है, मुझे तो वही अनूठा हीरा (कृष्ण) चाहिए।

कटि-पट ... ... काँच कोई ॥४५-४६॥

शब्दार्थ—मणि-गण=मणियों का समूह।

भावार्थ—मैं कृष्ण की कमर का पीताम्बर देख कर पीले रत्न न्यौछावर कर दूंगी। मैं कृष्ण के नीले रंग पर सब नीले रत्न न्यौछावर

कर दूंगी। यदि मैं अपने पुत्र की अनोखी छवि देख लूं तो अनेक अमूल्य रत्न भी वितरित कर दूंगी।

संतान की तुलना में धन-सम्पत्ति व हजारों रत्न धूलिकणों के समान हैं तथा तिनकों के समान तुच्छ हैं। हे पतिदेव! आप पुत्र को छोड़ कर इन सब को घर ले आए हैं मानो कोई मणियों का समूह त्याग कर काँच के टुकड़े ले आये।

अलंकार—उदाहरण।

पृष्ठ ८१—परम-सुयश ... ... जीविता हूं ॥४७-४८॥

शब्दार्थ—कौशलाधीश=दशरथ। पापीयसी=पापिन।

भावार्थ—वास्तव में दशरथ ही यशस्वी होने के अधिकारी हैं तो अपने प्रिय-पुत्र के वन जाते ही मृत्यु को प्राप्त हो गए। हमारा हृदय तो वज्र से निर्मित है अन्यथा तत्काल ही इसके असंख्य टुकड़े हो जाते।

यदि साँप की मणि खो जाती है तो वह तड़प-तड़प कर प्राण छोड़ देता है। हे नाथ! मेरे समान पृथ्वी पर दूसरी पापिन नहीं हो सकती क्योंकि मैं अपने हृदय की मणि (कृष्ण) को खोकर भी जीवित हूं। (अतः साँप से भी निकृष्ट हूं)।

लघुतर-सफरी ... ... से रुके हैं ॥४९-५०॥

शब्दार्थ—सफरी=मछली। निर्ममों=निर्दयी।

भावार्थ मुझ से अधिक भाग्यवान तो वह छोटी सी मछली ही है जो जल से अलग होते ही प्राण छोड़ देती है। हाय! इस पृथ्वी पर मैं अत्यन्त दुर्भाग्यशाली हूं जो अपने पुत्र से अलग होने पर भी अब तक जीवित हूँ।

मेरे पापी प्राण वास्तव में बहुत नीच हैं जो तत्काल ही शरीर को नहीं छोड़ देते। हाय! न जाने कौन सा बुरा दिन देखने के लिये यह मेरे कष्टमय शरीर में निर्दयी की भाँति रुके हुए हैं।

विधिवश ... ... खो चुकी हूं ॥५१-५२॥

शब्दार्थ—कलपना=रोना।

भावार्थ—हाय ! दैवयोग से यह इतने शिथिल हो गए हैं कि शरीर त्याग कर जाने की भी शक्ति इनमें शेष नहीं है। इस पृथ्वी पर वे नारियाँ सौभाग्यशालिनी हैं जो उचित समय पर मृत्यु को प्राप्त करती हैं।

मैं बहुत रो-पीट चुकी हूँ, विरह की आग में जल चुकी हूँ, अनेक रातों में जाग कर रोती रही हूँ पर अब हृदय में बिल्कुल भी रक्त शेष नहीं है। मैं शारीरिक शक्ति व सुख सब की आशा छोड़ चुकी हूँ।

पृष्ठ ८२—विधिमुख ही खलेगी ॥५३-५४॥

शब्दार्थ—समधिक=अत्यधिक। पीयूष=अमृत।

भावार्थ—लोगों से सुनी बातों से जान पड़ता है कि कृष्ण अब लौट कर गोकुल नहीं आयेगे अतः अब कोई भी कृष्ण रूपी चन्द्रमुख देख कर मोहित नहीं हो पायेगा। अब कोई भी व्रजवासी कृष्ण की आभा देख कर आनन्दित नहीं होगा। अब व्रजभूमि में शान्ति रूपी अमृतधारा नहीं बह सकेगी।

कृष्ण बिना प्रतिदिन सम्पूर्ण गांव सूना-सूना सा प्रतीत होगा। रात-दिन बड़ी उदासी से कटेंगे। व्रज में जो अत्यधिक उदासी छा गई है, वह अब दूर नहीं होगी तथा सदैव अप्रिय लगेगी।

बहुत सह ... रो मरूँगी ॥५५॥

शब्दार्थ—कृशित=दुर्बल। पवि=वज्र।

भावार्थ—मैंने कृष्ण के विछोह को बहुत सह लिया है और अधिक सहने की शक्ति मुझ में नहीं है। मैं अपना हृदय वज्र के समान कठोर कैसे कर सकूंगी ? हे प्राण ! अब तुम इस क्षीण शरीर को छोड़ दो ! यदि तुम ने ऐसा नहीं किया तो मैं रो-रोकर ही मर जाऊँगी।

हा ! वृद्धा ... ... ने देखा ॥५६-५७॥

भावार्थ—हाय ! मुझ बूढ़ी के अमूल्य धन ! मेरे बुढ़ापे के सहारे ! मेरे प्राण प्यारे ! लाडले ! मेरे घर की शोभा ! सुन्दर-सलोने ! हाय पुत्र ! मेरे हृदय-धन ! आँखों के तारे !

मैं तुझ से अलग हो गई हूँ और फिर भी जीवित हूँ। ऐसा कैसे

सम्भव हो गया यह मैं स्वयं भी नहीं जान सकी, तुझे कैसे बता सकती हूँ ? पर अब मैं अधिक जीवित नहीं रहूँगी। अब मुझे केवल एक ही दुःख है कि मैं मरते समय तेरा प्यारा मुख नहीं देख सकूंगी।

यों ही बातें ... ... निराशा ५८-५६॥

शब्दार्थ--यशुमति=यशोदा।

भावार्थ—यशोदा इस प्रकार की ही दुःखपूर्ण बातें कह रही थीं और आँसू बहा रही थीं। कहते-कहते उन्हें मूर्च्छा आने लगी। यह देख कर सभी व्यक्ति भयभीत हो गये और उन्हें अनेक प्रकार से समझाने लगे।

राजा नन्द पहले ही दुःखों से बहुत व्याकुल थे। पत्नी को इस प्रकार दुःखी देख कर वह शोक में और अधिक निमग्न हो गए। वे इस प्रकार की बातें कहने लगे कि यशोदा के हृदय को शान्ति प्राप्त हो। उनके हृदय में कृष्ण से मिलने की आशा जन्म ले और निराशा नष्ट हो जाए।

पृष्ठ ८३ धीरे-धीरे ... प्रबोधा ॥६०-६१॥

शब्दार्थ—वपुष=देह। प्रबोधा=समझाया।

भावार्थ—यशोदा के प्राण उनका शरीर छोड़ जा रहे थे तभी नन्द के प्रिय वचनों को सुन कर वे वापिस लौट आए। कृष्ण की माता यशोदा ने बड़े दुःख से नेत्र खोले और फिर नन्द से पूछने लगीं—हे प्राणनाथ ! क्या दो दिन में ही कृष्ण ब्रज में लौट आयेगा ?

नन्द अपने हृदय की सारी पीड़ाएँ भूल कर यशोदा से कहने लगे—हाँ प्रिये ! प्यारा कृष्ण दो दिन में ही घर आ जायेगा। ऐसी ही अनेक बातें नन्द ने यशोदा को बताईं और अत्यन्त कठिनाई से समझा-बुझा कर यशोदा को धैर्य बंधाया।

जैसे स्वाती ... ... जिलाती ॥६२-६३॥

शब्दार्थ—स्वाती-सलिल-कण=स्वाति नक्षत्र में बरसे जल की बूंदें।

भावार्थ—जिस प्रकार वर्षाकाल बीत जाने पर भी प्यासी चातकी स्वाति नक्षत्र में बरसे जल की एक बूंद मात्र से तृप्त हो जाती है उसी

प्रकार पुत्र का दो दिनों में आना सुन कर चेतना खोती हुई यशोदा थोड़ी आश्वस्त हो गईं।

तत्पश्चात् रोती-काँपती व दुःख पाती वे अपने पति को लेकर घर में चली गईं। आशा की भी अपर महिमा है। आशा अलौकिक है व धन्य है क्योंकि आशा की किरण मरते हुए को भी जीवन प्रदान करती है।

अलंकार—६२वें पद में उदाहरण है।

अष्टम सर्ग

पृष्ठ ८४—यात्रा पूरी ... ... जान जाता ॥१-२॥

शब्दार्थ—विवि=दो। सतत=निरन्तर।

भावार्थ—अपनी मथुरा-यात्रा समाप्त करके ग्वालें अत्यन्त दुःख-सहित घर वापिस आ गए। उन्होंने ब्रजवासियों को सारा हाल बहुत पीड़ा के साथ सुनाया। नन्द जी ने कृष्ण के दो दिन में वापिस आने की जो बात कही थी, खोज-पड़ताल करने वालों ने उसका सम्पूर्ण रहस्य भी जान लिया (रहस्य यह था कि यशोदा को धैर्य बंधाने के लिए नन्द ने झूठ बोला था)।

सभी व्यक्तियों ने आते समय नन्द का मुख देखा था। उनके नेत्रों में बहुत उदासी विद्यमान थी। मथुरा से आने वालों से सारी बातें सुन ली थीं और सत्य बात (कि कृष्ण नहीं आयेंगे) को प्रत्येक व्यक्ति जान चुका था।

दोनों प्यारे ... ... उन्हीं को ॥३-४॥

शब्दार्थ—शतधा=सैंकड़ों खंड।

भावार्थ—आज प्रत्येक घर में प्रायः यही बात कही जा रही थी कि दोनों प्रिय कुमारों के लिए ब्रज आना अब सम्भव नहीं होगा। अब न तो उनकी प्यारी छवि देख कर नेत्र सफल हो सकेंगे और न ही कानों में बाँसुरी की मधुर-तान सुनाई पड़ेगी।

सम्पूर्ण ब्रज के गोप और गोपियों को कृष्ण प्राणों के समान प्रिय थे। सम्पूर्ण ग्राम की प्यार भरी आशाएँ उन्हीं में केन्द्रित थीं। सकल गाँव बड़े

चाव से उनका मुख निहारता था। ऐसे कृष्ण के जुदा हो जाने पर उनका हृदय सैकड़ों खडों में विभाजित हो गया।

बैठे नाना ... ... सुनाता ॥५॥

शब्दार्थ—वृत्त=वृत्तान्त। आभीर=अहीर।

भावार्थ—अनेक स्थानों पर बैठे व्यक्ति अनेक वृत्तान्त सुना रहे थे। सम्पूर्ण ग्राम में व्याकुलता का प्रवाह बढ़ता जा रहा था। उधर देखा, एक अहीर बैठा हुआ है और अत्यन्त कारुणिक स्वर में अपनी सारे व्यथाएँ उपस्थित व्यक्तियों को सुना रहा है।

पृष्ठ ८५ जब हुआ ... ... थी लसी ॥६-७॥

शब्दार्थ - कृति मूर्ति=सज्जनता की मूर्ति, यशोदा। दसनावलि=दंत-पंक्ति।

भावार्थ—जिस समय ब्रज के प्राण श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था उस समय ब्रज बहुत आनन्दित हुआ था। साक्षात् सज्जनता की मूर्त्ति यशोदा कितनी हर्ष-विभोर थी तथा राजा नन्द कितने हर्षित हुए थे।

ब्रज के सब द्वारों पर अत्यन्त सुन्दर वन्दनवार इस प्रकार शोभायमान थे मानो हँसते हुए ब्रज के घरों के मुखों में दाँतों की पंक्तियाँ चमक रही हों।

अलंकार—उत्प्रेक्षा।

नव-रसाल ... ... सुरलोक को ॥८-९॥

शब्दार्थ—रसाल=आम। अजिर=आंगन। जीह=जिह्वा। लेहन=चाटना। समुद=आनन्दसहित।

भावार्थ—आंगन में नये आमवृक्ष के सुन्दर पत्तों की झालरें बंधी हुई थीं। ऐसा लगता था मानो चारों ओर फैले रस को ग्रहण करने के लिए ब्रज ने अनेकों जिह्वाएँ धारण की हों।

घरों व गलियों में, मार्गों और मन्दिरों में, चौराहों तथा वृक्षों पर फहरते हुए झंडे ऐसे प्रतीत होते थे मानो वे आनन्द से ब्रज की कथा देवलोक को सुना रहे हों।

अलंकार—दोनों पदों में उत्प्रेक्षा।

विपरिण हो ... ... ठौर था ।।१०-११।।

शब्दार्थ—विपरिण=बाजार । वितान=तम्बू । कुंभ=घड़े । संकुल=भरपूर । चर्चित=सज्जित ।

भावार्थ—सभी बाजार सुन्दर वस्तुओं से सुसज्जित थे । ब्रजभूमि वरुण की नगरी अलकापुरी के समान सुन्दर प्रतीत होती थी । गोकुलग्राम में सर्वत्र सुन्दर तम्बू लगे हुए थे । उसकी शोभा इन्द्र की राजधानी अमरावती से भी बढ़ी हुई थी ।

घरों के द्वारों पर जल भरे घड़े शोभायमान थे । गलियाँ पुष्पों से भरपूर थीं । सब चौराहे अत्यन्त सुसज्जित थे । प्रत्येक स्थान पर आनन्द हिलोरें ले रहा था ।

अलंकार—१०वें पद में उपमा ।

पृष्ट ८६—सकल गोधन ... कलकंठता ।।१२-१३।।

शब्दार्थ—शिखिपुच्छ=मोर पंख । मधुसिक्त=अमृत युक्त ।

भावार्थ—सारी गौओं को वस्त्रों, आभूषणों तथा मोर के पंखों से सजाया गया था । सुन्दर गोप-मण्डली भी विविध प्रकार से सजधज गई थी ।

ब्रज में सुन्दर व मधुर गीतों की धूम मच गई थी अर्थात् ब्रज में मधुर गीत गूंज रहे थे । नवयुवतियों के मधुर कंठ गद्‌गद हो रहे थे और वे सुरीले तथा अमृतयुक्त स्वर में गा रहे थे ।

सदन उत्सव ... ... जनवृन्द को ।।१४-१५।।

शब्दार्थ — कमनीयता=रमणीयता । याचक=भिखारी ।

भावार्थ—नन्द के घर पर होने वाले उत्सव की रमणीयता तो और भी मनोहारी व प्रिय थी । अनेक भिखारी वहाँ उपस्थित थे और उन्हें अत्यधिक मात्रा में धन, रत्न आदि बाँटे जा रहे थे ।

ग्राम की नववधुएँ अनेक वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर आपस में हास-परिहास करती व हँसती हुई राजा नन्द के घर में पधार रही थीं । उनका इस प्रकार आना देख कर उपस्थित जन-समूह और भी अधिक आनन्दित होता था ।

ध्वनित ... ... अनुकूल था ॥१६॥

शब्दार्थ—वादन=संगीत-स्वर। मधुमानता=मनोरमता।

भावार्थ—आभूषणों से मनोरम ध्वनि उच्चरित होती थी। गीत दिव्य मधुरता से भरपूर थे। वाद्ययन्त्रों से मधुर संगीत-स्वर प्रवाहित हो रहा था जो उपस्थित व्यक्तियों के प्रसन्न हृदयों के अनुकूल प्रसन्नता प्रदान करने वाला था।

या मैंने था ... ... बचा मैं ॥१७-१८॥

शब्दार्थ—विधना=विधाता।

भावार्थ—(वह अहीर कह रहा था)—एक ओर तो मैंने ऐसा अलौकिक दिन देखा था और दूसरी ओर मैं आज ऐसा दुःखपूर्ण दिन देख रहा हूं। हे निष्ठुर विधाता! यदि तुझे अन्त में आज जैसा बुरा दिन ही दिखाना था तो मुझे वह सुखदायक दिन क्यों दिखाया था।

हाय विधाता! मैंने अत्यधिक प्रसन्न नन्द व यशोदा को क्यों देखा जो आज मैं उन्हें इतना दुःखी देख रहा हूं। उस दिन व्रजभूमि आनन्द से विकसित थी अब दिन-प्रतिदिन मलीन होती जा रही है। हाय! मैं व्रज-भूमि की ऐसी शोकमय अवस्था देखने को क्यों जीवित हूँ।

पृष्ठ ८७—या देखा था ... ... देखता हूं ॥१९-२०॥

शब्दार्थ - मज्जिता=डूबी हुई।

भावार्थ—एक ओर तो मैंने अत्यन्त सज्जित द्वार व आंगनों को, मकान व दुकानों को, मार्गों व मन्दिरों को देखा था दूसरी ओर आज यही द्वार, आंगन, मकान, दुकान आदि रोनी सूरत बनाए निस्तब्ध खड़े हैं, जैसे उन पर उदासी का साम्राज्य छाया हो।

मैंने जिन गायों को अत्यन्त सुसज्जित देख कर सुख अनुभव किया था, हाय! आज वही गाएँ दुःख के समुद्र में डूबी हुई हैं। जो ग्वाले आनन्द में अत्यन्त मग्न थे, हाय! आज मैं उन्हीं को अत्यन्त व्यथित देख रहा हूँ।

भोलीभाली ... ... लौटता है ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—मुद-मोद=आनन्द। कीला=बाँध दिया।

भावार्थ—अनेक प्रकार के वस्त्राभूषणों से सुसज्जित, भोली-भाली, मृदुल स्वर में गाने वाली सुन्दर बालाएँ, जीव-मात्र को आनन्द प्रदान करने वाली प्रतिमाओं के समान थीं। आज उन्हीं को उदास, दीनता से भरपूर तथा मैले वस्त्रों में देखने के लिए मैं क्यों जीवित हूँ?

हाय! वाद्य-यन्त्रों का मधुरस्वर आज मिट्टी में मिल गया है। हाय! किसी दुष्ट ने इन रमणियों का मधुर कण्ठ बाँध दिया है जिससे वे गा नहीं सकती। सम्पूर्ण ब्रज की छवि को कोई लूटता जा रहा है। हाय! मेरे सीने पर साँप क्यों लोट रहा है अर्थात् मेरे हृदय में अपार पीड़ा क्यों हो रही है।

आगे आओ ... ... सुनाता ॥२३॥

भावार्थ—(कवि कहता है) - हे सहृदय पाठकों! अब बूढ़े (अहीर) का साथ छोड़ दो। देखो! घरों में बैठी रमणियाँ क्या कह रही हैं। इनमें से प्राय: प्रत्येक की आँखें रोते-रोते लाल हो गई हैं। जो अधिक ऊब गई हैं, उन्हीं के वचन मैं पहले सुनाता हूँ।

पृष्ठ ८८—ज़ब रहे ... ... करती रहीं ॥२४-२५॥

शब्दार्थ—तल्प=शैया। अनुत्तम=अनुपम।

भावार्थ—जिस समय ब्रज के चन्द्रमा, श्रीकृष्ण छ: महीने के थे, तथा उनके मुख में दो दाँत चमक रहे थे, उस समय एक दिन वे पुष्प जैसी कोमल शैया पर लेटे हुए कमल जैसे पाँव उछाल रहे थे।

कृष्ण की माता शैया के निकट खड़ी उनकी अनुपम शोभा को निहार रही थी। कभी-कभी वह अपने सुरीले गले से अत्यन्त आकर्षक व मधुर लोरी गाने लगती थी।

अलंकार—२४वें पद में स्वाभावोक्ति व रूपक।

जब कभी ... ... ज्यों कला ॥२६-२७॥

शब्दार्थ—उमँगना=हँसना। सुषमा-मयी=आकर्षक। विकच=खिले हुए। चुमकारती=पुचकारती। कला=चाँदनी।

भावार्थ जिस समय भी माता यशोदा, कृष्ण का मुख चूमती या मधुर कथाएँ सुनाती या पुचकारती थीं, उस समय व्रज के चन्द्रमा, कृष्ण का हँसना दिव्य शोभा से भरपूर होता था।

कृष्ण के कुछ खिले हुए मुख की यह आकर्षक हँसी, माता के हृदय को प्रसन्न करनी वाली होती थी। ऐसा जान पड़ता था मानो विकसित कमल पर चाँदनी शोभित हो रही हो।

अलंकार—२७वें पद में उपमा।

दसन दो ... ... थी हँसी ॥२८-२९॥

शब्दार्थ—विवि=दो। वत्सलता पगे=पुत्र स्नेह से भरे।

भावार्थ—कृष्ण के हँसते हुए सुन्दर मुख में दो दाँत अत्यन्त रमणीक दृष्टिगोचर होते थे। ऐसा लगता था मानो नए कोमल कमल के अन्दर दो मोती सुशोभित हों।

माता यशोदा के पुत्र-स्नेह से भरपूर ललचाए उनके दोनों नेत्रों के लिए कृष्ण के दाँत रस के दो बीजों के समान थे और उनकी हंसी अमृत की धार के समान थी।

अलकार—दोनों पदों में उपमा है।

पृष्ठ ८९—जब सुव्यंजक ... अभिनन्दिनी ॥३०-३१॥

शब्दार्थ सुव्यंजक=भली-भाँति प्रकट करने वाले। अधरांबुधि=अधर+अम्बुधि=ओठों रूपी समुद्र, मुख।

भावाथ—जिस समय श्रीकृष्ण के मुख से विचित्र भावों को प्रकट करने वाले अस्पष्ट शब्द निकलते थे उस समय उनकी माता को ऐसा जान पड़ता था मानो होंठ रूपी सागर से शब्द रूपी सुन्दर रत्न निकल रहे हों।

कृष्ण के ओष्ठ संध्याकाल के सुन्दर आकाश के समान लालिमा लिए थे। उनके दोनों दाँत आकाश पर सुशोभित दो तारों के समान सुशोभित थे। उनकी मधुर मुस्कराहट सुन्दर प्रकाश के समान माता के हृदय को आनन्दित करती थी।

अलंकार—३०वें में उत्प्रेक्षा तथा ३१वें में पूर्णोपमा।

विमल ... ... विभूति थीं ॥३२॥

शब्दार्थ—विनिन्दक=तिरस्कृत करने वाली। वारिज=कमल।

भावार्थ—चन्द्रमा को भी तिरस्कृत करने वाला मुख का सौन्दर्य तथा खिले हुए कमल जैसी मनोहरता देख कर यशोदा, कृष्ण के मुख में संसार की कुल सम्पत्ति प्राप्त कर लेती थीं।

अलंकार—व्यतिरेक तथा उपमा।

मैंने आँखों ... ... रोमावली में ॥३३-३४॥

शब्दार्थ—सहस=सहस्र। मोद-आन्दोलिता=प्रसन्नता से युक्त। भाग=भाग्य।

भावार्थ (वह स्त्री कह रही है) मैंने यशोदा का यह अपार आनन्द अपनी आँखों से देखा है तथा उनके सौभाग्य की प्रशंसा हजारों मुखों से (अर्थात् अत्यधिक) की है। उनके मुख पर आनन्द की जो रमणीय लालिमा छा जाती थी, वह मेरे नेत्रों को अकथनीय आनन्द रस से सींच देती थी अर्थात् मेरे नेत्रों को तृप्त करती थी।

हाय! आज जब मैं उस आनन्द की साक्षात् मूर्त्ति व प्रसन्नता से परिपूर्ण यशोदा को उदास शरीर तथा शोक सागर में डूबी हुई पाती हूँ तो मेरा हृदय मसोसने लगता है, नेत्रों में जल भर आता है, शरीर के छिद्रों में (रोम-रोम में) अग्नि सी लग जाती है।

जो प्यारे ... ... वंचिता यों ॥३५-३६॥

शब्दार्थ—सद्वृत्ते=सदाचारी। सुरद्विजरते=देवताओं व ब्राह्मणों की सेविका। सुव्रते=शुभ कार्य करने वाली।

भावार्थ—जो यशोदा अपने प्रिय पुत्र का मुख देख कर ही स्वर्ग की सारी धन-सम्पत्ति प्राप्त कर लेती थी तथा जो कृष्ण की सलोनी सूरत देख कर सम्पूर्ण धनकोष लूट खा लेती थी, हाय! वही आज सम्पूर्ण पृथ्वी पर अन्धकार ही अन्धकार देती है। पुत्र से मिलने की उसे अब तनिक भी आशा नहीं दिखाई देती।

हाय ! नेक, सरलहृदया व शीलवती यशोदा, हाय ! सदाचारिणी, देवताओं तथा ब्राह्मणों की सेविका व सज्जनता की मूर्त्ति, हाय ! शान्त रहने वाली, अच्छे कार्य करने वाली ! तेरा इस प्रकार विधाता के हाथों पुत्र-सुख से वंचित होना मुझे अत्यंत कष्ट देता है।

पृष्ठ ९०—बोली बाला ... ... यों की ॥३७॥

शब्दार्थ--अपर=दूसरी । संतप्ता=दुःखिनी ।

भावार्थ- दूसरी बालिका ने कहा--'भाग्य की गति बड़ी ही अद्भुत है। मेरे हृदय में भी अपार पीड़ा हो रही है। हे बहिन ! इसलिए मैं भी आज आप-बीती सुना देती हूँ। ऐसा कह कर तथा रो-रोकर उस दुःखिनी बालिका ने अपनी बात इस प्रकार प्रारंभ की –

जननि ... ... विनोद थे ॥३८-३९॥

शब्दार्थ--पयोधि=सागर । सु-वासर=शुभ दिन । अजिर=आँगन । वितरते=वितरित करते, प्रदान करते ।

भावार्थ—जब कृष्ण घुटनों चलने लगे, वह व्रज के लिए अत्यन्त शुभ दिन था। कृष्ण को घुटनों चलता देख कर माता यशोदा के हृदय रूपी धर्म के सागर में सुखों को जन्म देने वाली आनन्द की लहर हिलोरें लेने लगी।

कृष्ण उचक-उचक कर माता का मुख देखते व किलकला कर हँसते हुए आँगन में घुटनों के बल चलते तो अत्यन्त आनन्द वितरित करते थे।

विमल व्योम ... ... विनोद की ॥४०-४१॥

शब्दार्थ विमल=निर्मल । जननि अंक विभूषण= माता की गोद का आभूषण, श्रीकृष्ण । वेलि=बेल ।

भावार्थ—निर्मल आकाश में सुशोभित चन्द्रमा तथा घर में शोभित दीपक की लौ, कृष्ण के लिए अत्यन्त उत्कण्ठा की प्रिय वस्तुएँ थीं।

नेत्रों को सुख पहुँचाने वाले सुरमे जैसी सुन्दर आभा वाली धूल को जब माता यशोदा श्रीकृष्ण के श्याम शरीर से हाथों से पोंछतीं तो इतना आनन्द छा जाता मानो प्रसन्नता की बेल लहलहा गई हो।

अलंकार – ४१वें पद में रूपक तथा उपमा।

पृष्ठ ९१—जब कभी ... ... प्रदीप की ।।४२-४३।।

शब्दार्थ—पाणि=हाथ । ग्रंथि=रहस्य ।

भावार्थ—जब कभी व्रजनन्दन कृष्ण हाथ में कुछ लेकर अपने मुंह में डालते या कभी किसी वस्तु को आश्चर्यचकित नेत्रों से देखते तो—

लगता मानो प्रकृति अपने नाखूनों से ज्ञान के विभिन्न मनोहर रहस्यों को खोल रही है । (भाव यह है कि श्रीकृष्ण को सब ज्ञान प्रकृति स्वयं करा देती थी) । श्रीकृष्ण को ऐसा करता देख माता यशोदा के हृदयरूपी सुन्दर दीपक की लौ दुगुनी चमकती थी अर्थात् उनका हृदय अपार आनन्द से भर जाता था ।

अलंकार—४३वें पद में रूपक है ।

कुछ दिनों ... ... पयोधि था ।।४४-४५।।

शब्दार्थ—कटिकिंकिणी=कमर की तगड़ी या करधनी ।

भावार्थ—कुछ दिनों के पश्चात् कृष्ण के पाँव पृथ्वी पर पड़ने लगे अर्थात् वे थोड़ा-थोड़ा चलने लगे । जब वे चलते तो उनकी कमर की करधनी में लगे घुंघरू तथा पाँव के घुंघरू घर में मधुर शब्द करने लगे ।

माता की अंगुली पकड़ कर जब कृष्ण डगमगाते व उठते-गिरते घर में चलते थे तो आनन्द का सागर उमड़ पड़ता था ।

अलंकार ४५वें पद में रूपक तथा स्वाभावोक्ति है ।

क्वणित ... ... पा सके ।।४६-४७।-

शब्दार्थ—क्वणित=झनझनाती । परस=स्पर्श ।

भावार्थ—कृष्ण की झनझनाती करधनी यह बात प्रकट कर रही थी कि यह वही अत्यन्त आश्चर्यजनक बालक है जो विद्वन्मंडली को आश्चर्यचकित कर देगा ।

उनके पाँव के घुंघरू जो मधुर ध्वनि से बज रहे थे, विश्व को यही बता रहे थे कि श्रीकृष्ण के चरण-कमलों को छूकर कौन सा निर्जीव पदार्थ भी सजीव (चेतन) नहीं हो जाता । (निर्जीव नूपुर कृष्ण के पाँवों का स्पर्श पाकर सजीव अर्थात् शब्दायमान हो जाते हैं ।)

अलंकार—दोनों पदों में उत्प्रेक्षा तथा ४७वें में रूपक ।

पृष्ठ ६२—ऐसा प्यारा ... ... उसी ने ।।४८-४६।।

शब्दार्थ—जयी=जीतने वाला । सुभगा=सुन्दरी । तद्गता=वहाँ जाकर ।

भावार्थ—यशोदा ने जब अनेक प्रयत्नों के फलस्वरूप, चन्द्रमा की शोभा को भी परास्त करने वाला घरों का प्रकाश, अत्यन्त सुन्दर, अपार सुख की खान व मनोरम पुत्र प्राप्त किया तो उनका कौन सा पुण्य नहीं जाग उठा था अर्थात् उनके सभी पुण्यों का प्रताप उन्हें श्रीकृष्ण के रूप में मिला था ।

जिस सुन्दर स्त्री ने नन्द के घर जा कर कमल जैसी छवि वाले कृष्ण की प्रिय क्रीड़ाओं को तथा यशोदा की प्रसन्नता को देखा होगा, केवल वही तन्मय होकर जान सकती है कि पृथ्वी पर पुण्यात्मा कैसा अनोखा फल प्राप्त करते हैं ।

प्रायः जा के ... ... उत्फुल्लता को ।५०-५१।।

शब्दार्थ—मत्त=तन्मय । मदोन्मत्ता=आनन्द में डूबी । ललक=लपक कर ।

भावार्थ—मैं प्रायः नन्द के घर जा कर कुमार की शोभा को मस्त होकर देखती थी । आनन्द में डूबी हुई यशोदा के मुख को देख कर मुझे स्वर्ग का आनन्द प्राप्त होता था । जब प्रसन्नचित्त कृष्ण भाग कर माँ के पास जाते तो यशोदा भी उन्हें लपक कर गोद में ले लेतीं और (कृष्ण के इस कृतित्व पर आनन्दमग्न हो जातीं ।

मैं देवी यशोदा के इस अनोखे मोद में विभिन्न रसों की धाराएँ सप्रसन्न देखती थी और आनन्द रूपी अमृत से सिंचित हो जाती थी । हे बहिन ! मेरी आँखों में वह अनोखा दृश्य अब भी बसा हुआ है । हाय ! मैं अपनी उस प्रसन्नता को अभी तक नहीं भूली हूँ ।

जाना जाता ... ... पद्म सा मैं ।।५२-५३।।

शब्दार्थ—ध्वंस=नष्ट। दव=अग्नि। पद्म=कमल।

भावार्थ—हे सखि! न जाने कौन सा पाप उदय हुआ है जो सोने जैसा सुख का भंडार यह घर आज नष्ट हो रहा है। अत्यन्त सौभाग्यशालिनी यशोदा जो प्रसन्नता के कारण अपने अंगों में समा नहीं पा रही थी, हाय! आज मैं उसी को पुत्र के विछोह की अग्नि में जलना पा रही हूँ।

हाय! क्या सुख के सारे दिन समाप्त हो गए? वे स्वर्ग में चले गए? या दुःख के मारे सागर में जा छिपे? माता के मुख पर न जाने कहाँ की उदासी छा गई है? हाय! क्या मैं उस मुख को पुनः कमल जैसा खिला हुआ देख पाऊँगी?

अलंकार—५२वें में रूपक तथा ५३वें में उपमा।

पृष्ठ ६३—सारी बातें ... ... साथ बोली ॥५०॥

शब्दार्थ—वनिता=स्त्री। प्रवीणा=चतुर।

भावार्थ—उस स्त्री की दुःखपूर्ण सारी बातें व दर्द भरी कहानी धीरे-धीरे सुन कर एक चतुर बालिका बहुत उदास हो गई। वह पहले तो धैर्य खो कर रोने लगी फिर आहें भर-भर कर व व्यथित होकर बड़े कष्ट से बोली—

निकल के ... ... में हुई ॥५५-५६॥

शब्दार्थ—अनुरंजिता=रंगी हुई।

भावार्थ—जब कृष्ण अपने घर से निकल कर व्रज में घूमने जाते तो उनके चरण रूपी कमलों की लालिमा उनके मार्ग को रंग देती।

तब बालमंडली अतीव प्रसन्न हुई तथा नगर की वधुएँ अत्यन्त सुखी व प्रसन्न हुईं। व्रजभूमि में विभिन्न प्रकार के आमोद-प्रमोदों व क्रीड़ाओं में वृद्धि हो गई।

पहुंचते ... ... स्वामिनी ॥५७-५८॥

शब्दार्थ—सद्म-निवासिनी=गृहिणीं।

भावार्थ—जब कृष्ण हँसते हुए व मधुर-मधुर वचन कहते हुए किसी के घर में चले जाते थे तो गृहिणी बड़े शौक से उनका स्वागत करती थी।

घर की बालिकाएँ भी सदैव ही मीठी-मीठी बातों से उनका सम्मान करती थीं। गृहिणियाँ उन्हें माखन तथा दही आदि देकर प्रसन्न करती थीं।

कमललोचन ... ... से सजे ॥५९-६०॥

शब्दार्थ—उक्ति=कथन। विहरते=घूमते। रुचिर=आकर्षक।

भावार्थ—कमल जैसे नेत्र वाले कृष्ण अपने सुन्दर कथनों से सभी को अत्यन्त मोहित करते थे। उनकी मधुर क्रीड़ाओं व घुँघरूओं के शब्द से उस घर का वातावरण भी बहुत भव्य हो उठता था।

कभी तो कृष्ण बलराम तथा अन्य बालकों की मण्डली के साथ अनेक भवनों में घूमते फिरते थे और कभी अकेले ही आकर्षक वस्त्राभूषणों से सज्जित हो घूमने जाते थे।

पृष्ठ ९४—ऐसे सारी ... ... न होगा ॥६१-६२॥

शब्दार्थ—वेला=घड़ी। गरल=विष। थल=स्थल।

भावार्थ—व्रजभूमि के इस प्रकार के केवल मात्र प्यारे बालक कृष्ण को किस दुष्ट ने, किस प्रकार, क्यों, किस स्थान पर तथा किस समय छीन लिया। हाय! उसने आनन्द की सरस धारा में विष घोल दिया। मृदुल पुष्पों की वाटिका रूपी व्रजभूमि में कैसे काँटे फला दिये? अर्थात् प्रसन्नता को शोक में बदल दिया।

बाल-लीला करने वाला, श्री कृष्ण सुन्दर गलियों व मोहक घरों को, अपनी क्रीड़ा के अनेक सुन्दर स्थलों को व्रजभूमि को, यमुना के किनारे को किस प्रकार भूल गया। क्या इन सबको स्मरण करके कृष्ण का हृदय तनिक भी उदास न होता होगा?

पृष्ठ ९४—क्या देखूँगी ... ... देख आँखों। ६३-६४।

शब्दार्थ—कढ़ता=निकलता। दीर्घ=अत्यधिक। वांछा=आकांक्षा।

भावार्थ—क्या अब मैं चन्द्रमा (श्री कृष्ण) को घरों से निकलता हुआ देख सकूँगी? क्या घर में मनोहारी कमल पुनः नहीं खिलेगा? मेरे शोक

पूर्ण दिन क्या अब आनन्ददायक नहीं होंगे ? क्या मेरे प्रिय का मुख मंदिरों में अब दिखाई नहीं देगा ?

हाथों में मीठी दही लेकर अत्यधिक उत्सुकता से जो अब भी कुमार के मार्ग को घन्टों बैठे देखा करती है; हाय ! क्या ऐसी भोलीभाली यशोदा की अपने नेत्रों से कृष्ण को देख कर हृदय की आकांक्षा सफल नहीं होगी ?

अलंकार—६३वें में रूपकातिशयोक्ति है ।

भोली भाली ... ... सोहती थी ।।६५-६६।।

शब्दार्थ—क्रीड़ाकांक्षी=खेलने के इच्छुक । सिता=चाँदनी ।

भावार्थ—सुखमय घरों में रहने वाली सरल व सुन्दर बालिकाएँ जो प्रिय कृष्ण की सुन्दर बातों को सुनने की आज भी इच्छुक हैं । कृष्ण के साथ खेलने के इच्छुक सम्पूर्ण बालक आज भी कृष्ण को मिलने की आशा संजोये हैं । हाय विधाता ! क्या उन सबकी मनोकामना पूर्ण नहीं होगी ?

एक दिन प्रातःकाल मैं नन्द के घर गई थी । माता बैठी हुई अपने पुत्र की क्रीड़ाएँ देख रही थी । कृष्ण भी प्रसन्नतापूर्वक अनोखी क्रीड़ाएँ करके माता को आनन्द प्रदान करते थे । कृष्ण के ओष्ठों पर चाँदनी जैसी शुभ्र हंसी सुशोभित हो रही थी ।

पृष्ठ ९५—ज्यों ही ... ... आई ।।६७-६८।।

शब्दार्थ—वधूटी=बहू । कलावान=कान्तिमान ।

भावार्थ—ज्योंही यशोदा की दृष्टि मुझ पर पड़ी, वह प्रेमपूर्वक बोलीं—देखो ! तुम्हारा लाडला कृष्ण किस प्रकार संभल-संभल कर चल रहा है । यह खेल आदि में कितना चतुर है ! यह कितना कान्तिमान भी है ! इतना श्रेष्ठ पुत्र पाकर मैं सचमुच ही धन्य हूं ।

वह अत्यन्त ही शुभ दिन होगा जब मैं अपने हृदय की सम्पूर्ण आकांक्षाएँ पूर्ण होती अपने नेत्रों से देखूंगी । मैं अपने पुत्र का विवाह करूँगी और मुझे वधू मिलेगी । मैं तो यही समझूंगी कि स्वर्ग की सिद्धि ही मेरे घर आ गई है ।

पृष्ठ ९५—ऐसी बातें ... ... थे बिताते ।।६९-७०।।

शब्दार्थ—उमग=उत्साहित होकर। उत्स=प्रवाह, स्रोत। दर्शनाशा=दर्शन की आशा।

भावार्थ– यशोदा उल्लसित होकर बड़े प्रेम से ऐसी बातें कहा करती थीं। उस समय उनका हृदय आनन्द का स्रोत बन जाता था। हाय! आज उसी हृदय पर शोक आच्छादित है। मैं क्या करूँ? रोऊँ या सब वर्णन करूँ? या मर जाऊँ?

ब्रजभूमि के सभी प्राणी कृष्ण के दर्शनों की आशा के सहारे इसी प्रकार की विभिन्न बातें कह कर, शोक के आवेग से रोकर, वेदन की व्यथा से दुःखी होकर, दुःखाग्नि से जल कर, प्रिय कृष्ण से अलग होकर अपने दिन व्यतीत कर रहे थे।

———

नवम सर्ग

पृष्ठ ९६– एकाकी ... ... अंभोज में ॥१-२

शब्दार्थ—एकाकी=अकेले। उत्सन्ना=त्यागी हुई। संज्ञक=नामक। दीर्घ-उत्कण्ठ=अत्यन्त उत्सुक। विमोहिनी=मोहित करने वाली। अंभोज=कमल।

भावार्थ– एक दिन कृष्ण अकेले ही अपने भवन में बैठे थे। अपनी त्यागी हुई ब्रजभूमि का स्मरण हो आया तो उन्हें बहुत घबराहट हुई। कृष्ण के एक अभिन्न मित्र थे। ऊधों नामक यह मित्र बहुत ज्ञानी व वृद्ध थे। (जब कृष्ण ब्रजभूमि की याद से पीड़ित थे) उसी समय ऊधो अत्यन्त प्रसन्नचित्त हो भवन में आये।

आते हो कृष्ण का उदास मुख देख कर वे बड़ी उत्सुकता से बोले—स्वामी! आप इतने उदास क्यों हैं? आपको क्या पीड़ा है? आपकी खिले हुए पुष्प को भी मोहित करने वाली प्रफुल्लता आज कहाँ चली गई? आज खिले हुए कमल में अर्थात् मुख पर उदासी क्यों छा गई है?

अलंकार– दूसरे पद में रूपकातिशयोक्ति है।

बोले वारिद ... ... है हमें ॥३-४॥

शब्दार्थ—वारिद-गात=मेघ जैसे शरीर वाले। व्यामोह=मोह। उन्मुक्त=स्वच्छन्द। आबद्ध=बँधा हुआ। संभ्रम=विलास।

भावार्थ—श्याम शरीर वाले कृष्ण अपने मित्र ऊधव को सम्मान सहित अपने निकट बैठा कर कहने लगे—प्रियमित्र! विधाता की सम्पूर्ण रचना इस मोह से भरपूर है। पहले मैं अपना जीवन स्वच्छन्द रूप से व्यतीत करता था परन्तु अब मैं उसे कर्तव्य के बंधनों में बंधा हुआ पाता हूं।

शोभा तथा वैभव विलास से परिपूर्ण ब्रजभूमि, प्रेम से ओत-प्रोत गोपियाँ, प्रेममयी तथा विश्वास की साक्षात् मूर्त्ति माता, पुत्र-स्नेह के स्रोत—पिता प्रिय बालगोपाल तथा प्रेम रूपी मणियों के सागर ग्वाले, इन सबको मैं भूला नहीं हूँ। उनकी स्मृति मुझे सदैव व्याकुल करती है।

अलंकार—चौथे पद में उपमा तथा रूपक।

जी में बात ... ... महा ॥५-६॥

शब्दार्थ—बाधिका=बाधक। वासर=दिन। व्याघातकारी=विघ्न डालने वाला।

भावार्थ—मेरे हृदय में अनेक बार यह विचार आया कि मैं अपनी भावभरी, प्यारी व सुन्दर ब्रजभूमि में दो दिन के लिए ही चलूं। कई महीने बीत गये परन्तु मेरी यह आकांक्षा अभी तक पूर्ण नहीं हुई। विभिन्न प्रकार के कार्यों की उलझनें मेरे मार्ग में बाधक बन रही हैं।

राजनीति के नये-नये पेचीदे मामले बढ़ते ही जा रहे हैं। हाय! वे मेरी ब्रजभूमि की यात्रा में बड़े बाधक बन रहे हैं। प्रत्येक नया दिन नये प्रश्न, नई समस्याएं, लेकर आता है। उन समस्याओं की जटिलताएं अत्यधिक विघ्नकारी हैं।

पृष्ठ ९७—प्राणी है ... ... ज्ञानाम्बु से ॥७-८॥

शब्दार्थ—ज्ञाता=ज्ञानी। यन्त्रिता=नियंत्रित। निरस्त=निराश। व्यापी=दीर्घ। आमूल=जड़ से अर्थात् पूरी तरह। सिक्त=सींचो। ज्ञानाम्बु=ज्ञान रूपी जल।

भावार्थ—मनुष्य तो यह समझता है कि मैं पूर्णतया स्वाधीन हूँ और अपनी इच्छा के अनुसार सदैव ही अपने कार्य पूर्ण कर सकता हूँ। इसके विपरीत ज्ञानी लोग कहते हैं कि मनुष्य काल और कर्म आदि के अधीन हैं। मनुष्य की स्वतन्त्रता घटनाओं के प्रवाह में पड़ कर नियंत्रित हो जाती है।

ऊधव देखो ! यद्यपि मेरे हृदय में व्रजभूमि जाने की तीव्र उत्कंठा है तदपि मैं प्रतिदिन दुविधा में पड़ कर निराश हो जाता हूँ। मेरे वियोग से व्रजभूमि प्रतिदिन जल रही है। आप व्रजभूमि जाइये ! दया करके उसे अपने ज्ञान रूपी जल से पूरी तरह सींच दो।

अलंकार—रूपक।

मेरे हो ... ... गोपेश का ॥९-१०॥

शब्दार्थ—विज्ञ=ज्ञानी। अनुरागिनी=प्रेम करने वाली। लघ= कम। तोष=संतोष।

भावार्थ—आप मेरे भाई के समान हैं। आप श्रेष्ठ विद्वान हैं। आनन्द की साक्षात् मूर्त्ति हैं। (आनन्द से तात्पर्य ब्रह्म ज्ञान के आनन्द से है)। मैं किन कारणों से अभी तक ब्रज नहीं जा सका, यह भी तुम भली भाँति जानते हो। माता यशोदा मुझे कितना प्रेम करती है व मुझे पिता तथा गोपियाँ कितने प्रिय हैं, यह बात भी तुमसे छिपी हुई नहीं है अतः प्रातःकाल ही आप ब्रज जाइये।

हे मित्र ! आप ब्रजवासियों को ऐसा श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान करना जिससे उनकी विरह-पीड़ा कम हो सके तथा उनका शोक नष्ट हो सके। सम्पूर्ण ब्रजवासी शान्ति प्राप्त करें और मुझ से विछोह की अग्नि में दग्ध न होवें। आप अपने ज्ञान से माता यशोदा तथा बूढ़े नन्द बाबा को विशेष रूपेण संतोष प्रदान करना।

जो राधा ... ... निजागार वे ॥११-१२॥

शब्दार्थ—तनया=पुत्री। दिव्यांगना=अलौकिक। मग्नभूत=

डूबी हुई। वियोगाब्धि=वियोग रूपी समुद्र। पोत=जलयान। श्याम-वपु=श्याम शरीर वाले। निजागार=अपने घर।

भावार्थ—राजा वृष भानु की पुत्री राधा, अलौकिक सुन्दरी है। वह व्रजभूमि, स्त्री जाति तथा अपने वंश की शोभा है। हाय! वह मेरे विरह रूपी सागर में डूब रही होगी; हे मित्र! यदि सभव हो सके तो जलयान बन कर उसकी रक्षा करना, उसे डूबने से बचाना।

इस प्रकार श्याम शरीर वाले कृष्ण ने अपनी निजी बात अपने प्रिय मित्र को बता दी। ब्रज में आवश्यक मर्यादा तथा आचार व्यवहार की उन्हें जानकारी कराई। ऊधव ने आदर सहित यह सब सुना और ब्रज जाना स्वीकार कर लिया। फिर अपने प्रिय मित्र से विदा होकर अपने घर आए।

अलंकार—११वें पद में रूपक।

पृष्ठ ६८—प्रातःकाल ... ... सर्वांग हो ॥१३-१४॥

शब्दार्थ सूत=सारथी। स्नेहाम्बु=प्रेम रूपी जल। मनोज्ञ=मोहक। श्यामायमाना=हरी-भरी। चूड़ायें=चोटियाँ। पयोद=मेघ। सद्धूम=सुन्दर धुआँ।

भावार्थ—प्रातःकाल ऊधव ने एक अनुपम रथ मंगवाया और सारथी को साथ लेकर गोकुल की ओर चल दिए। वे इस समय व्रजवासियों के प्रति दयावान थे तथा श्रीकृष्ण के प्रेम रूपी जल से भीग रहे थे। जिस समय वे सुन्दर ब्रज में पहुंचे तो वृन्दावन की मोहक, मधुर व हरी-भरी भूमि देख कर अत्यन्त मोहित हो गए।

अब उनकी दृष्टि के सम्मुख श्रेष्ठ पर्वत गोवर्धन खड़ा था। उसकी चोटियाँ शान्त आकाश में दूर से ही दिखाई दे रही थीं। ऊधव को वे चोटियाँ सुन्दर मेघ-खंडों के तथा सुन्दर धुएँ के ढेर के समान प्रतीत हुईं। गोवर्धन पर्वत सब ओर से अच्छे फूलों, मनोहर फलों तथा प्रशंसनीय वृक्षों से एक अलौकिक शोभा लिए था।

ऊंचा शीश ... ... था पूजता १५-१६॥

शब्दार्थ—सर्वोच्चता दर्प=सबसे ऊँचा होने के अभिमान से। परिशोभमान=सुशोभित। व्याज=बहाने से। श्री-पद्मा-पति=विष्णुभगवान।

भावार्थ—गोवर्धन पर्वत अपना सिर ऊंचा करके आनन्द हित आकाश को देख रहा था अथवा सबसे अधिक ऊँचा होने के अभिमान से गौरव अनुभव कर रहा था अथवा अत्यधिक आनन्द से संसार में यह प्रचार कर रहा था कि मैं ब्रज की शोभायमान भूमि की सुन्दरता का माप हूं अर्थात् मुझे देख कर ही ब्रज के सौन्दर्य का अनुमान लगाया जा सकता है।

गोवर्धन की गोद में पुष्पों से सुशोभित अनेक वृक्ष विराजमान थे। वे इस पर्वत की प्रफुल्लता की घोषणा अत्यधिक गर्व से करते थे अथवा फूलों वाले वृक्षों के बहाने से गोवर्धन पर्वत अपने फूलों भरे हाथों को ऊपर उठा कर विष्णु के चरण कमलों को पूज रहा था।

अलंकार—दोनों पदों में उत्प्रेक्षा। दूसरे में अपन्हुति भी।

नाना-निर्झर ... ... जाता कहीं ॥ १७-१८॥

शब्दार्थ—प्रसूत=प्रवाहित। संसक्ति=भीगे हुए। उत्संग=गोद। पात=गिरना। शुचि=पवित्र। सद्वारि=पवित्र जल।

भावार्थ—पर्वत की जल से भीगी हुई गोद से अनेक झरने प्रवाहित हो रहे थे जो मधुर शब्द कर रहे थे और अत्यधिक सुन्दरता से तीव्र गति से झर रहे थे। झरने के विशाल मार्ग पर तीव्र वेग के कारण जो जलकण उठते थे वे बड़े मनमोहक होते थे। जलकणों के उठने व गिरने की शोभा अद्वितीय थी।

उन झरनों का प्रवाह पवित्र व प्यारा था। शुद्ध जल से परिपूर्ण वह प्रवाह अद्भुत वेग से अपने मार्गों पर बहता जाता था। कहीं तो वह सीधे मार्ग पर बहता था और कहीं टेढ़े मार्ग पर। कहीं-कहीं अनेक पत्थरों से टकरा कर वह मुड़ जाता था।

पृष्ठ ९९ होता निर्झर ... ... को बता ॥१९-२०॥

शब्दार्थ—सावर्त्त=भँवर युक्त। उद्भिन्न=फट कर। सत्कीर्ति=यशोगान। अचिन्त्य-गति=ब्रह्म। निचय=समूह। तेजहत=निस्तेज।

भावार्थ—झरने की धारा जब फटकर भँवर युक्त हो जाती थी तो उसमें कानों को मस्त कर देने वाली अद्वितीय ध्वनि उत्पन्न होती थी। ऐसा लगता था मानो वह आनन्द से पर्वतराज गोवर्धन का यशोगान कर रहा था अथवा हर्ष से युक्त हो अपने मधुर कण्ठ से ब्रह्म के गुणों का बखान कर रहा था।

पर्वत की खोहों तथा गुफाहों के समूहों में एकत्र जल अस्वच्छ, निस्तेज, वेग रहित तथा रुका हुआ था। उधर झरने का जल शुभ्र तथा उत्साह की प्रतिमा था। इस प्रकार वह सब जीवों को गतिशील वस्तु का महत्त्व व गौरव समझा रहा था।

अलंकार——१९वें पद में उत्प्रेक्षा।

देता था ... ... संसर्गतः ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—सानुराग=प्रेम सहित। किम्वा=अथवा। पयोद-स्वन= बादलों का गर्जन। भूधर=पर्वत। सुदरागता=सुदूर+आगता=दूर से आने वाली। सद्वायु-संसर्गतः=मधुर वायु का सामीप्य पाकर।

भावार्थ—झरनों का प्रवाह देख कर हृदय में ऐसी कल्पना होती थी मानो यह जलधारा नहीं बल्कि पर्वत से स्वर्गीय आनन्द की धारा निकल रही है अथवा पर्वत अपनी गोद में स्थित वृक्षादि के लिए प्रेम से द्रवित होकर जलदान कर रहा है अथवा व्रजेश्वर कृष्ण से विछोह की याद में अश्रुपात कर रहा है। ऊधव को मार्ग में मेघ-गर्जन जैसा गंभीर शब्द सुनाई पड़ा। यह शब्द बहुत दूर से आ रहा था।

अब वही शब्द पर्वत के किसी छिद्र से निकल कर तथा मधुर वायु का सामीप्य पाकर जोर से सुनाई देने लगा।

अलंकार—२१वें में उत्प्रेक्षा।

सद्भावाश्रयता .. .. महा ॥२३-२४॥

शब्दार्थ—सद्भावाश्रयता=पवित्र भावों को आश्रय देने वाला। शास्ता=राजा। भंगिमा=हावभाव। गिरीन्द्र=पर्वतराज अर्थात् गोवर्धन। पत्र-मान=पत्तों वाले। विटपी=वृक्ष।

भावार्थ—पवित्र भावों को आश्रय देने वाला, कल्पनातीत कठोरता, निर्भयता व ऊँचाई से युक्त; अनेक प्रकार की कुशलताओं की जड़, अटलता व अनोखी क्षमाशीलता का स्वरूप; गोवर्धन में ये सब गुण थे जो राजा के हाव-भाव के परिचायक थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो पर्वतराज गोवर्धन अपने नीचे के भाग (तलहटी) पर शासन कर रहा हो।

उप्मा तथा उत्प्रेक्षा अलंकार।

उस श्रेष्ठ एवम् विशाल पर्वत पर करोड़ों वृक्ष सुशोभित थे। इन वृक्षों की शाखाएँ जब (वायु वेग से) हिलतीं थी तो मन मोह लेती थीं। शाखाओं पर बैठे पक्षी समूह मधुर चहचहाठ कर रहे थे। पत्तों से हरे भरे वृक्ष अनेक पुष्पों से शोभायमान थे।

पृष्ठ १००—जम्बू अम्ब ... ... उत्कण्ठ हो ॥२५-२६॥

शब्दार्थ—जम्बू=जामुन। दाड़िम=अनार। शिशपा=शीशम। इंगुदी=हिंगोट। कदली=केला। बिल्व=बेल।

भावार्थ—जामन, आम, कदम्ब, नीम, फालसा जम्बीर आँवला, लीची, अनार, नारियल, इमली, शीशम, हिंगोट, नारंगी, अमरूद, बेल, बेर आदि फलों के वृक्ष तथा सागौन, शाल, तमाल, ताल, केला तथा शाल्मल आदि वृक्षों की पंक्तियाँ विद्यमान थीं।

विशेष—यहाँ वस्तु परिगणन प्रणाली अपनाई गई है।

आम के वृक्ष अनार के वृक्षों से ऊँचे थे जबकि शीशम के वृक्ष आम से भी ऊँचे। इस प्रकार वृन्दावन में ऊँचे-नीचे अनेक वृक्ष विद्यमान थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो ब्रज की जनता के समान वृक्ष भी अपना सिर ऊँचा-उठाकर अत्यन्त उत्सुकता से कृष्ण का मार्ग देख रहे थे।

अलंकार—उपमा तथा उत्प्रेक्षा।

गिरीन्द्र ... ... रसाल की ॥२७-२८॥

शब्दार्थ—व्याप=व्याप्त। असेत=नीले। जम्बालिनि=यमुना नदी। पेशलता=मोटापन। रसाप्लुता=रस-युक्त। रसाल=आम।

भावार्थ पर्वतराज गोवर्धन पर व्याप्त जामनों की शोभा दर्शनीय थी, वन प्रदेश में तो और भी प्रशंसा योग्य थी। नीली यमुना के किनारों पर ता जामुनों की शोभा अत्यन्त अलौकिक थी।

आम की रस की अधिकता उस सुन्दर वन भूमि को भी रसयुक्त बना रही थी। आम खूब पके हुए, मोटे तथा अत्यन्त मोहक लग रहे थे।

सु-वर्त्तलाकार ... ... निम्ब का ।।२९-३०।।

शब्दार्थ—सुवर्त्तुलाकार=गोलाकार। कदम्ब=कदम्ब, गुच्छा। पंचाग=पाँच अंग—जड़, शाखा, पुप्प, पत्र, फल।

भावार्थ—कदम्ब के गोल-गोल फूल देखने योग्य थे। पुष्पों के भार से झुकी हुई शाखाएँ नेत्रों को सुख पहुंचाने वाली थीं। हरे-हरे पत्तों के मध्य कदम्ब के पुष्पों की छवि अलौकिक थी।

कदम्ब में यमक अलंकार है।

नीम वृक्ष अपने पाचों अगों के प्रभाव से सारे वन को हमेशा ही नीरोग बनाता था। अपने नीम होने के गर्व में नीम का वृक्ष किसी गुणवान वैद्य के समान वन में खड़ा था।

उपमा अलंकार।

पृष्ठ १०१—लिये हथेली ... ... सदम्बुता ।।३१-३२।।

शब्दार्थ– सदम्बु=सरसता। हथेली समगात-पत्र=हथेली जैसा पत्ता।

भावार्थ—हथेली के समान सुन्दर पत्तों पर अत्यन्त अपूर्व व काले फालसे बड़े अच्छे लग रहे थे। फालसों का वृक्ष अत्यन्त हर्षित था। सदैव ऐसा प्रतीत होता था मानो अतिथियों के स्वागत के लिए वह खड़ा हो।

सुन्दर शाखा और पत्तों में जिनके फल हिल-डुल नहीं रहे थे वरन् मधुर विचारों में खोये खड़े थे। नींबू के वृक्ष के फल अपनी सरसता को धीरे-धीरे प्रकट कर रहे थे।

अलंकार—३१वें पद में उपमा तथा व्यक्तिकरण।

दिखा फलों ... ... बता रहा ।।३३-३४

शब्दार्थ—कदंश=बुरा भाग। मधुमान=शहद के समान मीठा। वर-पोच=अच्छा-बुरा, श्रेष्ठ-निकृष्ठ।

भावार्थ—आँवले का वृक्ष अपने कच्चे फल तथा हिलती-डुलती पत्तियाँ दिखाकर, चंचल प्रवृत्ति वाले मनुष्य की उतावली को प्रकट कर रहा था।

लीची का वृक्ष अपने फलों के खराब छिलके में रसयुक्त तथा शहद जैसे मीठे गूदे में बुरा सा बीज दिखा कर अच्छे-बुरे का भेद प्रकट कर रहा था अर्थात् बुरा दिखाई देने वाला व्यक्ति हृदय का अच्छा हो सकता है जैसे गन्दे छिलके में रसाल गूदा, इसी प्रकार भला प्रतीत होने वाला व्यक्ति हृदय से खराब निकल सकता है जैसे रसयुक्त गूदे में बुरी सी गुठली।

विशेष—वर्णन में उपदेशात्मिकता है।

विलोल ... ... नारिकेल का ॥३५-३६॥

शब्दार्थ– विलोल=चंचल। सुदन्त=सुन्दर-दाँत। समाद्रिता=सम्मानिता। द्रुमावली=वृक्ष-पंक्तियाँ। पान्थ=पथिक। सुकेलि-कारी=क्रीड़ा करने वाला।

भावार्थ—चंचल जीभ जैसे लाल पुष्पों से व फटे हुए फलों में चमकने वाले दाँत जैसे दानों से युक्त अनार के वृक्षों की पंक्तियाँ वन भूमि की अनुपम शोभा को बढ़ा रही थीं।

अपनी शाखाएँ हिलाकर, नये फूलों को खिलाकर, सुन्दर पत्तों की पंक्तियों को नचाकर और फलादि लाकर, अनेक प्रकार की क्रीड़ाएँ करके नारियल का वृक्ष पथिकों के मन को अत्यन्त मोहित करता था।

अलंकार—३५वें में उपमा।

पृष्ठ १०२—नितांत लघ्वी ... शिंशाया ॥३७-३८॥

शब्दार्थ—लघ्वी=छोटी। सुमौलि=सुन्दर चोटी वाली। स्वकीय=अपनी। शिंशपा=शीशम।

भावार्थ - अत्यन्त छोटी-छोटी परन्तु सघनता को बढ़ाने वाली अनेक

पत्तियों को धारण करने वाली, गहन छाया देने वाली, पुष्पों से सुशोभित, स्वच्छ शरीर वाली इमली की सुन्दर शिखा थी।

अपनी चतुराई से सभी के हृदयों को आनन्दित करने वाला, अपनी बनावट पर स्वयं ही मोहित होने वाला शीशम अपना सिर हिलाने में मस्त था।

सु-पत्र ... ... नागरंग का ॥३९-४०॥

भावार्थ—इंगुदी वृक्ष के पत्ते हिल-डुल नहीं रहे थे। फल व शाखाएँ भी नहीं हिल रही थीं। इस प्रकार सुन्दर अंगों वाला इंगुदी का वृक्ष अपने संकेतों द्वारा अपना प्रेम प्रकट कर रहा था।

सुनहरी फलों रूपी सोने के बने कई तमगे लगाकर, सुन्दर हरे पत्तों रूपी वस्त्रों से सुसज्जित, अत्यन्त अनोखे ढंग से नारंगी का रंगीला वृक्ष खड़ा था।

पृष्ठ १०२—अनेक ... ... बिल्व का ॥४१-४२॥

शब्दार्थ—समोये=युक्त। रोदसी=पृथ्वी और आकाश के मध्य। प्रसून=पुष्प। बिल्व=बेल। विलोलता-वर्जित=चंचलता रहित।

भावार्थ—नाना आकार, प्रकार तथा रंगों के व अमृतयुक्त अनेक फलों से सुसज्जित, आनन्दकारी अमरूद एक दूसरे आम की तरह पृथ्वी व आकाश में विराजमान था।

अपनी गोद में पत्ते तथा पुष्पों के मध्य फल लेने के बहाने शंकर की सुन्दर प्रतिमा धारण किए, चंचलता रहित बेल का वृक्ष शंकर की पूजा में प्रेम से लीन था।

विशेष—पुष्प के मध्य लगा फल शिवलिंग सा प्रतीत होता है।

अलंकार—४२वें पद में अपन्हुति तथा उपमा।

पृष्ठ १०३—कु-अंगजों ... ... सांगता ॥४३-४४॥

शब्दार्थ—अंगज=अंग। विदारिता=फटी हुई। बदरी=बेर। मनोज्ञता=मनोहरता। सुगीत=यशस्वी। सांगता=अंगों की सुव्यवस्था।

भावार्थ —बेर के वृक्षों की पक्ति खड़ी थी । उसके अपने बुरे अंगों-काँटों—से दूसरे अंगों (पुष्पों) को जो कष्ट मिल रहा था (काँटे पुष्पों को चीर दे रहे थे) उसके द्वारा वह समझदार व्यक्तियों को सदा बताता रहता था कि अपने ही बुरे अंग कितने कष्टदायक होते हैं ।

यशस्वी सागौन वृक्ष की सम्पूर्ण शाखाएँ, फल, फूल जड़ तथा सुन्दर पत्तों की मनोहरता, कोमलता व सुव्यवस्थता देख कर हृदय अत्यन्त प्रसन्न होता था ।

अलंकार—४३वें पद में उत्प्रेक्षा ।

नितान्त ... ... तमाल था ॥४५-४६॥

शब्दार्थ— नभ-चुम्बनोत्सुका=आकाश चुमने की इच्छुक । द्रुमोच्चता=वृक्ष की ऊँचाई । महनीय=महान । घन=गहन ।

भावार्थ—विशाल शरीर वाले शाल वृक्ष की विशालता पक्षियों में प्रेम बढ़ाने वाली थी तथा वृक्ष की ऊँचाई आकाश का चुम्बन करने की बहुत इच्छुक थी अर्थात् शाल का वृक्ष बहुत ऊँचा था ।

तमाल का वृक्ष अपने शरीर की श्याम वर्ण आभा से, अपने गहन पत्तों के समूह की हरियाली से व घनी छाया से (प्रकाश की एक किरण भी नहीं अतः अछिद्र) वनभूमि को अंधकारपूर्ण बना रहता था ।

अलंकार—४५वें पद में उत्प्रेक्षा तथा उपमा ।

विचित्रता ... ... लग्न था ॥४७-४८॥

शब्दार्थ समुत्पादन=उत्पन्न । उत्तोलन=ऊँचा उठाना । ताल=ताड़ । बालेंदु=बाल चन्द्रमा ।

भावार्थ—ताड़ के वृक्षों का समूह अपना सिर ऊँचा उठाये खड़ा था और इस प्रकार गर्व से अन्य वृक्ष-समूह को नीचा दिखा रहा था । अपनी ऊँचाई के कारण ताड़-वृक्ष दर्शक-समूह में आश्चर्य उत्पन्न करने में समर्थ था अर्थात् आश्चर्य उत्पन्न कर रहा था ।

ठीक पके व पीले फल-समूह के बहाने अपनी गोद में अनेक बाल-

ऊ गा लेकर तथा पत्तों रूपी हरी-हरी पताका को उड़ा कर केले का वृक्ष सुन्दर क्रीड़ा में मग्न था।

अलंकार—४८वें पद में अपन्हुति।

पृष्ठ १०४—स्वकीय ... ... मोचता ॥४६-५०॥

शब्दार्थ – आरक्त=लाल। भृगांदिक=भँवरा आदि। प्रवंचनाशील=धोखा देने वाला। सशोक=शोक सहित। अशोक=वृक्ष।

भावार्थ—अपने लाल रंग के पुष्प-समूह से पक्षी, भँवरे आदि को बहका-बहका कर धोखे बाज विशाल शाल्मली वृक्ष वन में निडर के समान खड़ा था।

अपनी शाखा बढ़ाने के बहाने प्यार का हाथ बढ़ाकर तथा घने पत्तों की हरियाली दिखाकर, परोपकारी व्यक्तियों के समान अशोक का वृक्ष सदा ही दुःखी का दुःख दूर करता था।

अलंकार—५०वें पद में उपमा तथा अपन्हुति।

वमुग्धकारी ... ... मत्तसा ॥५१-५२॥

शब्दार्थ—सित=श्वेत। सुरंजिता=सुन्दर ढंग से रंगी हुई। मधूकशाखी=महुए का पेड़। विह्वलताभिभूत=अत्यन्त उत्सुक।

भावार्थ—मन मोहने वाले श्वेत और पीले रंग के अनेक सुगन्धित सुन्दर पुष्पों से युक्त पारिजातक वृक्ष की अगणित पत्तों की हरियाली सुन्दर प्रतीत होती थी।

अपने वायु से हिलते डुलते पत्र-समूह में अपने ही शरीर को मोहित करने वाली सम्पत्ति—आभा—से मोहित होकर महुए का वृक्ष मानो मधुपान (शराब पीने में) करने में अत्यन्त मग्न था।

विशेष—महुवे के फूलों से शराब बनती है, इसी ओर कवि का संकेत है।

अलंकार—५२वें पद में उपमा।

प्रकाण्डता ... ... विराजता ॥५३-५४॥

शब्दार्थ--प्रकाण्डता=विराटता। विभु=ईश्वर। पल्लोद्भवा=पत्तों से उत्पन्न। प्रभूत=बहुत। प्रसू=उत्पन्न करने वाला। विदानुकारी=छैले का अनुकरण करने वाला।

भावार्थ—पीपल वृक्ष की विराट्ता ईश्वर के यश को बढ़ाने वाली थी। उसकी अनक शाखाएँ बहुत दूर-दूर तक थैली हुई थीं। उसकी पत्तियों से उत्पन्न चंचलता वायु के प्रवाह को प्रकट करने वाली थी।

अगणित अनोखे फल समूह से सुशोभित, बहुत से पत्तों से ढका हुआ, गहन छाया देने वाला तथा जटाधारी बट का वृक्ष किसी छबीले पुरुष की तरह वन में विराजमान था।

पृष्ठ १०५—महा-फलों ... ... आतका ।।५५-५६।।

शब्दार्थ--प्रयोगिता=उपस्थिति। पनसोपयोगिता=कटहल की उपयोगिता। आततायीपन=दुष्टता।

भावार्थ—कटहल के बड़े-बड़े फलों से सजी वनभूमि बुद्धिमान व्यक्तियों को बता रही थी कि ऐश्वर्यशाली बनने के लिए कटहल की उपस्थिति आवश्यक है।

बीज देने के बहाने अपने मीठे फलों को सदा ही विषैला बनाने वाला आत का वृक्ष, वृक्ष-समूह में खड़ा अपनी कुटलता तथा अत्याचार प्रकट कर रहा था।

विशेष—आत वृक्ष के फल तो मीठे होते हैं पर गुठली विषैली होती है।

प्यारे-प्यारे ... ... लतायें ।।५७।।

शब्दार्थ—निलय=घर। सरसा=सरस। लोभनीया=प्रलोभित करने वाली।

भावार्थ—सम्पूर्ण वनस्थली में वायु के प्रवाह से लता-बेलें फैली हुई थीं। लताएं मनमोहक व अनोखे पुष्पों से शोभायमान थीं। वे काली, नीली तथा हरी पत्तियों से आच्छादित थीं। वे विभिन्न लीलाओं का क्रीड़ा-स्थल, सरस तथा प्रलोभित करने वाली थीं।

स्व सेत ... ... लवंग की ।।५८-५९।।

शब्दार्थ--सेत=श्वेत। अतिमुक्त संज्ञका=अतिमुक्त नाम वाली, मालती। मेधाविनि=चतुर। ललामता=सुन्दरता। प्रलुब्ध=मुग्ध। लवंग=लौंग।

भावार्थ—श्वेत छवि वाले अलौकिक पुष्प सहित अतिमुक्त नामक लता पृथ्वी पर शोभायमान थी। वन में अत्यन्त बुद्धिमती माधवी लता आनन्द प्रदान कर रही थी।

आकर्षक लौंग की लता अपने पत्र-समूह के सौन्दर्य, कोमल शोभा और सरसता से अपने नयनों को मुग्ध कर रही थी।

पृष्ठ १०६—स-मान ... ... रसिका लता ॥६०-६१॥

शब्दार्थ—स-मान=रूठी हुई। विलुण्ठिता=लोटती हुई। प्रवंचिता=रहित। असितावदात=नील वर्ण। शयाना=लेटी हुई। तपोरता=तप में लीन।

भावार्थ—नीले तमाल की प्रियतमा के समान श्याम वर्ण की प्रियंगु लता अपने प्रियतम की सुन्दर गोदी से उतर कर रूठी हुई पृथ्वी पर लेटती थी।

कहीं रुचिपूर्वक पृथ्वी पर लेटी और कहीं वृक्षों से लटकी-रत्तिका लता सोने के फलों जैसे फल प्राप्त करने की इच्छा से वन में तपस्या में लीन थी।

अलंकार—दोनों पदों में समासोक्ति।

सु-लालिमा ... ... गुंजिका ॥६२॥

शब्दार्थ—विलोकनीय=देखने योग्य।

भावार्थ—यह सुन्दर गुंजिका अपने फलों की रमणीय लाली में सुन्दर दर्शनीय कालिमा दिखा कर बता रही थी कि कभी-कभी बुरी वस्तु भी भली वस्तु के साथ मिल कर अच्छी बन जाती है।

नव निकेतन ... ... विराजती ॥६३-६४॥

शब्दार्थ---जनयिता=उत्पन्न करने वाला। मधु-सिक्त=मधु-सिंचित। वेणुका=बाँसुरी। खादक=खाने वाले। मृसण=कोमल। प्रलुब्ध=लोभायमान। समा=समान।

भावार्थ - मधुर हरियाली का निवास-स्थान, बाँसुरी को मधु-सिंचित स्वर देने वाला बाँस का वृक्ष भावुकता से परिपूर्ण, सरसता से भरपूर वन में खड़ा था।

वन में कोमल घास का ढेर शोभायमान था। उस घास की नीलिमा नीलम की नीलिमा के समान थी। वन के घास खाने वाले पशु तथा अन्य पशु-समूह उस घास को ललचायी दृष्टि से देखते थे।

अलंकार—६४वें पद में व्यतिरेक।

तरु अनेक ... ... झाड़ियाँ ॥६५॥

शब्दार्थ—उपस्कर=सामग्री। अकटंका=काँटों से रहित।

भावार्थ—अनेकों झाड़ियाँ पुष्पों तथा फलों से लदी वन को शोभान्वित करती थीं। वृक्ष अनेक प्रकार की सामग्री से सज्जित होकर अत्यन्त मनोहारी तथा काँटों रहित थे।

पृष्ठ १०७—अनूठी ... ... विलसती ॥६६॥

शब्दार्थ—सुषमा=सौन्दर्य।

भावार्थ—भूमि वन को अनुपम कान्ति से, रसयुक्त सौन्दर्य से तथा सरसता से अनेक गुणों वाली बना देती थी। उसमें अनोखे पुष्पों की विभिन्न दलवाली सुन्दरता थी व जड़ी-बूटियाँ बहुत उत्पन्न होती थीं और विराजमान थीं।

सरसतालय ... ... कलाप की ॥६७-६८॥

शब्दार्थ—सरसतालय=सरसता के आश्रय। मुकुर-मंजुल=शीशे के समान सुन्दर। वीचियाँ=लहरें। कल-कथा=सुन्दर कहानी।

भावार्थ—वन में अनेक तालाब सुशोभित थे। वे जल से भरपूर तथा आकर्षक थे। वे सरसता के आश्रय व सौन्दर्य से युक्त थे। (उनका जल इतना निर्मल था कि) वे वृक्ष-समूहों के लिए सुन्दर दर्पण के समान थे।

उन तालाबों की मनोहर गोदी में अर्थात् तल पर सरस लहरें क्रीड़ा कर रही थीं। ये लहरें मानो प्रकृति के हाथ थे और जलक्रीड़ा की सुन्दर कहानी लिख रहे थे।

अलंकार—६७वें उपमा तथा ६८वें में उत्प्रेक्षा।

द्युतिमती ... ... कमलासना ।।६९-७०।।

शब्दार्थ—द्युतिमती=कान्तिमान। अनुत्तम=सर्वोत्तम। कुलिश=वज्र। स्निग्ध=मधुर। जलजात=कमल। कमलासना=लक्ष्मी।

भावार्थ—कान्तिमान सूर्य के तेज से तालाब का जल भी कान्तिमय हो गया था अर्थात् सूर्य की सुनहरी किरणों में जल भी चमक रहा था। वह सर्वोत्तम दीप्ति का भंडार प्रतीत होता था। वह काँच और वज्र के समान निर्मल था।

अत्यन्त मधुर व मनोहारी पत्तों में कमलों के समूह भली भाँति खिले हुए थे। तालाब अत्यन्त सजे हुए प्रतीत होते थे। ऐसा लगता था मानो कमलों पर लक्ष्मी विराजमान हों।

अलंकार—६९ में उपमा तथा ७०वें में उत्प्रेक्षा।

विकच-वारिज ... ... अवलोकते ।।७१।।

शब्दार्थ—विकच=विकसित।

भावार्थ—विकसित कमल-समूह को देखकर मन में यह विचार जागृत होता था कि तालाब अपने कमल रूपी प्रसन्न नेत्रों से वन की शोभा देख रहा था।

अलंकार—उत्प्रेक्षा।

पृष्ठ १०८—सुकूल-वाली ... ... पुंज सी ।।७२-७३।।

शब्दार्थ—कलि-कालिमापहा=कलियुग के पापों को नष्ट करने वाली। वीचि-संकुला=लहरों से युक्त। कलिदजा=यमुना। प्रदीप्त=धूप। अश्वेत=काली।

भावार्थ—वन के एक ओर कलाओं से युक्त, क्रीड़ा करती हुई यमुना विराजमान थी। उसके सुन्दर किनारे थे। वह कलियुग के पापों को नष्ट करने वाली थी। अनोखी लीलाओं से युक्त तथा लहरों से भरपूर थी।

यमुना नदी की धारा काली छवि से युक्त थी। उसमें धूप की सफेदी

मिल रही थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो नीलम-मणि की नीली आभा में हीरे का श्वेत प्रकाश मिल रहा हो।

अलंकार—७३वें पद में उत्प्रेक्षा।

विलोकनीया ... ... बनी ॥७४-७५॥

शब्दार्थ—नवाम्बुदों=नवीन मेघों। फणीश=कालदेह नाग। पतगजा=यमुना। असितांगिनी=श्याम शरीर वाली। तीसी=एक फूल विशेष।

भावार्थ—यमुना की रमणीय श्याम घटा आकाश की नीलिमा के समान, नवीन मेघों की सुन्दर कालिमा के समान तथा वनविकसित तीसी के पुष्प के समान दर्शनीय थी।

यमुना की कालिमा का कारण कालीदेह नाग का उसमें रहना अथवा उसका विष नहीं था और न ही पर्वत या भूमि का प्रभाव था। वह तो श्रीकृष्ण का लगातार ध्यान करने के कारण काली पड़ गई थी।

अलंकार—७४वें में उपमा तथा ७५वें में हेतूत्प्रेक्षा।

स-बुद्बुदा ... ... श्यामता ॥७६-७७॥

शब्दार्थ—स-बुद्बुदा=बुलबुलों से युक्त। फेन=झाग। आवर्त=भँवर। तरंगमाला कुलिता=लहरों के समूह से सुशोभित। स्वछाययया=अपनी छाया से।

भावार्थ—यमुना बुलबुलों और झाग से युक्त थी; पानी बहने से मधुर स्वर निकल रहा था; अनेक भँवर पड़ गये थे; वह प्रसन्न थी; उसके प्रवाह में अनोखी छवि विद्यमान थी; उसमें अनेक लहरें सुशोभित थीं।

यमुना के किनारे पर फल-फूल वाले अनेक वृक्ष पौधे सुशोभित थे। वे वृक्ष अपनी छाया यमुना की काली धारा पर डाल कर कालिमा को और भी गहन कर रहे थे।

पृष्ठ १०६—कभी खिले ... ... प्रवृत्त हैं ॥७८-७९॥

शब्दार्थ—पतंगजा=यमुना। प्रवृत्त=लीन।

भावार्थ—वृक्ष-समूह कभी अपने विकसित फूल नदी-प्रवाह में गिरा कर यमुना को पुष्पवती कर देता था और कभी फल गिरा कर उसे फल-युक्त बनाकर शोभित करता था।

वृक्ष समूह के इस कार्य को देखकर यह विचार उठता था स्यात् यमुना के अहसानों के भार से झुक कर अथवा प्रेम से भरकर वह उसकी अर्चना में लीन है।

अलंकार—७६वें में उत्प्रेक्षा।

प्रवाह होता ... ... तमारि को ॥८०-८१॥

शब्दार्थ—वीचि-हीन=लहर-रहित। वन-अन्य=दूसरा वन। सहस्रधा=हजारों खंड। कपाल=भाग्य। तमोमयी=काली। तमारि=अन्धकार का शत्रु, सूर्य।

भावार्थ—जिस समय यमुना के प्रवाह में लहरें नहीं उठ रही होती थीं तो उसमें वन का प्रतिबिम्ब पड़ता था और ऐसा प्रतीत होता था मानो एक दूसरा वन हो। पर जैसे ही नदी में लहरें उठती थीं वैसे ही वृक्षों सहित वन हजारों खंडों में विभजित हो जाता था।

भाग्य की कालिमा अर्थात् दुर्भाग्य नहीं बदल सकता और पुत्री अपने पिता जैसी नहीं होती। यह बात तब मालूम होती है जब अन्धकार के शत्रु, सूर्य (श्वेत) की पुत्री यमुना, जो अन्धकार जैसी काली है, को देखते हैं।

विशेष—सूर्य अन्धकार अर्थात् कालिमा का शत्रु है जबकि उसकी पुत्री (मान्यताओं के अनुसार) यमुना काली है अतः वह अपने पिता जैसी नहीं है।

कलित-किरण ... ... दृगों को ॥८२॥

शब्दार्थ—विम्ब=प्रतिविम्ब। रवितनया=यमुना। केलि=क्रीड़ा।

भावार्थ—जब सूर्य पुत्री यमुना आकाश में सुशोभित सुन्दर किरण-माला युक्त सूर्य अथवा सुन्दर प्रतिबिम्ब वाला चन्द्रमा अपने अंक में लेकर क्रीड़ा में मग्न होती तो दर्शक वृन्द के नेत्रों को अत्यन्त आनन्दित करती थी।

हरीतिमा ... ... लतामयी ॥८३-८४॥

शब्दार्थ— मनोज्ञता=रमणीयता । शुभ-सिद्ध-पीठ=सुन्दर पवित्र प्रदेश । मिलिन्द=भँवर ।

भावार्थ—हरियाली के अपार सागर जैसा अर्थात् हरा-भरा, मनोहरता की रमणीय-भूमि जैसा तथा अपूर्वता के सुन्दर पवित्र प्रदेश जैसा शान्त वृन्दावन देखने योग्य था ।

चहचहाने वाले पक्षी-समूह के स्वर से गुंजित, सदैव आनन्द से गुंजार करने वाले भँवरों वाले कुंज वृन्दावन में सुशोभित थे । कुंजों में प्रसन्न, फली-फूली लताएँ और पौधे मुखरित थे ।

अलंकार— ८३वें पद में उपमा ।

पृष्ठ ११०—प्रशस्त ... ... ललामता ।।८५-८६।।

शब्दार्थ—प्रशस्त=श्रेष्ठ । उपपत्ति=कारण । लोहित=लाल । ललामता=सुन्दरता ।

भावार्थ—लताओं की हाथ के समान लम्बी-चौड़ी शाखाएँ अकारण ही नहीं फैली हुई थीं । वे इस प्रकार अपनी भुजाएँ फैलाकर मानों वृक्षों को अपने से आलिंगन करने के लिए उत्सुक बना रही थीं ।

कई अनोखे वृक्षों की सुन्दर गोद में मनोहारी लाल पत्ते सुशोभित थे। वे अपने रक्तवर्ण से वन की श्रेष्ठता में सदैव वृद्धि करते थे ।

अलंकार—८५वें पद में उपमा, समासोक्ति व छेकानुप्रास ।

प्रसूनशोभी ... ... माधवी-लता ।।८७-८८।।

शब्दार्थ—स्मिता=मुस्कराती हुई । समालिंगित=आलिंगन में आबद्ध । सुदूलिता=हिलती हुई । एलालतिका=इलायची की बेल । सु-लालिता= अच्छी तरह से पालित ।

भावार्थ पुष्पों से सुशोभित वृक्ष-समूह के मध्य में फूली हुई सुन्दर लताएँ शोभा पा रही थीं । स्थान-स्थान पर विराजती हुई वे सुन्दर लताएँ वृक्षों द्वारा आलिंगन किए जाने पर हँसती हुई रमणी जैसी प्रतीत होती थीं।

किसी-किसी स्थान पर इलायची की लता, लौंग की लता के साथ

मधुर भाव से झूम रही थी तो कहीं पर पृथ्वी की सुन्दर गोद में भली-भाँति पोषित माधवी लता सुशोभित थी।

अलंकार—८७वें पद में उपमा।

समीर संचालित ... ... कंज था ॥८९-९०॥

शब्दार्थ—सु-केलि=सुन्दर क्रीड़ा। कमनीय कंज=सुन्दर कमल।

भावार्थ—वायु धीरे-धीरे चलकर कहीं तो पुष्पों के साथ सुन्दर क्रीड़ा कर रही थी और कहीं सुन्दर पुष्पों से लदी मनोहारी व प्रसन्न लताओं की शाखाओं को हिलाकर पुष्प-वर्षा में लीन थी।

वायु के चलने से यमुना में बहुत व सुन्दर लहरें उठ रही थीं और कहीं पुष्पों की कलियाँ खिल जाती थीं। वायु कहीं-कहीं सुन्दर कमल के निकट जाकर उसको बड़े अनोखे ढंग से हिलाती थी।

पृष्ठ १११—अश्वेत ऊदे ... ... विनोद था ॥९१-९२॥

शब्दार्थ—अश्वेत=काले। अरुणाभ=लाल। संदली=चंदन के रंग वाली। व्योम पंथ=आकाश मार्ग। सित=श्वेत। रुत=शब्द।

भावार्थ—काले, ऊदे, लाल, बैंगनी, हरे, अमीरी, श्वेत, पीले, संदली तथा अन्य अनेक रंगों के विचित्र वेश-भूषा वाले पक्षियों से वनभूमि सुशोभित थी।

अनेक प्रकार की छवि, रंग-रूप व शब्द वाले पक्षियों के समूह जब आकाश-मार्ग से अत्यन्त आनन्दित होकर आता था तो वन में सर्वत्र आनन्द फैल जाता था।

स-मोद — — — केकिनी लिये ॥९३-९४॥

शब्दार्थ—कलोल=क्रीड़ा। निज नील पुच्छ=अपनी नीली पूंछ के। कलापियों=मोरों। केकिनी=मोरनी।

भावार्थ—विभिन्न मनोहर वर्णों के पक्षी क्रीड़ा में लीन होकर, मधुर स्वर में चहचहाते, आनन्दित होते हुए जब एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर जाते थे तो दर्शक को मोह लेते थे।

मोरों का समूह मोरनियों को साथ लिए वन में घूम रहा था वह अपनी नीली पूंछ पर बनी सुन्दर, कलावाली, मनोरम व शोभावाली चन्द्रिका से वन को सदैव मनोहारी बनाता था।

कहीं शुको ... ... कंठ कोकिला ॥९५-९६॥

शब्दार्थ—कंदरा=बचा हुआ अंश। कपोत=कबूतर।

भावार्थ—कहीं पर पेड़ की सुन्दर व फलों से लदी शाखा पर बैठा तोता का समूह क्रीड़ा में मग्न था। वह अनेक मीठे-मीठे फल खाकर प्रसन्नता से शेष अंश पृथ्वी पर गिरा रहा था।

कहीं पर कबूतरी अपने कबूतर को साथ लिए सानन्द विचरण कर रही थी तो कहीं पर मधुर कंठ वाली कोयल अपने प्रिय के साथ अपना गायन सुना रही थी।

पृष्ठ ११२—कहीं महा ... लुभावने ॥९७ ९८॥

शब्दार्थ—शारिका=मैना। कदाकार=कद-आकार।

भावार्थ—किसी स्थान पर अत्यन्त प्रेमी पपीहा था तो किसी स्थान पर कहानी सुनाने वाली मैनाएँ थीं। कहीं पर (चन्द्रमा की) कला देखने की इच्छुक चकोरी थीं तो कहीं पर सौन्दर्य के भंडार लाल पक्षी थे।

बहुत बड़े शरीर वाले, अत्यन्त भयानक, सौन्दर्य के घर जैसे सुन्दर और सुहावने, अनेक प्रकार की क्रीड़ा करने वाले और मनमोहक अर्थात् सभी प्रकार के अनेक पशुओं से वन भरपूर था।

नितान्त ... ... पीतता ॥९९-१००॥

शब्दार्थ—नितान्त=अत्यन्त। लोमता=बाल। विमोहिता=मोहित। सदंगता=अंगों की सुन्दरता। खनि=खान। नाति=न+अति=जो अधिक न हो अर्थात् कम। असेत=अश्वेत=काली।

भावार्थ—हिरण की अत्यन्त सरलतामयी सुन्दर मूर्त्ति में मिली उसके बालों की कोमलता, अंग-सौन्दर्य व आकर्षणता देखकर कौन मोहित नहीं हो जाता अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति मोहित हो जाता है।

हिरण के शरीर की कमनीयता आकर्षक थी। उसके काले नेत्र हाव-भाव की खान थे। उसकी चाल अत्यन्त अनोखी व मनोहर थी। उसके हल्के पीले शरीर पर सुन्दर धारियाँ अंकित थीं।

असेत ... ... थे कहीं। १०१-१०२॥

शब्दार्थ—प्रलम्ब—लम्बी। लांगूल=पूंछ। शाखा-मृग=बन्दर। अरने=जंगली भैंसे। शशक=खरगोश। चल-चक्षु=चंचल नेत्र।

भावार्थ—कहीं पर काले और लाल मुंह वाले, शरारती, लम्बी पूंछ वाले, अनेक प्रकार के बाल वाले, अत्यन्त चंचल प्रकृति वाले, चतुर व दुष्ट, अनेक बन्दरों का समूह था।

कहीं पर सुडौल शरीर वाले जंगली भैंसे थे तो कहीं पर डरपोक भूरे खरगोश आदि थे अर्थात् बड़े-छोटे सभी प्रकार के पशु थे। कहीं पर वन भूमि के विशाल गहन व निर्जन स्थलों में अनोखे व चंचल नेत्रों वाले चीते थे।

पृष्ठ ११३—सुहावने ... ... सुहावने ॥१०३-१०४॥

शब्दार्थ—पीवर-ग्रीव=मोटी गर्दन वाले। प्रमत्त-गामी=मस्त चाल वाले। पृथुलांग=मोटे अंगों वाले। पयोमयी=दूध वाली। समोदरा=एक समान पेट वाली। सुरभी=गौएँ। सवत्सा=बछड़ों सहित।

भावार्थ—वन भूमि में अच्छे लगने वाले, मोटी गर्दन वाले, साहसी, मस्त चाल वाले, गौरवपूर्व बलिष्ठ अंग वाले, शक्तिशाली, ऊंची छाती वाले और पराक्रमी बैल थे।

वन भूमि में दयालु, पुण्यशील, सुन्दर मुख व सजीले नेत्र वाली व समान पेट वाली व दूध देने वाली गाएँ शोभायमान हो रही थीं। वे सधी हुईं सीधी सुन्दर व अपने बछड़े साथ लिए थीं।

अतीव ... ... कौतुकी ॥१०५॥

शब्दार्थ—कौतुकी=क्रीड़ा करने वाले।

भावार्थ—वन में बहुत से बछड़े कूदते फिर रहे थे। वे अत्यन्त प्यारे,

मधुरता की प्रतिमा से, अत्यन्त सीधे, चंचल अंगों वाले, शरारती, मोहक, कोमल शरीर वाले और अनेक क्रीड़ाएँ करने वाले थे।

अलंकार उपमा।

जो राज ... ... ही अनूटी ॥१०६॥

शब्दार्थ - राजपंथ = राजमार्ग।

भावार्थ—उस वन-भूमि में जो राज-मार्ग बना हुआ था, उसी पर धीरे-धीरे ऊधव का रथ चला जा रहा था (गोकुल की ओर)। ऊधव वन की अत्यन्त अनोखी शोभा मुग्ध होकर चाव से देख रहे थे।

परन्तु ... . विरक्ति को ॥१०७-१०८॥

शब्दार्थ—निगूढ़ = रहस्यमय। विरक्ति = वैराग्य।

भावार्थ—इस सब के बावजूद भी वे (ऊधव) पौधों और पुष्पों में, फलों व लताओं के समूह में, तालाबों और नदियों में, पर्वत में, पक्षियों व हिरणों में, वन तथा वाटिकाओं में—

एक रहस्यमय उदासी अपनी पैनी दृष्टि से देख रहे थे। वह उदासी धीरे-धीरे बहुत ही गुप्त ढंग से उनके हृदय के वैराग्य को बढ़ा रही थी।

पृष्ठ ११४—प्रशस्त -- . वितान की ॥१०९-११०॥

शब्दार्थ—प्रशस्त = विशाल। विपन्न = दुःखी। पाता = रक्षक। वितान = तम्बू।

भावार्थ—वृक्ष-समूह की विशाल शाखाएँ उन्हें उस भुजा के समान दृष्टिगोचर होती थीं जो बड़ी इच्छा लेकर दुःखियों के रक्षक, ईश्वर से प्रार्थना करने के लिए आकाश की ओर उठी हो।

यमुना नदी के सुन्दर प्रवाह की शोभा, पक्षियों की केलि-क्रीड़ा, मधुर स्वर का शोर, सुन्दर निकुंज तथा तम्बू की तरह आच्छादित लताएँ, कोई भी उन्हें अत्यन्त मोहित नहीं कर पाता था।

सरोवरों ... ... वनस्थली ॥१११॥

शब्दार्थ — स-कंजता = कमल-युक्त।

भावार्थ—कमलों से भरपूर तालाबों का सौन्दय, सुन्दर पर्वत व झरनों आदि की रमणीकता, वनभूमि की अत्यन्त सौन्दर्य-मयता उन्हें उतना मुग्ध नहीं कर पाती थी जितना साधारणतः उन्हें करना चाहिए था।

कोई-कोई ... ... हटाते ॥११२॥

भावार्थ—किसी-किसी वृक्ष पर बारहों महीने फल लगते थे। बिना उचित समय ऐसे वृक्षों पर फल लगते हुए अपने नेत्रों से देखकर ऊधव को शंका हो जाती थी परन्तु वे अपनी बुद्धि व ज्ञान से उन आशंकाओं को तुरन्त ही दूर हटा देते थे।

उसी दिशा ... ... मुकुन्द को ॥११३-११४॥

शब्दार्थ – किरीटी=मुकुट वाले। पट-पीत=पीले वस्त्र।

भावार्थ – (ब्रजवासियों की मथुरा के मार्ग की ओर दृष्टि लगी थी) जिस ओर उनकी दृष्टि लगी थी उसी दिशा से सारथी के साथ रथ में कोई मुकुटधारी, पीले वस्त्र पहने, सुन्दर कुण्डल पहने, श्याम शरीर का पथिक बैठा था।

उसे देख कर ग्वाल-बाल अत्यन्त व्यग्र होकर तेजी से रथ के निकट जाते थे परन्तु कृष्ण को न पाकर बहुत ही खिन्न होते थे।

पृष्ठ ११५—अनेक गायें ... अधीरता से ॥११५-११६॥

शब्दार्थ--विषादिता=दुःखी। सुधी=ज्ञानी। अंकुरिता=जन्म लेती।

भावार्थ—(रथ को आता देखकर) अनेक गाएँ घास छोड़कर दौड़ती हुई बछड़ों सहित उस श्रेष्ठ रथ के समीप जाती थीं परन्तु कृष्ण को न पाकर अत्यन्त दुःखी होती थीं।

अनेक गायों तथा ग्वाल-बालों की ऐसी दुःख भरी दशा देखकर अत्यन्त ज्ञानी ऊधव के हृदय में भी खेद-सहित अधैर्य ने जन्म ले लिया।

समीप ... ... वेणु थे ॥११७-११८॥

शब्दार्थ – सगोष्ठ=सम्पूर्ण गायों का साथ। बहु-मूर्त्ति-मत्त=अनेक रूप। विषाण=वाद्य-यन्त्र।

भावार्थ—ज्यों-ज्यों गायों सहित गोकुलवासी कृष्ण के भ्राता ऊधव के रथ के निकट जाते थे त्यों-त्यों दुःख अपने रहस्यमय रूप को अनेक ढंगों से प्रकट करता था।

दिन छिपने वाला था और सूर्य छिप रहा था। ग्वाले गायों के साथ घर आ रहे थे। (उनके चलने से) आकाश में धूलि विराजमान थी तथा मुरली सहित वाद्य-यन्त्र बज रहे थे।

खड़े हुए ... ... नूपुरादि को ।११९-१२०॥

शब्दार्थ—उपेत = भरे। कामिनियाँ = रमणियाँ।

भावार्थ—कहीं पर ग्वाले अपने अनेक पशुओं की प्रतीक्षा कर रहे थे तो कहीं पर वे उन्हें प्यार भरे स्वर से बुला-बुलाकर घर में बाँध रहे थे।

अनेक कुओं पर वे रमणियाँ व कुमारियाँ घड़े लिए सुशोभित थीं जो जल लेकर अपने पावों के नुपूर आदि को बजाती हुई अपने घर लौट रही थीं।

पृष्ठ ११६—कहीं जलाते ... ... मण्डली १२१-१२२॥

शब्दार्थ—पयस्विनी = गाय। पय = दूध। कर्माकुल = कार्य में मग्न।

भावार्थ—कहीं पर लोग अपने घरों में दीपक जला रहे थे तो कहीं पर प्यार से पशुओं को खिला रहे थे। कहीं पर चंचल बछड़ों को दूध पिला-पिलाकर, गाय का दूध निकाल रहे थे।

गोकुल में कृष्ण के यशोगान की धूम मची हुई थी। अनेक कार्यों में रत जनसमुदाय कृष्ण के यश का बखान सदा प्रेम से करते रहते थे।

हुआ इसी ... ... माधुरी ।१२३-१२४॥

शब्दार्थ—वियोग-दग्धा = विरह से व्याकुल प्रमत्त = पागल।

भावार्थ—इसी समय गोकुल ग्राम में ऊधव का दिव्य रथ धीरे-धीरे प्रविष्ट हुआ। उसको आता देखकर कृष्ण के विरह सें व्याकुल जन-समुदाय उत्कंठित हो उठा।

जो व्यक्ति जिस स्थान पर जिस कार्य में लगा था, उसने उसी स्थान

पर अपना कार्य वैसे का वैसा छोड़ दिया और कृष्ण की मधुर छवि देखने के लिए पागल की तरह भागता हुआ रथ के निकट आया।

विलोकते ... ... देखने ॥१२५-१२६॥

शब्दार्थ—अबाधिता=बे रोक-टोक। पावस आपगोपना=वर्षा की नदी के समान। वदनेन्दु=मुख रूपी चन्द्र।

भावार्थ—जो ग्वाले अपने पशुओं का मार्ग देख रहे थे, वे मार्ग देखना छोड़ कर, जो गाय बाँध रहे थे वे गाय बाँधना छोड़ कर, वर्षा ऋतु की नदी के समान बेरोकटोक भागे।

जो पशु को खिला रहे थे, गाय दुह रहे थे अथवा घर में दीपक जला रहे थे वे व्यग्र होकर, अपना कार्य छोड़कर तेजी से कृष्ण का मुख रूपी चन्द्रमा देखने के लिए दौड़े।

अलंकार- १२५वें में उपमा।

पृष्ठ ११७—निकालती ... ... देखने ॥१२७-१२८॥

शब्दार्थ—गात=शरीर। सुधि=स्मृति। स-रज्जु=रस्सी सहित।

भावार्थ - जो स्त्री कुएँ से जल निकाल रही थीं वह घड़े को रस्सी समेत कुएँ में छोड़कर अत्यन्त व्यग्र होकर ब्रज-नारियों के प्रियतम, कृष्ण को देखने के लिए दौड़ती हुई गई।

किसी ने जल से भरा घड़ा वहीं छोड़ दिया तो किसी ने घड़े को सिर से गिरा दिया। अनेक कामनियाँ अपने शरीर की सुध-बुध भूल कर कमल जैसे सुन्दर मुख वाले कृष्ण को देखने के लिए दौड़ीं।

अलंकार—१२८वें पद में उपमा।

वयस्क ... ... कष्टिता ॥१२९-१३०।

शब्दार्थ—वयस्क=प्रौढ़। ढिग=निकट। प्रवंचिता=ठगी हुई। विमनति=अत्यन्त उदास।

भावार्थ—नगर के प्रौढ़ और बूढ़े, बालक और बालिकाएँ, प्रत्येक समान उत्सुक और आतुर होकर शीघ्रता से सुन्दर रथ के निकट आए।

वे सब अपने नेत्रों का सुन्दर खजाना लूटने अर्थात् कृष्ण के दर्शन करने आए थे।

जन-समुदाय को उत्सुकता, चाव तथा प्रेम से भरा आता देखकर तथा फिर (कृष्ण को न पाने पर) ठगा गया सा, अत्यन्त खिन्न और कष्ट से दुःखी देखकर—

अधीर होने ... ... शांत भाव से ।।१३१।।

शब्दार्थ—प्रबोधने=समझाने। समागतों=वहाँ आए हुए।

भावार्थ यद्यपि कृष्ण भ्राता ऊधव भी धैर्य खोने लगे तदापि उन्होंने धैर्य को नहीं त्यागा। वे अपने रथ से उतरे और आए हुओं को अत्यन्त शांत-भाव से समझाने लगे।

पृष्ठ ११८—यों ही ... ... जहाँ थी ।।१३२।।

शब्दार्थ—प्रबोध करते=समझाते।

भावार्थ—इसी प्रकार नगरवासियों को समझाते हुए, व अत्यन्त शान्ति-प्रदान करने वाली प्रिय कथा सुनाते हुए ऊधव ब्रजराज नन्द के घर के निकट आए जहाँ करुणा का साम्राज्य छाया हुआ था।

करुण-नयन ... ... व्यग्र होने ।।१३३-१३४।।

शब्दार्थ — सुअन-सुहृद=पुत्र के मित्र। सुफलक-सुत=अक्रूर। समधिक=और अधिक।

भावार्थ—दयापूर्ण नेत्रों वाले, उदास, बेचैन व उकताए हुए राजा नन्द अपने बंधु-बांधवों और सेवकों को साथ लेकर अपने प्रिय पुत्र के मित्र, ऊधव के समीप आए। तत्पश्चात् उन्हें साथ लेकर वे घर गये।

अक्रूर जैसा ही बुद्धिमान व्यक्ति मथुरा से ही ग्राम में आया देख कर गोपों में और अधिक चिन्ता व्याप्त हो गई। सम्पूर्ण नगर वासियों के हृदय (आने वाली विपदाओं की) आशकाओं से व्याकुल हो उठे।

पल पल ... ... रत्न लेने ।।१३५।।

शब्दार्थ—अकुला=बेचैन। संदिग्ध=शंकित।

भावार्थ गोकुल वासियों के हृदय विचलित हो गए वे प्रत्येक-क्षण बेचैन होकर तथा सशंकित होकर सोचने लगे कि अक्रूर आकर अत्यन्त अनोखे रत्न अर्थात् कृष्ण-बलराम ले गया था अब यह (ऊधव) ब्रजभूमि से कौन सा रत्न, (प्रिय व्यक्ति) लेने आया है।

———

दशम सर्ग

पृष्ठ ११६—त्रि-घटिका ... ... विधि-बद्ध था ॥१-२॥

शब्दार्थ त्रि-घटिका=तीन घड़ी ककुभ=दिशाएँ। प्रति-भाग=प्रत्येक भाग। विधि-बद्ध=प्रसार करता।

भावार्थ—रात तीन घड़ी बीत चुकी थी। सम्पूर्ण गोकुल गाँव प्रायः सुनसान था। आकाश व दिशाओं सहित ब्रजभूमि धीरे-धीरे अन्धकार से भरती जा रही थी।

ब्रज के राजा नन्द बाबा का शान्त गृह और भी अधिक शान्त होता जा रहा था। उसके प्रत्येक भाग में अन्धकार अपनी सत्ता बढ़ाने को कटि-बद्ध था।

हरि-सखा ... — ... यक-सद्म में ॥३-४॥

शब्दार्थ—रसापति=भूपति। गृह-गता=घर गई हुई। श्रांति=थकावट। उपनीत=लाए गये। द्युति-भरे=प्रकाशवान।

भावार्थ—कृष्ण के मित्र ऊधव को देखने के उद्देश्य से जो नरसमुदाय राजा नन्द के द्वार पर आया था, वह अब दिखाई नहीं दे रहा था क्योंकि वह अत्यन्त सन्देह और भय से अपने घर चला गया था।

मार्ग की सारी थकावट दूर करके तथा भोजनादि से निवृत्त होने के पश्चात् कृष्ण के मित्र ऊधव अब स्वच्छ व प्रकाशवान घर में लाये गये।

पृष्ठ १२०—कृश ... ... अविभूत से ॥५॥

शब्दार्थ—कृश-कलेवर=दुर्बल शरीर। अभिभूत=डूबे हुए।

भावार्थ - दुर्बल शरीर, चिन्ता में लगी बुद्धि, उदास मुख व दुःखी मन वाले व्रजराज नन्द व्यग्रता तथा व्यथा में डूबे हुए उनके (ऊधव) निकट ही बैठे थे।

आवेगों से ... ... मलीना ॥६॥

शब्दार्थ—शीर्ण=निर्बल। कृशांगी=कोमल अंगों वाली। अम्बु-नेत्रा=जल भरे नेत्र वाली

भावार्थ—पति के निकट ही नेत्रों में जल भरे यशोदा बैठी थीं। वे दुख के आवेग से अत्यन्त व्यग्र थीं। उनके शरीर के कोमल अंग निर्बल हो गए थे। वे चिन्ता से दग्ध थीं और उनका हृदय व्याकुल हो रहा था। उनके होंठ अधीरता से शुष्क हो गए थे। वे दीनता व करुणा की मूर्त्ति, नम्रता से सिर झुकाए, कृष्ण के मोह में लीन व उदास बैठी थीं।

अति-जरा ... वस्तु थी ॥७-८॥

शब्दार्थ—जरा-विजिता=बुढ़ापे द्वारा जीति हुई अर्थात् वृद्धा। आवृत=ढकी हुई। शुचिता=पवित्रता। मुकुर=दर्पण।

भावार्थ—व्याकुलता से भरे तथा सभी सुखों से रहित घर में कुछ सेविकाएँ थीं। वे अत्यन्त वृद्ध व बहुत चिंतित थीं। वे अत्यन्त दुर्बल शरीर वाली व उदास थीं।

दर्पण के समान उज्जवल व सुन्दर घर में उदासी प्रतिबिम्बित हो रही थी अर्थात् दृष्टिगोचर होती थी। घर की सरस और पवित्र वस्तुएँ अत्यन्त नीरसता से ढकी हुई थीं।

अलंकार—उपमा।

परम-आदर ... — ... व्रजपांगना ॥९-१०॥

शब्दार्थ नय=नीति। कलपती=दुःखी होती।

भावार्थ—इस समय कृष्ण के मित्र ऊधव बड़े सम्मान व प्रेम सहित अत्यन्त दुःखी तथा सुख-हीन राजा नन्द से विरह की व्यथा को हरने वाली अनेक बातें कह रहे थे।

रोती-काँपती यशोदा बड़ी उत्कंठा से ऊधव की नम्रता, नीति तथा भय से भरपूर व शहद में पगी अर्थात् ऊपर से मीठी लगने वाली कड़वी बातें सुन रही थीं।

पृष्ठ १२१ निपट ... ... गुणावल ॥११॥

भावार्थ—घर बिल्कुल शान्त नहीं हो गया था। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह कृष्ण की सुखदायक व चर्चा करने योग्य गुण-कीर्त्ति सुनने के लिए चुप हो गया था।

अलकार—हेतूत्प्रेक्षा।

निज मथित ... ... बोली ॥१२।

शब्दार्थ—विमना=उदास।

भावार्थ—कुछ समय तो अपने व्यथित हृदय को पीड़ा से रोक कर यशोदा सारी बातें सुनती रहीं। तत्पश्चात् बहुत उदास होकर, काँपते हुए बहुत पीड़ा से वे अपने पुत्र के मित्र ऊधव से इस प्रकार बोलीं—

प्यासा-प्राणी ... ... उन्मादकारी ॥१३-१४॥

शब्दार्थ – तरणि=तारने वाली, नौका। त्राणकारी=कल्याण करने वाली। इन्दु-उन्मादकारी=चन्द्रमा को भी मुग्ध करने वाला।

भावार्थ—प्यासा व्यक्ति पानी ना पीकर केवल नाम सुन लेने से संतुष्ट नहीं हो जाता। नाव का केवल नाम की किसी की रक्षा नहीं कर सकता। पानी में डूबने वाले व्यक्तियों के लिए केवल नाव ही शरण है।

हाय! रो-रोकर कृष्ण का मार्ग देखते-देखते मेरे नेत्रों की ज्योति नष्ट हो गई है। ऐ ऊधव! चन्द्रमा को भी मुग्ध करने वाला कोमल मुख देखे बिना वे इस संसार के अंधकार को नष्ट करने वाली ज्योति किस प्रकार प्राप्त कर सकेंगी।

अलंकार—१३वें में दृष्टान्त तथा १४वें में उपमा।

सम्वादों ... ... दर्शनोत्कण्ठता में ॥१५-१६॥

शब्दार्थ—वांछा=इच्छा। क्यों=किस प्रकार। विकच=खिला हुआ।

भावार्थ—हे ऊधव। कृष्ण के समाचारों से कान भर गये हैं। उनमें अब सन्देश सुनने का स्थान शेष नहीं है। अब तो सुबह-शाम, प्रत्येक क्षण उन्हें केवल यही इच्छा है कि वे किस प्रकार मधुर-मुख से निकले प्रिय वचन सुनें

हे ऊधव! कभी ऐसे दिन थे जब उन समाचारों को सुनकर अपने कष्टों को नष्ट करने की इच्छा हृदय में तीव्र होती थी। अब वे दिन बीत गये हैं और वह इच्छा भी नष्ट हो गई है। अब तो केवल भोले-भाले, खिले हुए मुख के दर्शनों की इच्छा शेष है।

पृष्ठ २२२—प्यासे की ... ... दुर्भगा है ॥१७॥

शब्दार्थ—अभिलषिता=आकांक्षी। उपशम=सन्तोष। तदुपरि=तत्पश्चात्। दुर्भगा=अत्यन्त भयंकर।

भावार्थ—प्यासे व्यक्ति की प्यास जल की एक बूंद से दूर नहीं होती। केवल बातों से वियोगी पुरुष को शान्ति प्राप्त नहीं होती। कष्ट के समय थोड़ा सा सन्तोष भी क्लेश को कम कर देता है परन्तु तत्पश्चात् जो कष्ट होता है वह अत्यन्त भयंकर है। तात्पर्य यह है कि प्यासा व्यक्ति थोड़ा जल पीने पर और अधिक प्यास अनुभव करता है।

अलंकार—दृष्टान्त।

सुत सुखमय ... ... स-दोषा ॥१८-१९॥

शब्दार्थ—समाधार=सुन्दर आश्रय। भाग्यहीनांगना=भाग्यहीन स्त्री। दोषा=रात्रि।

भावार्थ—मेरा पुत्र सुख प्रदान करने वाले स्नेह का सुन्दर आश्रय है। वह दयावान है तथा सज्जनता का सागर है। वह भोला-भाला है तथा सभ्य है। उसकी बुद्धि शान्त है। वह बहुत विनम्र है तथा आनन्दत्व की साक्षात् प्रतिमा है।

आपके समान मधुर वचनों को कहने वाला, धैर्यवान, अच्छा मित्र तथा ज्ञानवान व्यक्ति उस गुणवान कृष्ण का अलौकिक सम्वाद लाया है। (अतः मुझे संतुष्ट और सुखी होना चाहिए)। परन्तु दुःख में जली मुझ

भाग्यहीन स्त्री को उससे संतोष नहीं हुआ। मेरे लिए यह रात्रि भी उतनी ही दुःखपूर्ण है जितनी अन्य रात्रियाँ।

अलंकार—१८वें पद में उपमा।

हृदय-तल ... ... भी नहीं है ॥२०-२१॥

शब्दार्थ—उत्स=झरना। तुने-तूल सा=धुनी हुई रुई जैसा।

भावार्थ—श्याम का हृदय दया के झरने जैसा है। दूसरे के कष्ट को देखकर वह पागल सा हो जाता था। आज उसी की प्रिय माता शोक में डूबी हुई है परन्तु वह उसे अपना मुख तक नहीं दिखा जाता।

फिर न आकर उसे अपना मुख भी क्यों नहीं दिखला जाते हैं।

वह सुमन जैसा कोमल तथा धुनी हुई रुई के समान कोमल है। वह नई कोंपल जैसा तथा प्रेम के स्रोत के समान है। हे ऊधव! कृष्ण का हृदय बहुत दयावान है फिर भी वह माँ के हृदय जेसा स्नेहपूर्ण नहीं है।

अलंकार—दोनों पदों में उपमा।

पृष्ठ २२३—कर-निकर ... ... पीयूष-धारा ॥२२॥

शब्दार्थ कर-निकर=किरणों का समूह। राका=पूर्णिमा। पीयूष=अमृत। प्रतपित=तप्त।

भावार्थ—पूर्णिमा के चन्द्रमा की अमृत से भरी किरणें संसार में कितने ही व्यक्तियों को तप्त करती हैं (चन्द्र-किरणों से ताप नहीं शान्ति मिलती है)। बुरे समय में दुर्भाग्य के कारण स्वच्छ अमृत धारा भी दूषित हो जाती है। अर्थात् आपके शान्तिदायक उपदेश उल्टे कष्ट पहुंचा रहे हैं।

मेरे प्यारे ... ... हमारा ॥२३-२४॥

शब्दार्थ—नवनी=नवनीत, मक्खन। सु-पय=मीठा दूध।

भावार्थ—हे ऊधव! मेरा लाडला कृष्ण कुशलपूर्वक, सुखपूर्वक और आनन्द सहित तो है? किसी चिन्ता ने उसको उदास तो नहीं कर दिया है? उसके मुख पर कभी उदासी तो नहीं आती न? उसके हृदय में किसी प्रकार के कष्ट तो उत्पन्न नहीं होते।

विशेष—माता का हृदय यही चाहता है कि उसका पुत्र कहीं रहे, कुशल और प्रसन्न रहे। माता के हृदय का यहाँ ठीक चित्रण हुआ है।

हाय ! मेरे पुत्र को मीठे मेवे, मधुर मक्खन और नाना प्रकार के पकवान बड़े चाव से कौन खिलाती होगी ? प्रातःकाल वह कजरी गाय का मीठा दूध बड़े स्वाद से पीता था, अब मेरे प्राण-प्यारे कृष्ण को वह दूध भी पीने को नहीं मिलता होगा ।

संकोची है ... ... न होती ।। ५-२६।।

शब्दार्थ—अमित=अपार ।

भावार्थ—मेरा पुत्र संकोचशील, अत्यन्त सीधा-सादा व धैर्यवान है । किसी वस्तु के मांगने में उसे बहुत लज्जा होती थी (अतः वह कुछ नहीं माँगता था) । हाय ! जिस प्रकार मैं उसे गोद में बिठा कर बड़े चाव से खिलाती थी, उसी प्रकार अब कौन अन्य माता प्रतिदिन खिला सकेगी अर्थात् कोई भी वैसे नहीं खिला सकेगी ।

मैं अपना सारा दिन कृष्ण के मुख को देखते रहकर व्यतीत कर देती थी । यदि उसका मुख तनिक भी उदास देखती तो व्याकुल हो जाती थी । हाय ! अब इसी प्रकार अन्य कौन उसका मुख देखती होगी । हे ऊधव ! माता जितनी ममता अन्य किसी में नहीं होती ।

खाने पीने ... ... होती ।।२७-२८।।

शब्दार्थ—बेला=समय । अवनितल=पृथ्वी ।

भावार्थ—कृष्ण के खाने, पीने व सोने आदि का निश्चित समय अगर थोड़ा भी निकल जाता था तो मुझे बहुत पश्चात्ताप होता था । हे ऊधव ! उसके लिए अन्य कोई स्त्री इतनी दुःखी क्यों होगी ? पृथ्वी पर माता के समान कोई अन्य स्त्री नहीं हो सकती ।

जब मैं कृष्ण के खाने के योग्य कोई अच्छी वस्तु देखती हूं तो मेरे हृदय में बहुत व्यथा होती है । मैं जब कभी कोई सुन्दर फल अपने पुत्र के योग्य देखती हूं तो मैं अत्यन्त दुःखी होती हूं और कष्ट से जलने लगती हूं ।

पृष्ठ २४—जो लाती ... ... के लगाते ।।२९-३०।।

शब्दार्थ—कामना=इच्छा । पलट=लौट कर । दव=अग्नि । यों=मुफ्त ।

भावार्थ—जो स्त्रियाँ अनेक रंग-बिरंगे, मनमोहक खिलौने ले आती थीं वे अब भी उसी इच्छा से भरी घर आती हैं। हाय ! जब वे निराशा में डूब कर लौटने लगती हैं तो मैं उनके मार्ग (जाने के मार्ग) को पागल की भाँति देखती हूं।

आज भी विभिन्न कौतुक दिखाने वाले नट आशा लेकर आते हैं पर कोई भी उनके खेलों को मुफ्त भी नहीं देखता है। जिन खेलों को देखकर प्यारे कृष्ण प्रसन्न होते थे, आज वही खेल, देखने वालों के नेत्रों में आज भीषण अग्नि लगाते है।

अलंकार—दोनों पदों में उपमा है।

प्यारा खाता ... ... है बनाती ॥३१-३२॥

शब्दार्थ—सरस रव=कर्ण प्रियशब्द। उन्मना=उदास।

भावार्थ प्यारे कृष्ण सुन्दर मक्खन को बड़े चाव से खाते थे। मक्खन खाते-खाते वे प्रसन्न होकर नाचने-कूदने लगते। इस मधुर मक्खन को देखते ही ये सारी बातें याद आ जाती हैं। इसलिए यह मधुर और प्रिय मक्खन भी कष्टदायक हो जाता है।

हाय ! जो बाँसुरी अपने मधुर स्वर से सारे संसार को मुग्ध करती थी वही आज उदास होकर और गूंगी बनकर आले में पड़ी है। जो बाँसुरी अपने छिद्रों से अमृत रूपी मधुर स्वर सुनाती थी और मुग्धता की प्रतिमा थी आज पागल, अत्यन्त व्याकुल और उदास बना रही है।

प्यारे ऊधो ... ... मोहमग्ना ॥३३-३४॥

शब्दार्थ—सुरत=याद। खनि=खान। सुहृदपन=मित्रता।

भावार्थ—हे ऊधव ! क्या मेरा पुत्र कभी मुझे याद करता है ? क्या अब उसे अपने वृद्ध पिता का भी ध्यान आता है ? हाय ! वे भोले-भाले बच्चे, जो रो-रोकर और व्याकुल हो-होकर अपने दिन व्यतीत कर रहे हैं, उसे कभी याद आते हैं या नहीं ?

उसने मधुर प्रेम की खान गोपियाँ किस प्रकार भुला दीं ? किस प्रकार उसने मित्रता के सागर ग्वाले भुला दिये ? वह शान्त, धीर, मृदुल हृदय

वाली, प्रेमरूप, सरस, प्रेम की साक्षात् मूर्त्ति व अपने मोह में मग्न राधा को किस प्रकार भूल गया ?

अलंकार—३४वें पद में उपमा।

पृष्ठ १२५—कैसे वृन्दा ... ... हो गई है ॥३४-३६॥

शब्दार्थ—वृन्दा-विपिन=वृन्दावन। भूजात=वृक्ष। अर्कजा=यमुना। शारिका=मैना।

भावार्थ—वह वृन्दावन को कैसे भूल सका ? किस प्रकार उसने लता-बेलें भुलाईं ? उसके हृदय से ब्रज के कुंज-समूह कैसे दूर हो गए ? उसने फलों और फूलों से लदे वृक्ष किस प्रकार भुला दिए ? वह यमुना के किनारे पर खिला हुआ वृक्ष कैसे भूल सका ?

हे ऊधव ! मधुर बोलने वाली मैना सोते-सोते चौंक उठती है और कृष्ण को बुलाने लगती है। जिस मैना का कृष्ण ने बड़े प्रेम से प्रतिदिन पालन-पोषण किया है, वही किस प्रकार उसके हृदय से दूर हो गई ?

जा कुंजों ... ... गूँज जाता ॥३७३८॥

भावार्थ—ब्रजभूमि का प्यारा कृष्ण जिन गौओं को बड़े चाव से प्रतिदिन कुंजों में चराया करता था, जो गाएँ उसे अत्यन्त प्रिय थीं वही गायें आज उदास, दीनता से पूर्ण और व्याकुल वन में घूम रही हैं। हे ऊधव ! कृष्ण ने अपने हृदय की सम्पत्ति वे गौयें कैसे भुला दी हैं ?

मुझे अब भी प्रतिदिन प्रायः ऐसा प्रतीत होता है जैसे गौओं व ग्वालों सहित कृष्ण वन से घर चला आ रहा है। इसी प्रकार कभी-कभी मेरे कानों में वंशी का मधुर स्वर गूंज जाता है और हृदय को वेधता हुआ मन मुग्ध कर देता है।

अलंकार—भाविक।

रोते-रोते ... ... मूर्त्ति देखी ॥३९-४०॥

शब्दार्थ—भ्रान्ता=पागल।

भावार्थ—कभी-कभी रोते-रोते मुझे थोड़ी देर के लिए नींद आ जाती है परन्तु हाय ! उसी समय मैं चौंक पड़ती हूँ और मेरे दोनों नेत्र

खुल जाते हैं। इस तरह प्रायः प्रत्येक रात्रि में मुझे ऐसा लगता है मानो प्यारा पुत्र आकर मुझे प्रेम से जगा रहा हो।

हे ऊधव ! मुझे कई बार ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई आकर मुझ से कह रहा हो कि तुम्हारा पुत्र आ रहा है। मैं अब तक पागल की तरह लाखों बार दरवाजे पर गई हूं। हाय ! मैं वह बिछुड़ी हुई श्याम मूर्त्ति अपने नेत्रों से नहीं देख सकी।

पृष्ठ १२६—फूले-अंभोज ... ... समाँ है ॥४१-४२॥

शब्दार्थ—अंभोज=कमल। अनुमिति=अनुमान। समाँ=दृश्य।

भावार्थ—ऊधव ! मुझे हमेशा ऐसा अनुमान होता है मानो विकसित कमल जैसे नेत्रों वाला मन को मुग्ध करने वाला कृष्ण प्रिय वचन कहता-कहता, खेलता और प्रसन्न करता अभी किसी घर से निकल कर आरहा है।

ऊधव ! मक्खन का लोभी मेरा प्यारा पुत्र मेरे निकट आकर अनेक प्रकार से लीलाएँ करता था और दंगा करता था। हाय ! वे बातें मुझे एक क्षण के लिए भी नहीं भूलती हैं। हाय ! मेरे दोनों नेत्रों के सम्मुख आज भी वही दृश्य छा जाता है।

मैं हाथों ... ... पूर्ण होती ॥४३-४४॥

शब्दार्थ—कुटिल-अलकें=घुंघराले बाल। क्रीट=मुकुट। ग्रथित=गुंथी हुई। श्रुति=कान।

भावार्थ—मैं अपने हाथों से प्यारे पुत्र के घुंघराले बालों को सँवारा करती थी। मैं उसके दोनों कानों के कुण्डलों में पुष्पो को सजाती थी। मैं खुश होकर उसके मुकुट में मोतियों को गूंथती थी और तत्पश्चात् उसके मुख की छवि देखकर प्रसन्नता से फूली नहीं समाती थी।

मैं प्रायः फूलों की कलियाँ से बड़े शौक से विभिन्न मालाएं, मुकुट और कुण्डल तैयार करती। तत्पश्चात् खुश हो-होकर उन्हें कृष्ण को पहनाती थी और मैं गजरे में गुंथी हुई कली के समान प्रसन्न होकर पूर्ण विकसित अर्थात् प्रफुल्लित हो जाती थी।

अलंकार—उपमा।

पंन्हे प्यारे ... ... होता ।।४५-४६।।

शब्दार्थ—पैन्हे=पहने । राका-शशि=पूर्णिमा का चन्द्रमा ।

भावार्थ—अनेक सुन्दर वस्त्र-आभूषणों को पहन कर, हँसते हुए मधुर वाणी बोल-बोलकर प्रसन्न होते हुए, शोभाशाली कृष्ण को जब मैं घरों में खेलता हुआ देखती थी तो मुझे स्वर्ग की सम्पूर्ण सम्पत्ति प्राप्त हो जाती थी ।

जब मेरा प्यारा पुत्र घर में था तो प्रतिदिन ही पूर्णिमा का चन्द्रमा निकलता था, कमल खिलता था, प्रेम की अमृत-धारा बहती थी तथा मुरली से और भी अधिक मधुर अलौकिक संगीत-स्वर निकलता था ।

पृष्ठ १२७—ऊधो ... ... मुग्धकारो ।।४७-४८।।

शब्दार्थ—विटपी=वृक्ष । अमित=अनेक ।

भावार्थ—हे ऊधव ! मेरे वे अच्छे दिन कहाँ चले गये हैं ? हाय ! इस प्रकार कौन मेरे सुख-भरे घर को नष्ट कर रहा है ? क्या वैसे प्यारे दिन अब कभी भी मुझे प्राप्त नहीं होंगे ? हाय ! मेरी दुःख रूपी रात्रि अब कभी भी दूर नहीं होगी ।

हे ऊधव ! मेरा हृदय एक अनुपम उद्यान था । उसमें कल्पना रूपी अनेक क्यारियाँ शोभा देती थीं । उन क्यारियों में भाव रूपी अनेकों अनोखे पुष्प लगे थे और उत्साह रूपी अनेकों मनमोहक वृक्ष सुशोभित थे ।

अलंकार—४८वें पद से सांगरूपक प्रारंभ होता है जो आगे आने वाले पदों में भी चलता है ।

सच्चिन्ता ... ... पुष्पिता सी ।।४९-५०।।

शब्दार्थ—सच्चिन्ता=सुन्दर भावनाएं । वापिका=बावली । चाहें=इच्छाएं । सद्वांछा=अच्छी इच्छा । सुत-वधू-भाविनी=होने वाली पुत्र-वधू ।

भावार्थ—उसमें (उद्यान में) सुन्दर भावना रूपी सुन्दर तरंगों वाली बावलियाँ थीं । अनेकों इच्छा रूपी सुन्दर कलियाँ व उमंग रूपी लताएँ विद्यमान थीं । वासना रूपी मृदु-मृदु हिलने वाली बेलें थीं । मधुर इच्छाओं रूपी सुन्दर शब्द करने वाले पक्षी थे ।

(उसी उद्यान में) भावी पुत्र वधू (कृष्ण की वधू) का भोला-भाला व सलोना मुख प्राय: खिले हुए कमल के समान प्रकट होता था और पुत्र द्वारा सुख-प्राप्ति की इच्छाएँ प्राय: पुण्यों से लदी माधवी की तरह खिल उठती थीं।

अलंकार—सांगरूपक चल रहा है।

प्यारी-आशा ... ... से भी ॥५१-५२॥

शब्दार्थ—सौरभीले=सुगन्धि वाले। राका-स्वामी=पूर्णिमा का चन्द्रमा। नन्दनोद्यान=नन्दन वन (इन्द्र का बगीचा)।

भावार्थ—जब मेरे हृदय रूपी उद्यान में आशा रूपी वायु चलती थी तब इस उद्यान के वृक्षों की बड़ी अद्भुत शोभा होती थी, सम्पूर्ण लता-वेलें छविमान हो जाती थीं और सुन्दर विचार रूपी पुष्प अत्यन्त सुगन्धित बन जाते थे अर्थात् सुगन्धि बिखेरने लगते थे।

पूर्णिमा के स्वामी पूर्ण चन्द्रमा की सरस, सुख-दायक अलौकिक व अद्भुत कलाएं जब उस उद्यान पर प्रेम से पड़ती थीं तो वह उद्यान छवि-शोभा और मनोरमता में इन्द्र के उपवन से भी अधिक बढ़ जाता था।

अलंकार—५२वें पद में व्यतिरेक।

पृष्ठ १२८--ऐसा प्यारा ... ... द्वारा ॥५३-५४॥

शब्दार्थ—निष्पुष्पा=पुष्प रहित। घन-तन=श्याम। सद्वारि=सद्+वारि=स्नेह रूपी जल।

भावार्थ—इतना प्यारा तथा मधुर रस से सिंचित मेरा उद्यान नष्ट हो रहा है, यह कहते मैं व्याकुल हो रही हूं। इस (कल्पित) उद्यान के सम्पूर्ण वृक्ष सूखते जा रहे हैं, लताएं नष्ट होती जा रही हैं तथा वेलें पुष्प रहित होकर अत्यन्त उदास सी हो गई हैं।

पुष्प-समूहों को उत्पन्न करने वाले प्यारे पौधों पर पुष्प नहीं लग रहे पक्षी अपनी अनोखी बोलियाँ भूलते जा रहे हैं। हाय! मेरा अत्यन्त सुन्दर उद्यान नष्ट हो जावेगा यदि कृष्ण रूपी बादल अपने स्नेह रूपी जल से उसे नहीं सींचेगा।



अलंकार—५४वें में रूपक । सांगरूपक इस पद पर समाप्त हो जाता है ।

ऊधो ... ... टलेगी ।।५५-५६।।

शब्दार्थ—आदौ=पहले । दुर्वृत्तता=कुटिलता ।

भावार्थ—ऊधव ! पहले मेरा भाग्य रूपी आकाश अन्धकारमय था (अर्थात् मैं निस्सन्तान थी) बाद में वह धीरे-धीरे उज्जवल व सुन्दर आभा वाला हो गया क्योंकि उसमें प्रकाश की किरणें लेकर हृदय को प्रसन्न करने वाला एक अनोखा चन्द्रमा पूर्ण शोभा लेकर उदय हुआ ।

उस छविमान आकाश में भाग्य की कुटिलता से पुनः घोर-काली घटा छा गई है जिसके कारण मेरे नेत्रों से सुन्दर चन्द्रमा दूर हो गया है । ऊधव! यह वियोग रूपी बादलों की घटा कैसे दूर होगी ?

अलंकार—दोनों पदों में रूपक ।

फूले-नीले ... ... विद्ध होता ।।५७-५८।।

शब्दार्थ—वनज=कमल । मोदिनी=प्रसन्न करने वा ी । सोंधे=सुगन्धि । विद्ध=बिंध । भूल=कांटा ।

भावार्थ—हे ऊधव ! जब मुझे श्रीकृष्ण का फूले हुए नीले कमल जैसे रंग का शरीर, उदास हृदय को प्रसन्न करने वाली मीठी-मीठी बातें, सुगन्धि में डूबी हुई अलकें (केश) याद आती हैं तो हृदय पर सर्प सा लोट जाता है अर्थात् मैं अत्यन्त व्याकुल होती हूं ।

हाय ! जब ये मैना रो-रोकर, अत्यन्त कष्ट से, दर्द भरे स्वर से, पागल सी होकर इस प्रक.र पूंछती है कि वह मेरा मुरली व.ला, प्राणधन कृष्ण कहाँ है तो मेरे हृदय में काँटा सा चुभ जाता है ।

अलंकार—५७वें में उपमा ।

पृष्ट १२६—त्यौहारों ... ... शिला की ।।५६-६०।।

शब्दार्थ—अपर=अन्य ।

भावार्थ—मेरा प्यारा पुत्र पर्वों, त्यौहारों तथा अन्य उत्सवों को अति सुन्दर बना देता था । ऊधव ! वे त्यौहार आदि आज भी ब्रजभूमि में आते हैं परन्तु वे मेरे अतीव दुःख को और अधिक बढ़ा देते हैं ।

जब उसका जन्म-दिन मनाया गया था तो कैसी धूम-धाम मची थी। जब पुत्र के सस्कार किए जा रहे थे तो कैसा सुन्दर वातावरण छा गया था। आज वही दृश्य जब मुझे याद आते हैं तो मैं मानों भयंकर दुःखों की पत्थर की प्रतिमा बन जाती हूं।

अलंकार— उपमा।

कालिन्दो ... ... छुड़ाया ॥६१-६२॥

शब्दार्थ—गज=कंस का कुवलापीड़।

भावार्थ—यमुना के तट की, सुन्दर वृन्दावन की, फले फूले वृक्ष-समूह की, कुंज की घरों की लीलाएँ जब याद आती हैं तो मेरा हृदय कितना दुःखी होता है, यह कैसे बताऊँ ?

कृष्ण ने पहलवानों सहित कुवलापीड़ को, कंस से पापी को मारकर सुन्दर नगर मथुरा की सब राक्षसी विरत्तियाँ नष्ट कर दीं। विश्व में सच्ची कीर्ति छा गई। प्यारे पुत्र ने दुःखिया देवकी को पति सहित कैद से छुड़ाकर पुण्य की लता-सी बो दी।

जा होती ... ... लाडिला है ॥६३-६४

शब्दार्थ—सुरत=याद। मोदिता=आनन्दित।

भावार्थ—यदि उनके (वसुदेव और देवकी) कँपा देने वाले दुःखों की याद आती है तो आज भी नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगती है। जो इतनी अधिक दुःखी थी, वह प्रसन्न हुई है। ऊधव ! यह देखकर आज मैं भी अति प्रसन्न और सुखी हुई हूं।

इस पर भी मेरे हृदय में इस बात से घोर पीड़ा हो रही है कि मेरी प्यारी सखी (देवकी) मेरा हृदय क्यों निकाल रही है अर्थात् कृष्ण को क्यों छीन रही है। जब मैं यह सुनती हूं कि मेरा पुत्र किसी दूसरे का बनता जा रहा है तो मानो मैं मर जाती हूं। (यशोदा को यह स्वीकार नहीं कि कृष्ण की माता कोई और बन जाए)।

पृष्ठ १३० मैं रोती हूं ... ... व्यथा है ॥६५-६६॥

शब्दार्थ—धाई=पालन-पोषण करने वाली स्त्री । एकदा=एक बार। सुकृति=पुण्य ।

भावार्थ— (कृष्ण के वियोग में) मैं रो रही हूं और हमेशा अपना हृदय धुनती रहती हूँ । हाय ! मैं अपने जैसी दुःखी अब देवकी को नहीं करूँगी । प्यारा कृष्ण जीवित रहे, प्रसन्न रहे तथा देवकी का पुत्र हो जाए परन्तु वह एक बार मुझे उसका मुख दिखा दे क्योंकि मैं उसकी धाय हूं ।

ऊधव ! अनेक प्रयत्नों तथा अन्य उपायों से मैंने पुण्यों के बल पर बुढ़ापे में एक पुत्र प्राप्त किया था । वही शत्रु के नगर में चला गया और दूसरों का हो गया । हाय ! मेरी पीड़ा कितनी हृदय-वेधक है ?

पत्रों-पुष्पों ... ... न होवे ।।६७-६८।।

शब्दार्थ—सदृश=समान । वाटी=वाटिका ।

भावार्थ हे ऊधव ! मैं भगवान से प्रार्थना करती हूं कि संसार में कोई भी वृक्ष फूल-पत्तों बिना नहीं हो । नदी कैसी भी क्यों न हो, जल-रहित नहीं हो । हाय ! सीपी के समान कोई दुर्भाग्यशाली न हो जो अपना मोती खो देती है ।

बावड़ी की गोदी कभी कमल-रहित नहीं हो । लता कैसी भी क्यों न हो परन्तु पुष्परहित न हो । वाटिका कभी भी अपने प्रिय और सुन्दर वृक्ष से रहित न हो जो उसका मुख्यधन तथा उसके सौन्दर्य का आधार है ।

विशेष—पुत्र-वियोग की चरम स्थिति । यशोदा जड़-चेतन में भेद भूल जाती है और वृक्ष आदि से सहानुभूति प्रकट करती है ।

छीना जावे ... ... खो गया है ।।६९-७०।।

शब्दार्थ—लकुट=लाठी । लैरू=बछड़ा । अहि=सर्प । जीवोन्मेषी= जीवन प्रदान करने वाली ।

भावार्थ—हे ऊधव ! किसी की बुढ़ापे की लाठी न छीनी जाय अर्थात् किसी की वृद्धावस्था का सहारा-पुत्र नहीं छीना जाए । कोई दूसरे का पुत्र छल-कपट से न छीन ले । कोई अपने सम्पूर्ण जीवन की सचित

सम्पत्ति न खो देवे तथा किसी का स्वर्ण-मंदिर भी दीपक बिना न हो अर्थात् पुत्र घर का दीपक होता है और उसके बिना सोने का घर भी प्रिय नहीं लगता।

हे ऊधव ! वह गाय क्यों न पीड़ित और व्याकुल होगी जिसका प्रिय बछड़ा उसके नेत्रों से दूर हो गया हो अर्थात् वह माता क्यों नहीं दुःखी होगी जिसका पुत्र उससे दूर हो गया हो। वह सर्प जिसके सिर की जीवन-दात्री मणि खो गई हो, वह किस प्रकार जीवित रह सकता है ?

पृष्ठ १३१—कोई देखे ... ... निराला ॥७१-७२॥

शब्दार्थ – चारु चिन्ता-मणी=सुन्दर इच्छाओं को पूरी करने वाली मणि। सुरसरित=देवताओं की नदी, गंगा।

भावार्थ—हे ऊधव ! कोई भी व्यक्ति सम्पूर्ण विश्व में निराशा का अन्धकार नहीं देखे। कोई भी व्यक्ति अपने नेत्रों की अनुपम ज्योति न खोवे। किसी भी व्यक्ति के सब दिन रो-रोकर न बीते। किसी को भी हृदय-वेधक कष्ट न मिलें। तात्पर्य यह है कि मैं (यशोदा) ये सारे कष्ट भोग रही हूँ। इसलिए भगवान से प्रार्थना करती हूँ कि किसी अन्य को ये कष्ट नहीं मिलें।

हे ऊधव ! पृथ्वी पर केवल पुत्र ही ऐसा अनुपम रत्न है जो सुन्दर इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है, जो अपनी आभा से हृदय का (निराशा का) अन्धकार नष्ट कर देता है और जो हृदय में गंगा जैसी प्रेम की धारा बहाता है।

अलंकार—७२वें में उपमा।

पृष्ठ १३२—ऐसा प्यारा ... ... दिखा दे ॥७३-७४॥

शब्दार्थ—अल्प=थोड़ी। एकदा=एक बार।

भावार्थ—हे ऊधव ! (अब तुम्हीं सोचो) जिसका इतना प्रिय रत्न किसी अन्य का हो गया हो, वह माता कितनी व्याकुल होगी। यदि तुम्हें मुझ पर थोड़ी भी दया आती हो तो मेरे शुष्क होते हुए हृदय में शान्ति धारा बहा दो अर्थात् श्रीकृष्ण से मिला दो।

दिन-प्रतिदिन व्रजभूमि में अन्धकार बढ़ता जाता है। यद्यपि मेरे हृदय में अब यह आशा नहीं रही कि मैं सुख प्राप्त कर सकूंगी तथापि मेरी कामना है कि मेरा प्यारा पुत्र एक बार और आकर अपना अनुपम मुख दिखा दे।

मैंने बातें ... ... मिटावें ।।७५ ७६।।

शब्दार्थ—यदिच=यद्यपि । मार्जनीया=क्षमा के योग्य ।

भावार्थ—उद्धव ! यद्यपि अनजान में मैंने कितनी ही गलतियाँ की हैं मैंने पुत्र का हाथ भी बाँधा है और क्रोधित भी हुई हूँ; कली के समान प्यारे पुत्र को कभी-कभी पीटा भी है—तथापि अपने पुत्र के सम्मुख मैं पूर्णतया क्षमायोग्य हूँ।

हे ऊद्धव ! मुझ से जो विभिन्न अपराध हो चुके हैं वे हमेशा याद आ-आकर मेरे हृदय को पीड़ा से झकझोर देते हैं मेरे प्यारे पुत्र से इस प्रकार विनती करना जिससे वे मेरे अपराध भूल जाएँ, मेरे हृदय को व्याकुल न करें तथा आकर मेरी उद्विग्नता को नष्ट कर दें।

अलंकार—७५वें में उपमा।

खेलें ... ... और आवे ।।७७-७८।।

शब्दार्थ—पुनरपि= पुनः । लौ-लगना=ध्यान होना ।

भावार्थ—मेरे हृदय में अब केवल एक ही इच्छा शेष रह गई है। कृष्ण मेरे दोनों नेत्रों के सम्मुख आकर क्रीड़ा करें तथा कोमल-स्वर में बोलें, पुनः अपनी प्रिय क्रीड़ा करें तथा मधुर गीत सुनायें, इस प्रकार वे मेरे उजड़े हुए घर को बसा दें।

जब बड़ी उत्कंठा से मेरे नेत्र खुलते हैं तो कृष्ण को खोजने लगते हैं, मेरे कानों को कृष्ण की मुरली की तान का ही ध्यान लगा रहता है। मेरे शरीर के रोम-रोम से केवल यही स्वर निकलता है कि मेरा प्यारा पुत्र कृष्ण एक बार व्रज में और आये।

मेरी आशा ... ... छिन्नमूला ।।७९-८०।।

शब्दार्थ– मनोज्ञा=मनोरम। गोमेदकों=सुर्खी लिए पीले रंग की एक मणि। जनिता=उत्पन्न। छिन्नमूला=जड़रहित। विरम=जलरहित।

भावार्थ मेरी आशा रूपी नई लता अत्यन्त मनोरम थी। उसके सम्पूर्ण नीले पत्ते नीलमों से बने हुए थे। हीरे उसके पुष्प थे। लाल मणियाँ उसके फल थे। उसकी शाखाएँ पन्नों द्वारा निर्मित थीं।

ऐसी अनुपम आशा की लता अब लगभग शुष्क हो गई है। उसके सौन्दर्य से उत्पन्न सम्पूर्ण शोभा प्रतिदिन नष्ट होती जा रही है। यदि अब भी श्याम-शोभा वाला कृष्ण व्रजभूमि में नहीं आयेगा तो यह लता सूख कर जड़ से कट जायेगी अतः फिर कभी न पनप सकेगी।

लोहू ... मंदाकिनी है ॥८१-८२॥

शब्दार्थ—छार=क्षार, राख। कौमुदी=चाँदनी। मदाकिनी=गंगा।

भावार्थ—मेरे दोनों नेत्रों से अश्रु के बहाने रक्त बह ता है। मेरे शरीर का रोम-रोम जलकर राख होता जा रहा है। यदि मुझे कृष्ण के व्रज वापिस लौटने की आशा न होती तो मेरा शुष्क हृदय सैंकड़ों खंडों में विभाजित हो जाता।

कृष्ण के वापिस लौटने की आशा ही तो मेरे हृदय रूपी अंधेरी रात की अनुपम चाँदनी है। मुझ मृतप्रायः के जीवन के लिए यह आशा संजीवनी बूटी है। यही आशा मेरे अनेक कष्टों से झकझोरे हुए हृदय के लिए शान्ति-प्रवाह है। यही आशा मेरे शुष्क हृदय के लिए सुन्दर गंगा के समान है।

अलंकार—रूपक।

पृष्ठ १३३—ऐसी आशा — ... बता दो ॥८३-८४॥

शब्दार्थ—बोध=ज्ञान।

भावार्थ—हे ऊद्धव ! मेरे सम्पूर्ण कष्टों को नष्ट करने का यही एकमात्र उपाय है जिससे मेरी आशा सफल हो सके और मुझे शांति मिल सके। पृथ्वी पर मेरे प्राणों को केवल इसी आशा ने रोक रखा है कि मैं अपने नेत्रों से पुनः कृष्ण की वही आकर्षक मूर्त्ति देखूंगी। हे ऊधो ! जब तुम हमें (कृष्ण को भूल जाने का) उपदेश देते हो तो अत्यन्त दुःख होता

है। उनके भेजे गए संदेशों से हृदय और भी अधिक व्याकुल होता है। आप मुझे कृपा करके वह उपाय बता दीजिए जिससे मैं अपने प्यारे पुत्र का मुख पुनः देख पाऊँ।

प्यारे ऊधा ... ... क्यों बताऊँ ॥८५-८६॥

शब्दार्थ—विरत=चुप। स्वीय=अपनी। अर्द्धांगिनी=पत्नी।

भावार्थ—हे प्रिय उद्धव ! मैं अपने हृदय की पीड़ा को किस समय तक बताती रहूँ। मैं अब चुप होती हूँ पर तुम्हें बता देती हूँ कि यदि मेरे श्रेष्ठ पुत्र के आने की आशा समाप्त हो गई तो ब्रज उजड़ जायेगा और मैं जीवित न रहूँगी।

अपनी पत्नी की सारी बातें सुनकर, ब्रजराज नन्द बाबा व्याकुल हो कर धीरे से बोले—मेरे हृदय में जैसी पीड़ा हो रही है, ऐ ऊधव ! उसे किस प्रकार सुनाऊँ।

छाया भू ... ... वीरत्व बैठे ॥८७-८७॥

शब्दार्थ—निविड़=गहन। वेले=समय। भनुजा तरणि-तनया, अर्कजा=यमुना। आपगा=नदी। उमड़ी=बाढ़ आई।

भावार्थ—पृथ्वी पर गहन-अन्धकार छाया था, आधी रात बीत चुकी थी, भूल से ऐसे समय मैं यमुना के किनारे गया। मैंने जैसे ही नहाने की इच्छा से गहरे जल में प्रवेश किया तभी मैं यमुना के प्रवाह में डूबने लगा।

मेरे सारे साथी रोने लगे। गाँव से अनेक ग्रामीण दौड़ कर आये पर कोई भी दया करके यमुना में नहीं कूदा। जो खेल-खेल में बाढ़ आई यमुना को पार कर जाते थे वे भी अपने हृदय की सम्पूर्ण शक्ति और वीरता गँवा बैठे।

पृष्ठ १३४—जो स्नेही ... ... मानवों को ॥८९-९०॥

शब्दार्थ—वार=न्यौछावर। तर्कना=विचार। कूल=किनारा।

भावार्थ—वे व्यक्ति जो मेरे प्रिय थे, मित्र थे तथा मुझ पर अपने प्राणों तक को न्यौछावर करने के लिए तैयार रहते थे, वे सभी भयभीत

होकर अनेक प्रकार के विचारों में डूब गये। मैं राजा हूँ, फिर भी बुरे समय पर मुझे कोई अच्छा साथी नहीं मिला (जो मेरे प्राण बचाने के लिए यमुना में कूदता)। हे ऊधव! पृथ्वी पर दुर्दिन कितने बुरे होते हैं।

जैसे ही मेरे प्यारे व श्रेष्ठ कुमार कृष्ण ने मेरी यह दुःख भरी कथा सुनी, वह दौड़ा आया और तुरन्त यमुना में कूद गया। अत्यन्त प्रयत्न करके वह मुझे किनारे पर लाया और मेरे प्राण बचाए। उसकी कर्त्तव्य-भावना से किनारे पर खड़े मनुष्य अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए।

पूजा का ... --- --- ... मेरा बचाया ॥९१-९२॥

शब्दार्थ—फणी=सर्प। उल्मुकों=जलती हुई लकड़ी। वपुष=शरीर। अहि=सर्प। ठौर=स्थान।

भावार्थ—पूजा का दिन था। जनता अत्यन्त उत्साह में डूबी हुई थी। ऐसे समय पर एक मोटे सर्प ने मेरे निकट आकर मेरा दायाँ पाँव पकड़ लिया। मैं काँपने लगा तथा लोग मेरी ओर दौड़े। पर किसी को भी मेरी रक्षा का उपाय नहीं सूझा।

अचानक ही कुमार दौड़ा हुआ आया। उसने चतुराई से सर्प का शरीर कई स्थानों पर जलती लकड़ी से जला दिया। जैसे ही सर्प ने मेरा पाँव छोड़ा, कृष्ण ने उसे मार डाला। तत्पश्चात् अनेक उपाय करके उसने मेरे प्राण बचाए।

जैसे-जैसे ... ... कौतूहलों से ॥९३-९४॥

शब्दार्थ—प्रथित=प्रसिद्ध। विवुधों=विद्वानों। मंत्रदों=मन्त्रियों।

भावार्थ—हे ऊधव! जैसे-जैसे अनोखे कार्य मेरे पुत्र ने किए हैं, वे कार्य अत्यन्त पराक्रमी व्यक्ति भी नहीं कर सकते मैंने उसमें जितनी गहन बुद्धिमानी देखी है वैसी वृद्धों, प्रसिद्ध विद्वानों तथा मन्त्रियों तक में नहीं देखी।

प्रिय कृष्ण के कार्यों को देखकर केवल मैं ही आश्चर्यचकित नहीं होता था बल्कि जो भी देखता वही मोहित हो जाता था। मैं ऐसा

अलौकिक पुत्र पाकर जितना अधिक सुखी था अब उतना ही अधिक दुखी मैं समय की कुटिलता से हुआ हूँ।

पृष्ठ १३५—क्यों प्यारे ... ... हो रहा हूं ॥९५॥

शब्दार्थ—उरग=सर्प। ग्रसित=जकड़ा हुआ।

भावार्थ—यदि मुझे गहन वियोग के दुःख-सागर में इसी प्रकार डुबोना था तो प्यारे पुत्र ने दयालु बनके मुझे डूबने (यमुना में) से क्यों बचाया था? यदि मुझे आज चिन्ताओं में जकड़ना था तो अनेक प्रयत्न व उपाय करके मुझे सर्प के मुख से क्यों निकाला था? अर्थात् नहीं बचाना चाहिए था।

निशान्त ... ... से गये ॥९६॥

शब्दार्थ—निशान्त=रात्रि की समाप्ति।

भावार्थ—यद्यपि रात्रि समाप्त होती दिखाई दी तथा आकाश में प्रकाश हो गया तथापि दुःख-कथा समाप्त नहीं हुई। परन्तु (आकाश में प्रातःकाल होने की) लालिमा फैली देखकर ऊधव नन्द सहित घर से उठ कर चले गये।

विवुध ... ... मित्र के ॥९७॥

शब्दार्थ—विवुध=विद्वान। हृदय-मंदिर=हृदय रूपी भवन।

भावार्थ—विद्वान ऊधव के घर से जाते ही यह व्यथा-गाथा वहाँ तो समाप्त हो गई परन्तु ऊधव के हृदय-पटल पर सदा के लिए अंकित हो गई।

एकादश सर्ग

पृष्ठ १३६—यक दिन ... ... पूछा ॥१-२॥

शब्दार्थ—तरु-चय=वृक्ष-समूह। भावुक=सहृदय।

भावार्थ—एक दिन सुन्दर यमुना के किनारे पर नये वृक्षों के समूह से सुशोभित कुंज में व्रज-भूमि के कुछ सहृदय व्यक्ति बैठे थे। उन्हें देखकर ऊधव भी बहुत प्रफुल्लित हो वहीं जा विराजमान हुए।

सम्पूर्ण ग्वालों ने पहले तो विधिपूर्वक भक्ति से उन्हें शीश नवाया और प्रेमपूर्वक पूजन किया। अपने नेत्रों में बार-बार अश्रु भर कर, फिर मधुर वचन कहकर कृष्ण का सन्देश पूछा।

परम-सरसता ... ... उन्मना सी ॥३-४॥

शब्दार्थ—प्रवचन-पटु=उपदेश करने में चतुर। अतिशय=अत्यधिक। प्राबल्य=अधिकता।

भावार्थ—तत्पश्चात् उपदेश करने में चतुर उद्धव ने अत्यधिक प्रेम, सरलता और मधुरता से मनुष्यों को सुख पहुँचाने वाले कृष्ण का सुन्दर व प्रिय समाचार सभी ग्वालों को सुनाया तथा बड़ी हितकारी बातें कह-कह कर उन्हें शान्ति प्रदान की तथा समझाया।

अपने प्रिय कृष्ण का सम्पूर्ण समाचार सुनकर ग्वाल-मण्डली ने अत्यधिक सुख प्राप्त किया परन्तु प्रिय का स्मरण हो आने पर प्रेम की अधिकता के कारण वे लोग उदास होकर थोड़े समय के लिए शान्त हो गए।

पृष्ठ १३७—फिर बहु ... ... लगा यों ॥५॥

शब्दार्थ—सु-ललित=अत्यन्त प्रिय व सुन्दर।

भावार्थ—तत्पश्चात् उस गोप-मंडली में जो सबसे अधिक वृद्ध व्यक्ति था, वह बड़ी कोमलता, प्रेम और धैर्य से ब्रज के धन-कृष्ण के प्रिय-बन्धु उद्धव से अपनी प्रिय व सुन्दर बातें इस प्रकार सुनाने लगा—

प्रसून ... ... प्रभाव से ॥६-८॥

शब्दार्थ—मिलिन्द=भ्रमर। वरंच=वरन्। निबद्ध=बँधी हुई।

भावार्थ—पुष्प अकारण ही भ्रमर समूह को मुग्ध और आकृष्ट नहीं कर लेता वरन् उसकी मधुर सुगंधि ही उसे अनेकों (भ्रमरों) का प्रियपात्र बना देती है।

ब्रजचन्द्र श्रीकृष्ण के गुण इतने अपूर्व तथा स्वभाव इतना अलौकिक है कि ब्रज के सभी सहृदय व्यक्ति उनके प्रेम के मोह से बंध से गए हैं।

जिसका स्वरूप सुन्दर नहीं होता तथा जिसकी वाणी भी मनोहारी नहीं होती उसे भी अपने आर गुणों के कारण संसार का प्रेम प्राप्त हो जाता है।

पृष्ठ १३७—अपूर्व ... ... कालिनाग था ॥६-११॥

शब्दार्थ--तथैव=उसी के अनुरूप। नृलोक=मनुष्य लोक। मयंक=चन्द्रमा।

भावार्थ—घनश्याम जैसे कृष्ण का जैसा अलौकिक सौन्दर्य है, उसी के अनुरूप उनकी वाणी सुरीली है। वे गुणों के भंडार हैं, विनम्र हैं अतः उनसे विशेष प्रेम क्यों नहीं होता ?

श्रीकृष्ण तो अलौकिक सुगंधि से भरे कमल के समान हैं। मृत्युलोक में सुगन्धित स्वर्ण के समान हैं सुन्दर पुष्पों से सुसज्जित पारिजात के वृक्ष के तथा निष्कलंक चन्द्रमा के समान हैं। (चन्द्रमा में कलंक होता है, कृष्ण निष्कलंक हैं अतः चन्द्रमा से अधिक सुन्दर हैं।)

यमुना की यह सुन्दर धार जो आपके सम्मुख प्रवाहित हो रही है, उसे पहले अत्यधिक विनाशक, कालिनाग का विष विषैला बनाता था अर्थात् कालिनाग के रहने से वह जल विषैला हो गया था।

पृष्ठ १३८—जहाँ ... ... प्रशंसनीय था ॥१२-१४॥

शब्दार्थ—सुकल्लोलित=सुन्दर क्रीड़ाओं में मग्न। मुहुर्मुहुः=बार-बार। सदम्बु=सुन्दर जल। द्विकूल=दोनों किनारे।

भावार्थ—जिस स्थान पर यमुना की धारा सुन्दर क्रीड़ाओं में मग्न है, वहीं पर एक विशाल जलाशय है। उसमें हमेशा हजारों सर्पिणियों के साथ एक सर्प रहता था।

उन साँपों के समूहों के बार-बार निकलते हुए श्वासों से यमुना का प्रवाह काँप उठता था और उनकी असह्य फूत्कार के प्रभाव से यमुना का निर्मल जल विषैला हो गया।

आपको यह सामने जो कदम्ब का वृक्ष दिखाई दे रहा है, उसके अलावा कोई अन्य वृक्ष नहीं था। दो कोसों तक यमुना के दोनों किनारों पर न हरियाली थी और न प्रशंसायोग्य सौन्दर्य था।

कभी यहाँ ... ... कटाक्ष से ॥१५-१७॥

शब्दार्थ—कदम्बु=विषैला जल। विपन्न=पीड़ित। व्रजापगा=व्रज की नदी, यमुना। दुर्भगा=बुरी। कृपा-कटाक्ष=दया-दृष्टि।

भावार्थ—कभी कोई पक्षी भी यदि भूल अथवा असावधानी से विषैला जल पी लेता तो अत्यन्त बेचैन और पीड़ित होकर तत्काल ही प्राण त्याग देता था।

यहाँ का विषैला जल पीकर हजारों मनुष्य प्रतिवर्ष नष्ट होते थे। अनेकों गौ, हरिण आदि पशु तथा करोड़ों कीट-पतगें इसी स्थान पर बिना मौत मृत्यु को प्राप्त होते थे।

यमुना में यह कालिनाग रूपी भयंकर रोग न जाने कब से लगा हुआ था। श्रीकृष्ण ने मनुष्य को मोक्ष प्रदान कराने वाली दया-दृष्टि से इस रोग को दूर कर दिया।

पृष्ठ १३९—बड़े ... ... पुंज को ॥१८-२०॥

शब्दार्थ—दिवानायक=सूर्य। दुरन्तता=असह्यता। वर्जित=निषिद्ध।

भावार्थ—एक बार सूर्य की असह्यता (गर्मी की असह्यता) बढ़ जाने पर अनेक ग्वाले प्यास से बहुत व्याकुल होकर अपनी गायों सहित यमुना के निषिद्ध किनारे पर गये।

किन्तु जैसे ही वे पानी पीकर अपनी गायों सहित यमुना के किनारे से आगे बढ़े, उसी समय वे गायों सहित अचेत होकर पृथ्वी पर इधर-उधर गिर पड़े।

इसी समय अकस्मात् श्रीकृष्ण इधर से निकले। उन्होंने अत्यन्त प्रयत्न करके नष्ट होते हुए अनेक प्राणियों का जीवन बचा लिया।

दिनेशजा ... ... हो गये ॥२१-२३॥

शब्दार्थ - यतः=क्योंकि । विगर्हणा=अपमान । हितैषणा=भलाई की इच्छा । बंक=टेढ़ी । विस्फरित=फैले हुए ।

भावार्थ--क्योंकि यमुना के विषैले जल पीने से ही यह दुर्घटना हुई थी अतः इसी समय कृष्ण को सर्प की भयंकरता का वास्तविक ज्ञान हुआ ।

अपनी जाति की अत्यन्त बुरी दशा देखकर, मनुष्य मात्र का अपमान देखकर तथा प्राणियों के कष्ट का विचार कर वीर पुरुषों में सिंह, श्रीकृष्ण बहुत उत्तेजित हो गए ।

अपनी जन्म-भूमि की भलाई की इच्छा से कृष्ण को बहुत क्रोध आया । उनकी भवें टेढी हो गईं तथा नेत्र अत्यन्त फैल गए ।

पृष्ठ १४०—इसी घड़ी ... ... परोपकार की २४-२६।।

शब्दार्थ- विधेय=कर्त्तव्य । भानु-कुमारिकांक=यमुना की गोद । व्याल=सर्प । अप-मृत्यु=काल । अवहेलना=उपेक्षा ।

भावार्थ—श्रीकृष्ण ने इसी समय शंकाओं को छोड़ कर दृढ़ निश्चय किया कि यमुना के भीतर से नाग को निकालना ही कर्त्तव्य है ।

इसलिए अपने अमूल्य प्राणों को हथेली पर रखकर मैं यह कार्य स्वयं करूँगा । अपनी जाति और जन्म-भूमि के लिए मैं इस भयंकर सर्प से भयभीत नहीं होऊँगा ।

मैं सदैव बुरी से बुरी मृत्यु का सामना करूँगा और इन्द्र के वज्र से भी नहीं डरूँगा । धर्म के प्रधान अंग—परोपकार—की मैं कभी भी उपेक्षा नहीं करूँगा ।

प्रवाह ... ... नन्दिनी ।।२७-२९।।

शब्दार्थ—शिरा=नाड़ी । लोम=बाल । सर्वभूत=सब प्राणी । निदान=इसलिए । पण=प्रण । याम=प्रहार । सित=श्वेत ।

भावार्थ—अंतिम सांस के चलने तक, एक भी नाड़ी में रक्त शेष रहने तक और शरीर में एक बाल में भी रुधिर रहने तक मैं सारे प्राणियों की भलाई के लिए कार्य करूँगा ।

इसलिए इस अद्भुत प्रतिज्ञा की डोरी से बँधकर कृष्ण दूसरे दिन यहाँ आये। उस समय सूर्य की कांति पृथ्वी को प्रकाशित कर रही थी।

यह दिन के दूसरे पहर का मनोहर समय था। आकाश और सम्पूर्ण दिशाओं में प्रसन्नता व्याप्त थी। यमुना सूर्य के श्वेत प्रकाश से चमकती हुई अपनी लहरों के साथ उमड़ी पड़ रही थी।

पृष्ठ १४१—विलोक ... ... कुण्ड पै ॥३०-३२॥

शब्दार्थ - मेदिनी=पृथ्वी। समुच्छिन्न=छिन्न-भिन्न।

भावार्थ—सुन्दर आकाश, पृथ्वी, खिले हुए कमल तथा पुष्पों से लदी लताओं को प्रसन्नतापूर्वक देखते हुए अत्यन्त उत्साह और आनन्द के साथ अपनी वंशी लेकर श्रीकृष्ण कदम्ब पर चढ़ बैठे।

उन्होंने पहले सुन्दर शाखाओं को हिलाकर बहुत से पुष्प गिरा दिये। फिर वे प्रसिद्ध कुण्ड में कूद पड़े। जल-प्रवाह छिन्न-भिन्न सा हो गया और आकाश में कँपा देने वाला भयंकर शब्द गूंज उठा।

गाँव में बहुत हलचल मच गई। व्रज के घर-घर में दुःख फैल गया। राजा नन्द अत्यन्त व्याकुल होकर दौड़ते हुए आकर उस कुण्ड पर जा खड़े हुए।

पृष्ठ १४१—असंख्य ... ... मर्दिनी ॥३३-३५॥

शब्दार्थ—विसूरती=विलाप करती हुई। दंड=पल। तमारिजा=यमुना। श्रुति-गोचरा=कानों में आती हुई। मर्दिनी=नाश करने वाली।

भावार्थ - राजा नन्द के साथ अनेक व्यक्ति नेत्रों से अश्रु गिराते हुए तीव्र गति से आ गये। उधर हजारों व्रजनारियों को लेकर यशोदा भी विलाप करती हुई आ पहुंची।

दो पल में ही यमुना-तट जनसमुदाय से भर गया। इन दुःखियों के करुण-रुदन से वन-भूमि काँप उठी।

कभी-कभी इस भयंकर रुदन का भेदन करके कृष्ण की मुरली का अत्यन्त मधुर स्वर जो शान्ति-प्रदान करने वाला तथा कष्टों को नष्ट करने वाला था, सुनाई पड़ जाता था।

पृष्ठ १४२—व्यतीत ... ... शनैः-शनैः ।।३६-३८।।

शब्दार्थ – पतगजा=यमुना । उद्भेदित=फटा । पन्नगी=सर्पिणी । विदार=चीर कर । प्रमत्त=मस्त ।

भावार्थ - इस प्रकार कई घड़ियाँ बीत गईं । तत्पश्चात् यमुना में फिर हिलोरें उठने लगीं । अंत में यमुना का प्रवाह फटा और अत्यन्त आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई देने लगा ।

अनेक फन वाला, अत्यधिक भयंकर, विशाल शरीर वाला, काले पर्वत जैसा तथा बहुत बलवान सर्प यमुना में से निकलता दिखाई दिया ।

उस सर्प के साथ विशाल शरीर वाली तथा भयंकर सर्पिणी व अनेक बड़े सर्प थे । विषैले कुण्ड का वक्षस्थल चीरते हुए वे मस्ती से, धीरे-धीरे निकलने लगे ।

फणीश ... ... विमोहिनी ।।३६-४१।।

शब्दार्थ --विकीर्णकारी=बिखरने वाले । दुकूल=दुपट्टा । विलम्बिता=लटकी हुई । अहीश=सर्पराज । वर-रज्जु=श्रेष्ठ रस्सी ।

भावार्थ —उस नाग के शीश पर श्रीकृष्ण की सुन्दर मूर्त्ति शोभायमान हो विराज रही थी । उनके सुन्दर नेत्र ज्योति बिखेरने वाले थे । उनका मुख अत्यन्त प्रफुल्लित था ।

उनके मुकुट की शोभा अनुपम थी । कमर में सुन्दर पटका कसा हुआ था । सुन्दर कन्धे पर दुपट्टा शोभायमान था । गले में वनमाला लटकी हुई थी ।

अद्भुत ढंग से सर्पराज को नाथ कर, अपने हाथ में मजबूत रस्सी पकडे हुए वे धैर्य बँधाने वाली, मोहित करने वाली तथा आनन्दित करने वाली बाँसुरी बार-बार बजा रहे थे ।

पृष्ठ १४३—समस्त ... ... हो गये ।।४२-४४।।

शब्दार्थ – सिक्त=भीगा हुआ । शंकित-भीत=शंकाओं से भयभीत । घोर-त्रास=महान-भय ।

भावार्थ—उनके सम्पूर्ण प्रिय वस्त्र भीग गये थे। वनमाला भी भीगने से नहीं बची थी। उनके केशों से अत्यन्त अद्भुत ढंग से जल-बूंदें टपक रही थीं।

सर्प-समूह को साथ लेकर ज्योंही कृष्ण यमुना की गोद से निकले, तट पर खड़े सभी व्यक्ति शंकाओं से भयभीत हो उठे।

कई व्यक्ति गहन-भय से मूर्च्छित हो गए। कई भाग गये और कई पृथ्वी पर गिर गये। यशोदा थर-थर काँपने लगी तथा राजा नन्द भी अस्त-व्यस्त हो गए।

विलोक ... ... तजा ॥४५-४७॥

शब्दार्थ—भयातुरा=भय से व्याकुल। यूथ=समूह। अगम्य=जहाँ कोई पहुंच नहीं सके। कानन=जंगल। सदर्प=गर्व के साथ। यम-यातना=मृत्यु जैसा घोर कष्ट।

भावार्थ - सारी जनता को भय से व्याकुल देखकर कृष्ण ने सम्पूर्ण सर्प-समूह को एक दूसरे मार्ग से किनारे पर चढ़ा दिया तथा अत्यधिक तीव्र गति से वन की ओर बढ़ा कर ले चले।

श्री कृष्ण की वंशी की अलौकिक ध्वनि से, ध्यानपूर्वक चलाने से तथा सुन्दर उपाय से सम्पूर्ण सर्प उनके वश में हो गये थे वे उनकी इच्छा के तनिक भी विपरीत नहीं चलते थे।

पर्वत के निकट जहाँ वन बहुत बीहड़ हो गया था, कृष्ण ने सर्पराज को परिवार सहित घोर कष्ट देकर गर्वसहित छोड़ दिया।

पृष्ठ १४४—न नाग ... ... हीन हो ॥४८-५०॥

शब्दार्थ—प्रमोद=आनन्द। मनीषी=विद्वान। गर्त्त=गड्ढा। जनोपघाती=मनुष्यों को मारने वाला।

भावार्थ—उस समय से कालीनाग दिखाई नहीं पड़ा है। उसी समय से यमुना अत्यन्त निर्मल जल वाली हो गई है। सब लोग आनन्द से घर लौटे तथा सम्पूर्ण ब्रज में हर्ष छा गया।

अनेक व्यक्ति कहते हैं कि कृष्ण ने सर्पराज को वन में वंश सहित मार डाला। कई विद्वानों का विचार है कि वह किसी गड्ढे में छिपा हुआ पड़ा है।

अनेक व्यक्ति यह भी कहते सुने गए हैं कि मनुष्यों का विनाश करने वाला सर्प विषैले दाँतों से रहित होकर, ब्रज की पवित्र भूमि त्याग कर और कहीं चला गया है।

प्रवाद ... ... जायगा ॥५१-५३॥

शब्दार्थ—प्रवाद=अफवाह। पतंग-नन्दिनी=यमुना।

भावार्थ अफवाहें कुछ भी क्यों न हों परन्तु एक बात सत्य है और यह बात मैं हर्षित होकर बड़े गर्व से कह सकता हूँ कि कृष्ण से ही ब्रज की यह विपत्ति (कालिनाग) दूर हुई है तथा यमुना कालिनाग रहित हो गई है।

वही अत्यन्त धैर्यशाली, अपार साहसी, चतुर, मनुष्य रत्न तथा अलौकिक बुद्धि वाला कृष्ण दुर्भाग्यवश ब्रजभूमि से अलग हो गया है। अतः हमेशा ही अत्यधिक पीड़ा क्यों नहीं होगी?

हमारे हृदय में कृष्ण की भलाई भरी पड़ी है। हमारे शरीर का रोम-रोम उसके प्रेम में डूबा हुआ है। उन्होंने हमारे लिए बड़े उपकार किए हैं, इसलिए ब्रजभूमि उन्हें किस प्रकार भुला सकेगी।

पृष्ठ १४५—जहाँ रहें ... ... व्योम था ॥५४-५६॥

शब्दार्थ—तात=पिता, नन्द। निदाघ=ग्रीष्म-ऋतु। दुरन्त=असह्य। अपर=अन्य। स्फुलिंग=चिंगारियाँ।

भावार्थ—(हम यह चाहते हैं कि) कृष्ण जहाँ भी रहें सदैव सुखी रहें परन्तु अपने माता-पिता को नहीं भूलें। कभी-कभी आ कर अपना सुन्दर मुख दिखाते रहें और इस प्रकार ब्रजवासियों के समूह को जीवन-दान देते रहें।

अत्यंत मुग्ध होकर वृद्ध गोप ने जब अपना अत्यन्त मनोरम भाषण समाप्त किया तो एक अन्य प्रतिष्ठित ग्वाले ने कृष्ण के गुणों का सुन्दर वर्णन इस प्रकार प्रारंभ किया—

ग्रीष्म ऋतु का अत्यन्त कष्टकर समय था। सूर्य की किरणें बहुत भयंकर हो गई थीं। पृथ्वी तवे के समान तप रही थी। गर्म आकाश चिंगारियों की वर्षा करने में संलग्न था।

प्रदीप्त ... ... हो गई ॥५७-५६॥

शब्दार्थ आतप=धूप। पतंग=सूर्य। रजाक्त=धूल-युक्त। मर्दनोद्यता=नष्ट करने को तत्पर। निनादिता=गर्जना करके। इव=समान।

भावार्थ दिशाओं में मानो आग प्रज्ज्वलित थी। धूप अग्नि की लपटों के समान जलाने वाली थी। सूर्य की भयंकरता को देखकर वृक्ष-समूह की पक्तियां काँप रही थीं।

अत्यन्त भयंकर गति से चलने वाली वायु मानो बार-बार तैयार हो कर गर्जना करती थी। यह वायु आकाश और दिशाओं को धूल से भर रही थी और अनन्त वृक्षों को नष्ट करने में तत्पर थी।

धूल के कण गर्म होकर तपे हुए लोहे के कणों के समान हो गये थे। पृथ्वी की धूलि जलते हुए भाड़ की बालू के समान भीषण हो गई थी।

अलकार—५६वें में उपमा।

पृष्ठ १४६—असह्य ... ... ग्राम था ॥६०-६२॥

शब्दार्थ—पल्लववान=पत्तों वाली। समुद्विग्न=व्याकुल।

भावार्थ—गर्मी असह्य तथा अत्यन्त भयंकर हो गई थी। सारे मनुष्य अत्यधिक व्याकुल थे। प्राणियों की प्रिय शान्ति को नष्ट करने वाली ग्रीष्म-ऋतु की गर्मी अत्यधिक भयंकर थी।

अनेक व्यक्ति व्याकुल होकर ग्रीष्म ऋतु के भयंकर समय को किसी सघन पत्तों वाले वृक्ष की घनी छाया में अथवा सुन्दर कुंज में बिताते थे।

सभी मनुष्य बेहोश से होकर अपने घरों में सो रहे थे। एक भी व्यक्ति आता-जाता नहीं दिखाई देता था। सम्पूर्ण ग्राम अत्यन्त शान्त था।

स्व-शावकों ... ... राज्य था ॥६३-६५॥

शब्दार्थ—अबोल=शान्त गिरा=वाणी। गमनाभिशकया=चलने के डर से।

भावार्थ—पक्षी-समूह अपने बच्चों सहित अपने घोंसलों में शान्त पड़े थे (उस शान्ति को देख कर ऐसा प्रतीत होता था) मानो उस भीषण गर्मी से डर कर वाणी भी अपने घर (मुंह) से नहीं निकलती थी।

पशु शक्तिहीन होकर, लंगड़े से सुन्दर कुंजों में तथा घने वृक्षों के नीचे पड़े हुए थे। अत्यन्त तपी हुई भूमि पर चलने की आशंका से मानों गति पैरों को छोड़ कर भाग गई थी।

भीषण लू चल रही थी व अत्यधिक कड़ी धूप थी। वायु बार-बार गरज रही थी। ऐसा ज्ञात होता था कि इस समय अन्य सभी का प्रभाव नष्ट हो गया था, केवल ग्रीष्म ऋतु का अखंड राज्य था।

पृष्ठ १४७—अनेक ... ... है लगी ॥६६-६८॥

शब्दार्थ—विराम=विश्राम। अचिन्त्य=अचानक। भूरि=तीव्र। अजस्र=निरन्तर। उत्थित=उठे हुए। दावा=वन की आग।

भावार्थ—अनेक ग्वालों, बछड़ों तथा गायों को लेकर श्रीकृष्ण ऐसे कठोर समय को वन में स्थित एक विश्राम-कुंज में अत्यन्त शांतिपूर्वक बिता रहे थे।

किन्तु श्रीकृष्ण की यह प्रिय शांति तत्काल छिन्न भिन्न हो गई क्योंकि अचानक ही दूर से एक तीव्र स्वर सुनाई पड़ने लगा, जो निरन्तर बढ़ता ही जा रहा था।

श्रीकृष्ण ने उठते हुए भयानक स्वर को कान लगाकर बार-बार सुना अतः उन्हें तत्काल ही ज्ञात हो गया कि वन में भीषण आग लग गई है।

गये उसी ... ... दिगन्त को ॥६९-६१॥

शब्दार्थ—गवादि=गाय आदि । पूषण=सूर्य । धु-पुंज=धुएँ के समूह ।

भावार्थ—कुछ समय पूर्व ही गौ आदि लेकर अनेक ग्वाले उसी ओर गये थे । अतः व्रज के चन्द्रमा कृष्ण को अपने बंधु-बांधवों के विषय में अत्यधिक चिन्ता हुई ।

इसलिए सूर्य की, ग्रीष्म ऋतु की तथा वायु की भयंकरता की ओर ध्यान दिए बिना कृष्ण अपने शान्ति-प्रदान करने वाले कुंज को त्याग कर तथा सहसी ग्वालों का समूह साथ लिए दौड़ पड़े ।

कृष्ण जैसे ही कुंज से बाहर निकले, उन्हें दाईं ओर धुएँ का बहुत बड़ा पर्वत दिखाई दिया । उस धुएँ से सारी दिशाएँ काली हो गईं थीं ।

पृष्ठ १४८ - अभी गये ... ... वनस्थली ।।७२-७४।।

शब्दार्थ—विधूनिता=टकराकर । वह्नि=अग्नि । वंश=बाँस ।

भावार्थ वे लोग अभी कुछ ही दूर गये थे कि उन्हें भयंकर लपटें दिखाई देने लगीं । वन में लगी अग्नि की लपटें बार-बार दिशाओं में व्याप्त होने लगीं ।

प्रचंड, तीव्र और बहती हुई वायु से टकरा कर अग्नि की लपटें अत्यधिक भयानक बन जाती थीं । यह अग्नि प्रलय के समान विकराल हो रही थी ।

अनेकों वृक्ष जल रहे थे और अगणित गाँठें शब्द करती हुई फट पड़ती थीं । बाँस के वृक्षों वाले स्थान से तो विशेष-रूप से वन में जोर का शोर होता था ।

अलंकार—७३वें में उपमा ।

पृष्ठ १४९—अपार पक्षी ... ... वसुंधरा ।।७५-७७।।

शब्दार्थ सरीसृपादि=रेंगने वाले जीव जैसे साँप । बलभद्र बंधु=कृष्ण ।

भावार्थ—अनेक पशु-पक्षी बहुत भयभीत होकर व्याकुलता से इधर-उधर दौड़ रहे थे। सर्प आदि रेंगने वाले जीव अत्यन्त भयभीत होकर बड़ी व्यग्रता से भाग रहे थे।

बलराम के भाई कृष्ण ने वहाँ जा कर निकट से यह अत्यन्त भयंकर दृश्य देखा। तीनों लोक में कौन ऐसा वीर है जो अपने नेत्रों से ऐसा दृश्य देख कर काँप न उठे।

सूर्य की उस प्रचंडता में वन की अग्नि की भयंकरता बढ़ती ही जा रही थी। उस अग्निकांड को देख कर ऐसा प्रतीत होने लगा मानो व्रजभूमि अब जल जायेगी।

पहाड़ ... ... से भरा ॥७८-८०॥

शब्दार्थ--तूल=रुई। त्राण=रक्षा। पलायनेच्छु=भागने के इच्छुक।

भावार्थ—पर्वत जैसे विशाल वृक्ष रुई के ढेर की भाँति क्षण भर में ही जड़-सहित जल कर नष्ट हो जाते थे। बड़े-बड़े पत्थरों के टुकड़े तिनकों के समान तत्काल जल जाते थे।

अनेकों पक्षी आकाश में उड़ कर भी आग की लपटों से नहीं बच पाते थे। भागने की इच्छा करने वाले हजारों पशु पतिंगों के समान जल-जल कर प्राण त्याग रहे थे।

किसी पशु का पाँव जल गया था तो किसी की पूंछ। किसी पशु का जलता हुआ शरीर पड़ा था। अनेकों पशु जल गये थे और अगणित जल रहे थे। सम्पूर्ण दिशाएँ उस भयंकर करुणानाद से भर गई थीं।

अलंकार—७८वें में उपमा।

भयंकरी ... ... असक्त सा ॥८१-८३॥

शब्दार्थ—दिवांधता-कारिणी=दिन में भी अन्धकार करने वाली। त्रास-वर्द्धिनी=भय बढ़ाने वाली। संज्ञा=होश। असक्त=अशक्त, शक्तिहीन।

भावार्थ—उस वन-भूमि में जलती हुई अग्नि की भयंकर लपटें, दिन

को भी अंधकार से भर कर अंधा बना देने वाली धुएँ की घटाएँ तथा निरन्तर भय बढ़ाने वाला घोरशब्द फैला हुआ था।

करुणा-सागर कृष्ण ने इसी स्थान पर गौओं आदि को अपने बन्धुओं सहित देखा। आग की लपटों से धीरे-धीरे प्राय: वे सब अचेत होने लगे।

वन की अग्नि में से अपने आप को बचाने के असफल प्रयत्न करते देख कृष्ण को बहुत दया आई विशेषकर उन्हें शक्तिहीन सा पा कर।

पृष्ठ १५०—अतः सबो — हेतु है ॥८४-८६॥

शब्दार्थ—पावक=अग्नि। सर्व-भूत=सम्पूर्ण प्राणियों का। भव-जन्म हेतु=संसार में जन्म लेने का कारण।

भावार्थ—अतः कृष्ण ने अपने सभी साथियों से कहा—अपनी जाति को बचाने के महान् धर्म के लिए अग्नि में प्रवेश करें और गौओं सहित अपनी जाति की रक्षा करें।

सब प्राणियों की विपत्ति से रक्षा करना, बेसहारे जीवों का सहारा बनना, अपनी जाति को कष्ट से छुटकारा दिलाना मानव का सबसे बड़ा धर्म है।

अपने प्राणों का मोह त्यागे बिना तथा जलती हुई अग्नि में पड़ने का खतरा उठाये बिना संसार का कोई भी महान् कार्य नहीं हो सका है और न ही इस संसार में जन्म लेने का उद्देश्य सफल होता है।

विशेष – कृष्ण का लोकरंजन रूप।

बढ़ो करो ... ... तो सदा ॥८७-८९॥

शब्दार्थ—विध=प्रकार। दुरूह पंथ=कठिन मार्ग।

भावार्थ—हे वीरो ! अग्नि में बढ़ो और अपनी जाति का कल्याण करो। हमें दोनों प्रकार से अत्यन्त लाभ होगा या तो हम अपने कर्त्तव्य का पालन कर लेंगे अथवा अग्नि में जल कर सुयश के अधिकारी होंगे।

वे सब ओर से आग की लपटों से घिरे हुए हैं केवल एक कठिन मार्ग शेष है। यदि थोड़ा भी और विलम्ब हो गया तो वह शेष मार्ग भी जाने योग्य नहीं रहेगा।

इसलिए और देर करने में भलाई नहीं है। सब अपने कार्य में शीघ्र ही लग जाओ। यदि हम इन ग्वालों को गौओं सहित नहीं बचा सके तो बड़ा अपयश होगा।

पृष्ठ १५१—ब्रजेन्दु ... ... भूरिशः ॥९० ९२॥

शब्दार्थ—समुन्मूलन=नष्ट। कराल=भयंकर। भूरिशः=काफी।

भावार्थ—यद्यपि ब्रज के चन्द्रमा कृष्ण ने जोश भरे स्वर से गोप मंडल को उत्साहित किया तथापि उनके अनेक साथी ठीक ढंग से अपने कार्य म नहीं लग सके।

दोपहर की भयंकर गर्मी से अधिकांश अपना धैर्य पहले ही खो चुके थे। उनके शेष बचे साहस को वन की आग ने हर प्रकार से नष्ट कर दिया।

उनसे शरीर झुलसाने वाली भयंकर अग्नि सहन नहीं हो रही थी। कष्टों से भरा वह मार्ग भी उन्हें पर्याप्त भयभीत बना रहा था।

अतः हुए ... ... वेलि बो ॥९३-९३॥

शब्दार्थ - निदेश=आज्ञा। भ्रान्त=पागल।

भावार्थ—इसलिए वे लोग अत्यधिक पागल से हो रहे थे तथा उनकी चेतना धीरे-धीरे नष्ट होती जा रही थी। ब्रजभूमि के रक्षक कृष्ण की आज्ञा से वे क्षण भर के लिए ही प्रयत्न कर पाते थे।

अपने साथियों की यह बुरी अवस्था देख कर वे अत्यन्त वीर की तरह भयंकर वनाग्नि में स्वयं प्रविष्ट हो गए। वे इतनी शीघ्रता से अग्नि में घुसे कि सब ब्रजवासी आश्चर्यचकित हो गए।

प्रवेश करने के पश्चात् वे सम्पूर्ण ग्वालों तथा गौओं को साथ लेकर तीव्र गति से बाहर निकले। तीनों लोकों को स्वर्गीय स्फूर्ति दिखा कर उन्होंने पृथ्वी पर सुन्दर यश-वेलि बो दी।

पृष्ठ १५२—बचा सबों ... ... विलोकता ॥९६-९८॥

शब्दार्थ—काण्ड=घटना। कौस्तुभ=मूल्यवान मणि। वित्त=धन।

भावार्थ—जैसे ही सभी को बचाकर श्रीकृष्ण बाहर आये वैसे ही

वह मार्ग भी अग्नि की भयंकर लपटों से घिर गया। यह घटना देखते ही सभी श्रीकृष्ण की ससम्मान प्रशंसा करने लगे।

ब्रज की भूमि दुर्भाग्यशालिनी है तथा हम ब्रज के ग्वाले भी अत्यन्त भाग्यहीन ही हैं जो राजा नन्द की मूल्यवान मणि तो छिनी ही साथ ही हमारे हाथों से ब्रजभूमि का अमूल्य रत्न छिन गया।

यदि हमारे पास धन न होता अथवा हमारी सम्पत्ति नष्ट जाती; हजारों गायें तथा भूमि छिन जाती अथवा हमारा सर्वस्व नष्ट हो जाता, तब भी हमें कष्ट नहीं होता यदि हम कृष्ण का कमल-मुख निहारने पाते।

अतीव ... ... को ॥९६॥

शब्दार्थ—उत्कण्ठित=इच्छुक।

भावार्थ—मैं एक बार पुनः इस मनोरम वृन्दावन रूपी आकाश की गोद में कृष्ण के मुख रूपी चन्द्रमा को देखने के लिए सदैव अत्यधिक इच्छुक रहता हूं।

अलकार—सांगरूपक।

———

द्वादश सर्ग

पृष्ठ १५३–ऊधो ... ... सुनाया ॥१॥

शब्दार्थ—आभीर=अहीर।

भावार्थ—जिस समय ग्वाले दुःखी होकर कृष्ण की गुण-गाथा सुना रहे थे, उसी समय अहीरों का एक नया दल वहाँ पर आया। उस दल ने भी अनेक बातें उदास होकर तथा रो-रोकर सुनाईं। तत्पश्चात् उन्होंने कृष्ण की कीर्ति गा कर इस प्रकार सुनायी।

सरस ... ... दामिनी ॥२-३॥

शब्दार्थ—वक-मालिका=बगुलों की पंक्ति। सानु=चोटी। क्षिति=पृथ्वी। अंशु=किरण।

भावार्थ—सावन का सुन्दर मनोरम महीना था। आकाश में बादल घिर घिर कर घूम रहे थे। उनमें बगुलों की उड़ती पंक्तियाँ बार-बार शोभायमान हो जाती थीं।

बादल कभी तो पर्वत की चोटी के निकट गरजते थे और कभी पृथ्वी-तल को छूते हुए ताजा जल बरसाते थे। कभी बादल छिपते हुये सूर्य की किरणों से टकराकर आकाश में इन्द्र-धनुष की रचना करते थे।

बादलों में कभी-कभी बिजली चमक उठती थी। यह बिजली कभी नवीन कान्ति की अत्यन्त चमकदार लकीर के समान और कभी टेढ़ी-मेढ़ी दुष्ट नागिन के समान लगती थी तथा क्रीड़ाओं की खान थी !

अलंकार—चौथे पद में उपमा।

विविध-रूप ... ... हरीतिमा ॥५-७॥

शब्दार्थ—रस-सेक=जल की वर्षा। रसा=पृथ्वी। राजि=समूह। सरसी=तालाब।

भावार्थ—मेघ-समूह कभी तो आकाश में विभिन्न रूप धारण किए हुए विचरण करता था तो कभी ज़ल बरसाता था जिससे पृथ्वी जल-युक्त हो जाए।

छोटे तालाब जल से भर गये थे। बड़े तालाबों के समूह जल से भरे हुए थे। नदी भी किनारों को भिगो-भिगो कर आनन्द से बह रही थी।

पृथ्वी पर नई कोमल हरी-हरी घास अत्यन्त शोभित हो रही थी। वृक्षों के समूह की अनोखी हरियाली नेत्रों की प्रसन्नता के लिए मधुर प्रतिमा के समान थी।

पृष्ठ १५४ हिल, लगे ... ... पुंज था ॥८-१०॥

शब्दार्थ सुठि=सुन्दर। मरकतोपम=नीलम मणि से उपमा देने योग्य। पिक=कोयल। पुच्छ=पूँछ।

भावार्थ—वृक्ष-समूहों के जल से धुले पत्ते मधुर व मन्द वायु के झोकों से हिलकर अपनी सुन्दर गोद से पानी की बूंद गिराकर किसका मन मोहित नहीं कर रहे थे ? अर्थात् सभी के मन को मोहित कर रहे थे।

अनेक मोर अपनी मोरनियों को साथ लेकर आनन्द व सुख से विचरण करते थे। मोरें नीलम जैसी शोभा वाली पूंछों से वन की कुंज को मणि-जटित सी बना रहे थे।

पपीहा पागल सा बनकर पी-पी पुकार उटता था। वसंत को भी मोह लेने वाले सौन्दर्य को देखकर कोयलों का समूह उमंग से भरकर कूक करता था।

स-ख ... ... उपकारिता ॥११-१३॥

शब्दार्थ—भेक=मेंढक। वीर-बहूटी=एक लाल रंग का कीड़ा। पावस=वर्षा-ऋतु।

भावार्थ पानी में मेंढकों के समूह टर-टर का शब्द करते हुए वर्षा-ऋतु रूपी महाराज का यशोगान कर रहे थे। पृथ्वी पर अनेकों झींगुर धुन-लगाकर उसी का गायन करते थे।

पृथ्वी के प्रेम के समान प्रकट हुई वीर-बहूटियाँ (अपने लाल रंग के कारण) सुखदायक वर्षा-ऋतु के प्रति मानो सबका प्रेम प्रकट कर रही हों।

अत्यन्त मलीन हुई अनेक लताओं को फलती-फूलती देखकर वर्षा-ऋतु के सुखदायक शासन की परोपकारता सबके हृदय में समा गई।

अलंकार—१ वें पद में उपमा तथा उत्प्रेक्षा।

पृ० १५५—विविध ... ... कहें। १४-१६॥

शब्दार्थ प्रतिपत्ति=महिमा। उदक=जल। बुध=बुद्धिमान।

भावार्थ—अनेक अ कार-प्रकार की तथा फल-फूल वाली सुन्दर जड़ी-बूटियाँ उत्पन्न होती देख कर ऐसा प्रतीत होता था मानो पृथ्वी पर बादल की महिमा प्रकाशित हो रही हो।

सारे विश्व की वस्तुओं को रसपूर्ण देख कर तथा पृथ्वी पर रसपूर्णता देख कर ऐसा प्रतीत होता है मानो जल का नाम रस सर्वथा उचित है।

मुर्दे के समान हुई घास भी जल से पुनः जीवित हो गई। प्राणियों

को जिससे (पानी से) पुनः सुन्दर जीवन मिला हो, उसे बुद्धिमान व्यक्ति प्राणदाता क्यों न कहें।

अलंकार—जीवन शब्द में यमक।

पृष्ठ १५५—व्रज-धरा ... ... दामिनी ॥१७-१६॥

शब्दार्थ—भुज-पोत=भुजा रूपी जहाज। प्रभंजन=आँधी : अशनि=वज्र, बिजली।

भावार्थ—इन्हीं दिनों एक बार व्रज-भूमि दुःख-सागर में डूबी हुई थी परन्तु उसे कृष्ण के भुजा रूपी जहाज का सहारा मिला हुआ था।

एक दिन अत्यन्त भयंकर आँधी का प्रकोप हुआ। आकाश में मेघ छा गये। ये मेघ बहुत भयकर, गहरी काली स्याही के समान काले व सारे विश्व को कंपा देने वाले थे।

दिशाओं में वज्रपात के समान भयंकर शब्द व्याप्त हो रहा था। वायु प्रवाह को चीरती हुई बिजली आकाश में चमक उठती थी।

अलंकार—१७वें में सांगरूपक तथा १६वें में उपमा।

पृष्ठ १५६—मथित ... ... कोटिशः ॥२०-२२॥

शब्दार्थ—ताड़ित हो=टकरा कर। तोयधि=समुद्र। नीरद=बादल। असितता=कालापन। रलकारिता=गड़गड़ाहट। कज्जल=काजल।

भावार्थ—अत्यन्त भयंकर आँधी द्वारा मथे जा कर, चल कर व टकरा कर जब बादलों के अनेक समूह व्रज पर उमड़ते घुमड़ते आ रहे थे।

समुद्र की ऊँची व चंचल लहरों के समान घने बादल घिर-घिर कर घूम रहे थे। उनका कालापन, गहनता व गड़गड़ाहट का शोर शीघ्रता से बढ़ता जा रहा था।

उस समय यही जान पड़ता था कि व्रज में प्रलय के बादल मंडरा रहे हैं अथवा आकाश में जल से भरे काजल के करोड़ों पर्वत एकत्र हो गए हैं।

अलंकार—२१वें में उपमा, २२वें में उत्प्रेक्षा।

पतित थी ... ... धार था ॥२३-२५॥

शब्दार्थ—दारक=विदारक। पवि=वज्र। वासर=दिन। कुहू= अमावस्या।

भावार्थ व्रजभूमि पर बार-बार कलेजे को चीर देने वाली बिजली गिर रही थी। इतनी भयंकर गड़गड़ाहट सुनना असह्य था। वज्र का कान भी उसे नहीं सह सकता था।

अंधेरे की भयंकरता बढ़ती जा रही थी। नेत्रों को सर्वत्र अंधकार दिखाई पड़ता था। सुन्दर चमकीला दिन भादों मास की अमावस्या की रात के समान कालिमा की खान बन गया था।

पहले तो शब्द करती हुई बूंदें पड़ीं तत्पश्चात् तीव्रता से जल गिरने लगा। प्रलय के समान वातावरण उत्पन्न करके जल मूसलधार बरसने लगा था।

अलंकार—२३ व २४वें पदों में उपमा।

पृष्ठ १५७—जलद ... ... शृंग थे ॥२६-२८॥

शब्दार्थ—तीवर=शक्तिशाली। क्षण-प्रभा=बिजली। विचूर्णित= चूर्ण बने हुए।

भावार्थ—मेघ-गर्जन, आँधी की गड़गड़ाहट तथा भारी वर्षा का भयंकर शब्द शक्तिशाली व्यक्तियों को भी कंपा कर व्रजभूमि में व्याप्त हो गया था।

बड़ी-बड़ी शाखाएँ टूट कर गिरती हुई भीषण शब्द करती थीं। बिजली गिर कर वृक्ष-समूहों को सैकड़ों टुकड़ों में विभाजित कर देती थीं।

सब मकान टूट पड़ रहे थे और मनुष्यों के प्राण घोर सकट में पड़ गये थे। शक्तिशाली बिजली के क्रोधपूर्ण प्रहार से पर्वत-चोटियाँ चूर्ण-चूर्ण हो रही थीं।

दिवस बीत ... ... रविनन्दिनी। २९-३१॥

शब्दार्थ—गर्त्त=गड्ढा। रविनन्दिनी=यमुना।

भावार्थ—दिन बीत गया और रात्रि हो गई। पुनः दिन निकल आया परन्तु अन्धकार-राशि की सघनता तनिक भी कम नहीं हुई। न वर्षा रुकी और न वायु।

सारे तालाब पहले ही जल से परिपूर्ण थे अतः एक दिन और एक रात में ही ब्रज-भूमि जल में डूब गई। नगर तथा ग्राम जल में डूबने लगे।

छोटे तालाब बहुत बड़े तालाब बन गये थे तथा छोटे से गड्ढे तालाबों में परिवर्तित हो गए थे। अनेक लहरों से परिपूर्ण तथा गम्भीर नाद करने वाली सूर्य-पुत्री यमुना भी सागर के समान प्रतीत होने लगी।

पृष्ट १५८—तदपि था ... ... दे सके ॥३२-३४॥

शब्दार्थ—अपर=अन्य। बहुज्ञ=विद्वान।

भावार्थ—इतना होने पर भी पानी पहले की तरह बरसता देख कर अत्यन्त व्याकुलता बढ़ गई। अत्यन्त व्यग्र हो कर तथा धैर्य गवाँ कर अनेक लोग ब्रजराज नन्द के पास गये।

प्रकृति का प्रकोप देख कर राजा नन्द पहले ही याकुल थे। अनेक लोगों को आया देख कर उनकी बेचैनी और बढ़ गई।

परन्तु राजा एक भी उचित उपाय नहीं सोच सके जिससे इस आपत्ति को टाला जा सके। वहाँ पर जो अन्य विद्वान थे वे भी ठीक सलाह नहीं दे सके।

तड़ित ... ... भूप से ॥३५-३७॥

शब्दार्थ—वदनांबुज=मुख-कमल। नवल=नया=छोटा।

भावार्थ—इसी समय कमर में बिजली जैसी काछनी पहने हुए व बादल के समान आभा वाला एक छोटा बालक नर-समुदाय में खड़ा दिखाई दिया।

ब्रज-विभूषण कृष्ण को देख कर उपस्थित नर-समुदाय प्रसन्नता से खिल उठा। फिर नर-समुदाय अत्यन्त उत्कंठा व प्रेम से कृष्ण का मुख-कमल देखने लगा।

सब उपस्थित नर-समुदाय को अपना मुख देखते हुए पाकर कृष्ण ने अत्यन्त विनम्रता से ब्रजराज नन्द से यह कहा—

अलंकार—३५ व ३६वें पदों में उपमा।

पृष्ठ १५६—जिस प्रकार ... ... है वही ॥३८-४०॥

शब्दार्थ—कुपिता=क्रोधित। दरियाँ=गुफाएँ। कन्दर=गुफा।

भावार्थ—आकाश में जैसे बादल घिर रहे हैं तथा प्रकृति जितनी क्रोधित हुई है, उससे यही प्रतीत होता है कि इस विपत्ति का टलना अत्यन्त कठिन है।

अत: पर्वत की गुफाओं के अलावा अब रक्षा का अन्य उपाय नहीं है। इस समय प्रयत्न करके पर्वतराज गोवर्धन की शरण में चलना ही उपयुक्त है।

इस पर्वत में अनेक सुन्दर गुफाएँ हैं तथा कई बड़ी गुफाएं हैं वह नगर तथा ग्रामों के निकट भी है अत: जाने योग्य उचित स्थान वही है।

सुन गिरा ... ... सचेष्ट हो ॥४१-४३॥

शब्दार्थ - वारिद-गात=मेघ शरीर वाले कृष्ण। अवधरित=निश्चित। तमिस्र=अन्धकार। वर्षण=बरसना। मंत्रणा=सलाह। अचेष्टित=प्रयत्न बिना।

भावार्थ—मेघ जैसे शरीर वाले कृष्ण की यह बात सुन कर पहले तो बहुत वाद-विवाद हुआ परन्तु बाद में यही निश्चित हुआ कि पर्वत की शरण के अलावा अन्य सहारा नहीं है।

परन्तु अन्धकार की सघनता, बिजली का गिरना, आँधी की भीषणता तथा बरसे हुए पानी की बाढ़ देख कर सारा सलाह व्यर्थ हो जाती थी।

अत: कृष्ण ने पुन: तेजस्वी स्वर से जन-समुदाय से कहा—बिना प्रयत्न किए जीवन त्याग कर देने से प्रयत्न करने के पश्चात् मरना अधिक श्रेष्ठ है।

पृष्ठ १६०—विपद संकुल ... ... कालका ॥४४-४६॥

शब्दार्थ—भवितव्य=भाग्य। अ-श्रेय=अकल्याणकारी। भूति=लक्ष्मी। कवल=कौल। अवमानित=अपमानित।

भावार्थ—संसार की रचना विपत्तियों से भरी हुई है। भविष्य के असंख्य रहस्य इसमें छिपे हैं। हर क्षण प्राणों का भय लगा हुआ है, इसी लिए शिथिलता की जाना अकल्याणकारी है।

जो व्यक्ति वीरों के समान विपत्ति से संघर्ष करने को तत्पर रहता है उसे विजय-लक्ष्मी सदा ही प्रसन्न होकर वरती है।

परन्तु जो व्यक्ति विपत्ति को देख कर डर जाता है और हाथ-पाँव शिथिल कर देता है अर्थात् प्रयत्न बन्द कर देता है वह पृथ्वी पर अपमानित होकर शीघ्र ही मृत्यु का ग्रास बनता है अर्थात मृत्यु को प्राप्त करता है।

कब कहाँ ... ... ब्रजेश को ॥४७-४६॥

शब्दार्थ—विधेय=कर्त्तव्य। सहस=सहस्र। निंद्य=निन्दनीय।

भावार्थ—(अब तुम्हीं बताओ) जीवन में संघर्ष कहाँ नहीं है? अतः जब कोई विपत्ति आ जाए तो मनुष्य को धैर्य के साथ उससे मुक्त होने के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

इस समय जो अच्छा फल प्राप्त होने वाला है, उसे थोड़ा नही समझना चाहिए। इस महान विपत्ति में यदि हजार में से सौ भी शेष बच जायें तो पर्याप्त हैं।

इस अत्यन्त भयंकर संकट के समय राजा नन्द को सहायक मान कर उठ पड़ो, यह निन्दनीय मूर्खता त्याग दो तथा सब मिल कर प्रयत्न करो।

पृष्ठ १६१—सुन ... ... अंक में ॥५०-५२॥

शब्दार्थ—प्रबोधित हो=समझ कर।

भावार्थ—कृष्ण का उत्साहपूर्ण सुन्दर भाषण सुन कर जन-समुदाय ठीक से समझ गया। उत्साह का मंत्र पढ़ कर जन मण्डली अपने घर गई और वे सब पर्वत की ओर जाने की तैयारी में लग गए।

बहुत से चुने हुए दृढ़, वीर, अत्यन्त साहसी तथा शक्तिशाली ग्वालों को साथ लेकर कृष्ण भी उपयुक्त स्थान में सब की उचित सहायता करने लगे।

बाढ़ से जो छोटे-बड़े बहुत ऊंचे मार्ग बन गए थे, सब उन्हीं पर अत्यन्त सावधानी से होते हुए पर्वत की गोद में पहुंच रहे थे।

यदि ब्रजाधिप ... ... यत्न वे ॥५३-५५॥

शब्दार्थ—गहते=पकड़ लेते। उदक=जल। अकिंचन=निर्धन। रुज-ग्रस्त=रोगी। सु-गह्वर=सुन्दर-गुफा।

भावार्थ—राजा नन्द के लाडिले कृष्ण कभी किसी गिरते का हाथ पकड़ लेते (और उसे बचा लेते) तो कभी जल में घुस कर किसी डूबते को बाहर निकाल लेते।

वे ग्राम के उस भाग में पहुंचे जहाँ प्राय: निर्धन लोग रहते थे। कृष्ण ने उन्हें हर प्रकार की सुख-सुविधा पूर्वक पर्वत की गोद में पहुंचा दिया।

अत्यन्त बूढ़ों, असमर्थों, दु:खियों, विधवाओं तथा रोगियों को वे उनका सहारा बन कर प्रयत्नपूर्वक पर्वत की सुन्दर गुफाओं में पहुंचा रहे थे।

पृष्ठ १६२—यदि दिखा ... ... गिरीन्द्र से ५६-५८॥

शब्दार्थ—ठौर=स्थान। गिरीन्द्र=पर्वतराज, गोवर्धन।

भावार्थ—यदि कृष्ण को कुछ लोग गलत मार्ग पर पहुंच कर कष्ट भोगते दिखाई पड़ते तो वे तत्काल उस स्थान पर जा कर ठीक मार्ग बता देते थे।

मार्ग की कठिनाइयाँ, अन्धकार की गहनता, बिजली का गिरना, आँधी की भयंकरता, ये सब एकत्र हो गए थे इसलिए मार्ग में अनेक दुर्घटनाएँ हुई।

परन्तु कृष्ण के अतीव साहस तथा उचित प्रबन्ध से एक भी व्यक्ति जल में डूब कर नहीं मरा तथा कोई भी पर्वत से गिर कर मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ।

फलद ... ... विपत्ति का ॥५९-६१॥

शब्दार्थ—क्षणप्रभा—बिजली। वपु=शरीर। शर=बाण। ओक=स्थान।

भावार्थ—(घना अन्धकार था तथा) बिजली ही नेत्रों के लिए केवल मात्र सफल सहारा था। इसके बावजूद कृष्ण को प्रत्येक कार्य में सफलता मिली।

उनके शरीर के वस्त्र पूर्णतया भीग गये थे। उनके सिर पर पानी पड़ रहा था तथा वायु अत्यन्त प्रचण्ड प्रतीत हो रही थी फिर भी ब्रज-वल्लभ कृष्ण रुक नहीं रहे थे।

वे विपत्ति से घिरे व्याकुल लोगों के मध्य तीर की तरह शीघ्रता से जा पहुंचते थे। वे तत्काल ही महान वीर के अनुरूप उस विपत्ति को समाप्त कर देते।

पृष्ठ १६३—लख अलौकिक ... ... को ॥६२-६४॥

शब्दार्थ—शतशः=सैंकड़ों। प्रमाद=अहंकार। प्रभेद=अन्तर। क्लान्ति=थकावट।

भावार्थ—कृष्ण की अनुपम स्फूर्ति तथा चतुरता देख कर ग्वालों का समूह आश्चर्य-चकित हो गया था। प्रायः ऐसा प्रतीत होने लगता था मानों श्रीकृष्ण के सैंकड़ों रूप हो गये हों।

थोड़े ही समय में कमल-नयन कृष्ण ने नगर व ग्राम को धन-धान्य, व गौओं के साथ कुशलपूर्वक पर्वत के अन्दर बसा दिया इस प्रकार वायु आदि के अहंकार को कम कर दिया।

प्रकृति छः-सात दिनों तक क्रुद्ध रही। उसकी भयंकरता में बिल्कुल भी अन्तर नहीं आया। किन्तु कृष्ण सदैव ही प्रयत्नशील रहे और उन्हें थोड़ी भी थकावट महसूस नहीं हुई।

प्रति-दरी ... ... श्याम ने ॥६५-६७॥

शब्दार्थ—दरी=गुफा।

भावार्थ—पर्वत की सब गुफाएं व कन्दराएँ, जिनमें ब्रजवासी निवास कर रहे थे कृष्ण के श्रेष्ठ प्रबन्ध व अनेक प्रयत्नों के कारण पूर्णतया सुरक्षित थीं।

सब लोगों ने उन्हें सदा घूमते ही देखा। उनकी रात्रि भी ब्रज-वासियों की रक्षा करने के प्रयत्नों में व्यतीत हो जाती थी।

पर्वतराज गोवर्धन पर सर्वत्र राजा नन्द के पुत्र कृष्ण को देख कर सम्पूर्ण लोग कहने लगे कि कृष्ण ने पर्वत को उंगली पर उठा लिया।

पृष्ठ १६४—जब व्यतीत ... ... भूमि की ॥६८-७०॥

शब्दार्थ—विलपे=विलाप करे।

भावार्थ—जब वे बुरे दिन व्यतीत हो गये, पवनादि का क्रोध भी शान्त हो गया तो व्रजभूमि पुनः बस गयी तथा कृष्ण का यश सर्वत्र फैल गया।

हे ऊधव ! व्रजभूमि का प्राणों जैसा प्रिय तथा अत्यन्त साहसी कृष्ण अब हमारे नेत्रों से दूर है। (अब तुम्हीं बताओ) व्रजवासी उसके लिए विलाप क्यों न करें ?

मुझ में अब कुछ और कहने की शक्ति नहीं है अतः मैं नम्रतापूर्वक दया-याचना करता हूं कि कृष्ण आ कर व्रजभूमि की दुःखपूर्ण अवस्था अपने नेत्रों से देखें।

सलिल ... ... गोप यों ॥७१-७२॥

शब्दार्थ—यूथ=समूह। स्वकीय=अपनी।

भावार्थ—कृष्ण ने दया करके जिस भूमि की वर्षा के पानी की बाढ़ से रक्षा की थी, हाय ! आज वही व्रजभूमि नेत्रों के अश्रु-प्रवाह के जल में डूब गई है।

अपने अति प्यारे वर्णन को जैसे ही इस गोप-समूह ने समाप्त किया, उसी समय एक अन्य ग्वाला अपनी कथा ऊधव को इस प्रकार सुनाने लगा—

अलंकार—७१वें छन्द में अतिशयोक्ति।

पृष्ठ १६५—बातें ... ... कार्य्यकारी ॥७३-७४॥

शब्दार्थ—मुखाब्ज=मुख कमल। भवदीय=आपका।

भावार्थ आपके मुख कमल से जो अत्यन्त मृदु, अतीव मनोहारी, अनेक सुन्दर रहस्यों से परिपूर्ण तथा अनुपम बातें निकलती हैं वे सुख प्राप्त करने की इच्छा वाले व्यक्तियों के लिए ठीक हैं।

गोकुल के व्याकुल निवासियों का यह सौभाग्य ही है कि आपके चरण-कमल यहाँ आये परन्तु यह हमारे भाग्य का ही दोष है कि आपके लाभदायक वचनों का पर्याप्त प्रभाव नहीं पड़ रहा।

प्राय: ... ... रमा है ।।७५-७६।।

शब्दार्थ—रसना=जिह्वा। अघाती=संतुष्ट होती।

भावार्थ—आपके हृदय में प्रायः यह विचार उठता होगा कि यह ब्रजवासी मेरे हितकारी वचनों को क्यों नहीं सुनते ? इस उपेक्षा का कोई विशेष कारण न हो कर केवल इतना ही है कि हमें तो मेघ शरीर वाले कृष्ण का ही ध्यान रहता है (इसलिए अन्य बातों का प्रभाव नहीं पड़ता)।

हमारे नेत्र कृष्ण की अनुपम छटा को पुनः देखना चाहते हैं। हमारे कान प्रिय कृष्ण का यशोगान सुनना चाहते हैं। हमारी जिह्वा उनके सुगुणों का गायन करते-करते संतुष्ट नहीं होती। हमारे तो रोम-रोम में कृष्ण ही वास करते है।

जो हैं ... ... काल के हैं ।।७७-७८।।

शब्दार्थ—प्रवंचित=वंचित। नृ-रत्न=श्रेष्ठ पुरुष।

भावार्थ—हमारे नेत्र कृष्ण के दर्शनों से वंचित हो गए हैं तो कान उनके मधुर वचनों से इसलिए अब हमारी जिह्वा ही उनके सुगुणों का गान करती है। यही कारण है कि ब्रजवासी मस्त होकर कृष्ण के गुण गाते हुए अपने दिन बिताते हैं।

इस विश्व में समय-समय पर ऐसे महापुरुषों ने जन्म लिया है, जिन की यह पृथ्वी अति कृतज्ञ है। कृष्ण के सम्पूर्ण अलौकिक गुणों से यह प्रतीत होता है कि इस युग के वास्तविक महापुरुष कृष्ण ही हैं।

पृष्ठ १६६—जो कार्य ... ... दिनों में ।।७९-८०।।

शब्दार्थ - द्विदश=बारह। वत्सर=वर्ष।

भावार्थ—जो कार्य श्रीकृष्ण ने करके दिखाए हैं वे कार्य दूसरा कोई भी व्यक्ति नहीं कर सकता था। वे कार्य कितने कठिन थे और उनकी आयु केवल बारह वर्ष! हे ऊधव! (इस छोटी अवस्था में उन्होंने ये कार्य किए हैं) तो कृष्ण महापुरुष क्यों नहीं होंगे?

कृष्ण बहुत ही मधुर बातें किया करते थे। वे छोटे-बड़े सभी का भला चाहते थे। वे सब से अत्यधिक प्रेमपूर्वक मिलते थे। वे अत्यन्त कष्ट-प्रद दिनों में हमारे सहायक थे।

वे थे विनम्र ... ... बनाते ॥८१-८२॥

शब्दार्थ - शिष्टता= सभ्यता।

भावार्थ - वे अपने से बड़ों से नम्रतापूर्वक मिलते थे और अत्यन्त सभ्य ढंग से वार्तालाप करते थे। आपस में विरोध उत्पन्न करने वाली बातें उन्हें प्रिय नहीं थीं। वे कभी भूल कर भी अप्रसन्न नहीं होते थे।

वे बालकों से बहुत प्रेम-पूर्वक मिलते थे तथा आनन्द प्रदान करने वाले सम्पूर्ण खेल खेलते थे। वे उनको अनेक अनुपम फल-फूल खिला कर सदैव प्रसन्न करते थे।

जो देखते ... ... व्यथा थी ॥८३-८४॥

शब्दार्थ—तिरस्कृत=लज्जित। उपेक्षा=निरादर।

भावार्थ—यदि कृष्ण कहीं व्यर्थ वाद-विवाद या क्लेश होता देखते तो उसको सदैव शान्त करते थे। यदि कोई शक्तिशाली व्यक्ति किसी निर्बल को सताता था तो वे उसका तिरस्कार करते थे।

यदि वे किसी को अपना कार्य प्रेमपूर्वक करते देखते तो बड़े प्रसन्न होते थे। इसी प्रकार यदि कोई किसी विशेष पदाधिकारी की अवहेलना करता था तो उनके हृदय को बहुत कष्ट होता था।

पृष्ठ १९७—माता-पिता ... ... कृपा से ॥८५-८६॥

शब्दार्थ—निरादृत=अपमानित। मद=अभिमान। विमोचन=नष्ट।

भावार्थ—यदि वे कहीं माता-पिता, गुरुजनों तथा अवस्था में बड़ों को अपमानित होता देखते थे तो वे बहुत दुःखी हो कर प्रायः छोटों और पुत्रों को शिक्षा सहित बहुत उपदेश देते थे।

वे राज-पुत्र थे तब भी उन्हें गर्व बिल्कुल नहीं था। वे प्रायः निर्धनों के घर जाया करते थे। वे मधुर बातें कह कर उनका दुःख पूछा करते थे और अपनी कृपा-दृष्टि से उनका दुःख नष्ट करते थे।

रोगी ... ... भरोसा ॥८७-८८॥

शब्दार्थ—निकेत=घर।

भावार्थ—वे सदा अपने हाथों से रोगियों, दुःखियों तथा विपत्ति-ग्रस्त लोगों की सेवा करते थे। मैंने ब्रज में एक भी ऐसा घर नहीं देखा जहाँ कोई दुःखी हो परन्तु वे नहीं हों।

संतानहीन व्यक्ति ब्रजवल्लभ कृष्ण को पाकर स्वयं को सन्तानवान समझते थे। संतानवान व्यक्ति भी अपनी संतानों से अधिक भरोसा कृष्ण का ही करता था अर्थात् वे संतानवान तथा संतानहीन सब को समान रूप से प्रिय थे।

जो थे ... ... लोक-सेवा ॥८९-९०॥

शब्दार्थ—भूत-हित=परोपकार।

भावार्थ—यदि कृष्ण किसी घर में जाते तो लोग उन्हें अपने पुत्रों से अधिक सम्मान देते थे। वे जनता द्वारा सदैव पूजे गए पर इसका कारण उनका राज-पुत्र होना नहीं बल्कि उनके अच्छे कार्य थे।

मनुष्य पृथ्वी पर राज्य-अधिकार अथवा धन-ऐश्वर्य के कारण बहुत सम्मान प्राप्त करता है परन्तु वह विश्व में निःस्वार्थ परोपकार तथा जन-सेवा से ही पूजा जाता है।

पृष्ठ १६८—थोड़ी ... ... सर्वदा है ॥९१-९२

शब्दार्थ—यदपि=यद्यपि। वर-बोध=श्रेष्ठ ज्ञान। निसर्ग=प्रकृति।

भावार्थ – यद्यपि कृष्ण की आयु अभी बहुत थोड़ी है तदपि वे अच्छे कार्यों में निरन्तर लगे हुए हैं। स्वभाव से ही उनका ऐसा श्रेष्ठ-ज्ञान देख कर यह स्वयमेव सिद्ध हो जाता है कि वह कोई महान् आत्मा हैं।

विद्या, अच्छी संगति तथा सम्पूर्ण सुन्दर नीतियों की शिक्षा– ये सब तो मनुष्य के केवल विकास के लिए उत्तरदायी हैं। भला या बुरा, अलौकिक या अशुभ स्वभाव तो पृथ्वी पर मनुष्य को सदा प्रकृति के हाथों से ही मिलता है अर्थात् शिक्षा आदि से स्वभाव में परिवर्त्तन नहीं लाया जा सकता।

ऐसे ... ... बाधा ॥६३-६४॥

शब्दार्थ—मतिमान=ज्ञानी। निरस्त=हार कर।

भावार्थ—इतने बुद्धिमान, ज्ञानी व दयावान कृष्ण भी आज मथुरा छोड़ घर नहीं आए, इसका अर्थ यह नहीं है कि वे ब्रजभूमि को भूल गए हैं बल्कि इसका भी कोई अत्यन्त गभीर कारण है।

इस पृथ्वी पर अनेक महान व्यक्ति प्रायः राजनीति से हार कर अथवा लोक-कल्याण में बाधा पड़ते देख कर अपने हृदय की उचित इच्छाओं को पूर्ण नहीं कर सके।

जी में ... ... बढ़ावें ॥६५-६६॥

शब्दार्थ—सु-युक्ति=उचित उपाय। द्युति=ज्योति। विमूढ़=मूर्ख।

भावार्थ यह सब सोच-समझ कर मैं मूर्ख सा हो जाता हूं। मुझे नहीं सूझता कि मैं क्या कहूं? परन्तु मैं आशा सहित एक विनती करता हूं कि वे ब्रज के कल्याण के लिए सुन्दर उपाय करें। (ब्रज का कल्याण अर्थ श्रीकृष्ण-दर्शन ही है)।

मेरे शरीर का रोम-रोम यही कह रहा है कि कृष्ण आ जायें तथा आकर अपने मनोरम, शोभाशाली मुख का दर्शन करायें। वे अपने प्रकाश द्वारा हमारे हृदय का निराशा रूपी अंधकार दूर कर दें। हमारे प्रकाशहीन नेत्रों की ज्योति में वृद्धि करें।

पृष्ठ १६६—तो भी ... ... प्राणियों का। ६७-६८॥

शब्दार्थ—कु-प्रपंच = षडयन्त्र । अश्रेय = बुरा ।

भावार्थ—इस पर भी मैं हृदय से यही कामना करता हू तथा मेरे रोम-कूपों तक से यही शब्द निकलता है कि यदि उन्हें किसी प्रकार के षड्यन्त्र की आशंका हो तो कृष्ण ब्रज में बिल्कुल न आयें ।

(आप ही सोचिये) कौन ऐसा होगा जो अपने सुख की चिन्ताओं में कृष्ण के मुख की ओर ध्यान नहीं देखा ? जो कृष्ण ब्रजवासियों को अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है उसका अशुभ कोई कैसे चाह सकेगा ?

यों सर्व ... ... व्यथितों का ॥९९-१००॥

शब्दार्थ वृत्त = वर्णन । वदन = मुख । अ-विमुक्त-वांछा = दृढ़ इच्छा । खर = तीव्र ।

भावार्थ—इस प्रकार सब वर्णन करके तथा बहुत उदास होकर अहीर ने ऊधव का मुख देखा । उसकी तीखी दृष्टि से बेचैनी, दृढ़ता तथा अटल कामना उत्पन्न हो रही थी ।

उस अहीर की अवस्था देख कर तथा अन्य ग्वालों को बहुत उदास पा कर ऊधव ने अत्यन्त मृदु, शान्तिदायक तथा विचारपूर्ण उपदेश दिया । जिससे विरहाग्नि में जलते लोगों का साहस बढ़े ।

तदुपरान्त ... ... पंथ में ॥१०१॥

शब्दार्थ--विबुध = बुद्धिमान । पुंगव = श्रेष्ठ ।

भावार्थ इसके पश्चात् सब लोग श्रीकृष्ण के गुणों का वर्णन करते हुए अपने-अपने घरों को चले गये । मार्ग में उन्होंने विद्वानों में श्रेष्ठ ऊधव को अपनी बातों से अनेक बार मुग्ध किया ।

त्रयोदश सर्ग

पृष्ठ ७०—विशाल ... ... वस्त्र का ॥१-१॥

शब्दार्थ - राजि = समूह । सित = श्वेत । हरिताभ = हरे रंग का ।

भावार्थ—विस्तृत वृन्दावन की सुन्दर गोद में एक अत्यन्त उपजाऊ

भू-खंड था। वह अत्यधिक रमणीक, हरी-भरी घास से आच्छादित, तथा प्राणिमात्र के नेत्रों को आनन्दित करने वाला था।

कहीं पर खिले हुए फूल उसे रमणीक बना रहे थे। सुन्दर घास-समूह की हरियाली में श्वेत व लाल पुष्पों की शोभा बहुत सुन्दर प्रतीत होती थी।

उसकी (हरी-भरी घास की) उत्तम छवि देख कर हृदय में आनन्द सहित यही सुन्दर कल्पना होती थी कि वन के मध्य में किसी अनोखे वस्त्र का हरा बिछौना बिछा हुआ है।

स-चारुता ... ... मत्स्य थे ॥४-६॥

शब्दार्थ— भूरि-रंजिता = अत्यन्त रंगीन। सुधा-समादिता = अमृत-युक्त। मत्स्य = मछली। विलोकनीया = दर्शनीय।

भावार्थ—अथवा हरियाली सौन्दर्य के साथ सफेदी तथा लालिमा की गरिमा से अत्यन्त रंगीन हो कर अपनी अनुपमता के विकास के लिए शोभायमान है।

इस सुन्दर भूमि में स्थान-स्थान पर हरे-भरे दर्शनीय वृक्ष थे। इन वृक्षों के सुन्दर पत्तों की अनुपम छाया हरियाली को और भी गहरी बना देती थी।

कहीं कहीं पर निर्मल जल भरा हुआ था। वह अमृतयुक्त संतों के हृदय के समान स्वच्छ था। उसके भीतर अनेक पक्षी मछलियों के साथ विचित्र क्रीड़ाएँ कर रहे थे।

पृष्ठ १७१—इसी धरा ... ... मुकुन्द का ७-६॥

शब्दार्थ—वृक्ष = बैल। पीवरता = मोटापन। विषाण = वाद्य यन्त्र।

भावार्थ—इसी भूमि पर अनेक गायें अपने बछड़ों सहित सानन्द चर रही थीं। अनेक गायें बड़ के वृक्ष के नीचे बैठ कर धीरे-धीरे जुगाली कर रही थीं।

बैल मस्त हो कर इधर-उधर घूम रहे थे और गर्व से गंभीर शब्द उत्पन्न कर रहे थे। वे अपने शरीर की हृष्टता-पुष्टता से गायों के समूह को मोहित कर रहे थे।

सैकड़ों कुशल ग्वाले गौ आदि पशुओं की रक्षा में लगे हुए थे। अनेक ग्वाले वाद्ययन्त्र बजा-बजाकर कृष्ण का गुणगान कर रहे थे।

कई अनूठे ... ... की कथा ॥१०-१२॥

शब्दार्थ — माधव-वृत्त=कृष्ण का वृत्तान्त।

भावार्थ —कई ग्वाले अनुपम फल तोड़-तोड़ कर खा रहे थे और इस प्रकार अपनी जिह्वा को आनन्दित कर रहे थे। कुछ दूसरे गोप सुन्दर वृक्ष के नीचे बैठ कर अपने बन्धुओं से आमोद-प्रमोद कर रहे थे।

इसी समय वनों और कुंजों को देखते हुए कृष्ण भ्राता-ऊधव भी वहाँ पहुंचे। उनको आता हुआ देख कर ग्वाल-मंडली अत्यन्त प्रसन्नचित्त हो गई।

उन्हें बड़े सम्मान से बैठा कर सभी ग्वाले कृष्ण का वृत्तान्त पूछने लगे। अत्यधिक ज्ञानी ऊधव भी प्रसन्न होकर कृष्ण की कथा सुनाने लगे।

पृष्ठ १७२—मुकुन्द ... ... देवकांगजा ॥१३-१५॥

शब्दार्थ लोक-ललाम=संसार में श्रेष्ठ। देवकांगजा=देवकी।

भावार्थ—पहले सब ने कृष्ण की श्रेष्ठ कीर्ति को मुग्ध होकर सुना। तत्पश्चात् अत्यन्त व्यग्र हो कर एक गोप ने कष्टपूर्वक ऊधव से कहा--

कृष्ण चाहें वसुदेव के पुत्र हों अथवा राजा नन्द के। परन्तु हम सम्पूर्ण ग्वाले उनके हाथ बिक चुके हैं। कृष्ण हमारे हृदय और प्राणों में बसे हुए हैं।

ब्रजवासी तो यही जानते हैं कि यशोदा ने ही कृष्ण को जन्म दिया है। परन्तु यदि कृष्ण की वास्तविक माता देवकी भी हों तब भी कृष्ण ही ब्रजभूमि के प्राण हैं।

मुकुन्द ... ... बंधु के ॥१६-१८॥

शब्दार्थ—वरंच=वरन्। विषादिता=दुःख।

भावार्थ—श्रीकृष्ण चाहे यदुवंश के बन जायें अथवा वे सदैव गोपवंश के बने रहें परन्तु वे ब्रजभूमि को भूल नहीं सकेंगे और न ही ब्रजभूमि उन्हें भूल पायेगी।

वरन् उनके अपूर्व गुण यह सिद्ध कर रहे हैं कि तत्त्वों (जल, वायु आदि) के समान कृष्ण पर किसी एक व्यक्ति का नहीं बल्कि मानव-मात्र का समान अधिकार है।

ब्रजवासी कृष्ण का मुख रूपी चन्द्रमा देखे विना अवश्य बहुत दुःखी हैं परन्तु वे कृष्ण के न लौटने से अधिक दुःखी हैं।

पृष्ठ १७३—दयालुता ... ... कंज क्यों ॥१६-२१॥

शब्दार्थ—द्वि-दंड=दो घड़ी। महापावक=भयंकर अग्नि। लोकोत्तर=अलौकिक। बलीयसी=बलवान्। लिपि=लेख। तुहिनाभिभूत=पाले से नष्ट।

भावार्थ—श्रीकृष्ण दयालुता, सज्जनता तथा शिष्टता की साक्षात् प्रतिमा हैं अतः यदि व्यर्थ का षड्यन्त्र नहीं फैलाया जाता तो वे मथुरा में दो घड़ी भी नहीं ठहरते।

उन गुप्त राजनीतियों का बुरा हो तथा षड्यन्त्र भयंकर अग्नि में जल कर समाप्त हों जिन्हें श्रीकृष्ण जैसे अलौकिक पुरुष भी अपनी चतुरता से नहीं रोक सके।

भाग्य की विडम्बना बड़ी शक्तिशाली है तथा भाग्य का लेख अमिट है। अन्यथा सूर्य का मित्र कमल क्यों पाले से नष्ट होता।

अलंकार—२१वें पद में दृष्टान्त।

विभूतिशाली ... ... वृन्द को ॥२२-२४॥

शब्दार्थ—नरत्व=पुरुषत्व। समुच्चता=महानता।

भावार्थ—वैभव सम्पन्न ब्रज में कृष्ण बारह वर्षों तक रहे। इससे ब्रजभूमि का गौरव बढ़ गया तथा गोपवंश के सम्मान में वृद्धि हुई।

श्रीकृष्ण का चरित्र इतना रहस्यपूर्ण है कि हमारी बुद्धि उसमें प्रवेश नहीं कर पाती अर्थात् कृष्ण का चरित्र हमारी समझ से परे है। अलौकिक प्रकाश से युक्त कृष्ण के गुण सदैव मन को मोहित करते हैं।

उन्होंने पुरुषत्व का अनुपम आदर्श दिखा कर पशुओं को मनुष्य बना दिया अर्थात् हम पशु समान थे, कृष्ण ने हमें मनुष्य बनाया। कृष्ण ने गोप-मंडली को हृदय की महानता सिखा कर सभ्य मानव बना दिया।

पृष्ठ १७४—मुकुन्द ... ... पै खड़े ॥२५-२७॥

शब्दार्थ—कानन=वन। हिंस्रक=घातक।

भावार्थ—कृष्ण राजा नन्द के पुत्र थे अतः गऊ चराना उनका काम नहीं था। जिस राजा के सैकड़ों सेवक थे, वहाँ कृष्ण को, राजपुत्र को कौन वन भेजता ?

परन्तु कृष्ण असीम ज्ञान-प्राप्ति के लिए आनन्द सहित स्वयं वन में आते थे। इसके अतिरिक्त वन को घातक पशुओं से रहित देखने की उन्हें प्रबल उत्कंठा थी।

कृष्ण जब वन में आते थे तो प्रसन्नतापूर्वक घूमते-फिरते थे। वे यमुना के सुन्दर किनारे पर खड़े होकर जल की सुन्दर क्रीडाएँ देखते थे।

स-मोद ... ... वेणु वे ॥२८-३०॥

शब्दार्थ—सानु=शिखर। वीथिका=पगडंडी। दूलिता=हिलती-डुलती।

भावार्थ—श्रीकृष्ण कभी तो पर्वत के शिखर पर बैठ कर आनन्द-सहित अनेक सुन्दर दृश्य देखते थे तो कभी वे बड़ी उत्कटा से झरने के गिरते हुए पानी की शोभा देखते थे।

सुन्दर कुंजों में बनी पगडंडियों में वे धीरे-धीरे आनन्द से घूमते थे। वे मुग्ध होकर पुष्पों से लदी वे लताएँ, जो मधुर वायु से हिलती-डुलती होती थीं, देखते थे।

कृष्ण यमुना के निर्मल व सुन्दर जल में अपने बन्धु-बान्धवों के साथ तैरते थे। कभी-कभी वे कदम्ब की शाखा पर बैठ कर मस्त हो, अपनी सुन्दर मुरली बजाया करते थे।

पृष्ठ १७५—वनस्थली ... ... के लिए ॥३१-३३॥

शब्दार्थ—उद्भवा=उत्पन्न। परिज्ञात=जानी हुई। संधान=खोज। दूर्वा=दूब घास। खर=तीक्ष्ण।

भावार्थ— कृष्ण ने अपनी खोजपूर्ण सद्बुद्धि से वन की उपजाऊ भूमि में उत्पन्न अनेक लाभदायक जड़ी-बूटियाँ मालूम कर ली थीं।

वे उस वन भूमि में यदि किसी व्यक्ति को जड़ी-बूटियों की परीक्षा करते हुए देखते थे, तो उससे जड़ी-बूटी के सम्पूर्ण रहस्यों को जान लेते थे।

वे अपने ज्ञान में वृद्धि के लिए नई-नई घास, फल, पुष्प तथा जड़ ही नहीं, बल्कि छोटी-छोटी सी वस्तु भी बड़ी तीव्र दृष्टि से देखते थे।

तृणाति ... ... युक्ति से ॥३४-३६॥

शब्दार्थ—निविष्ट=लगाए हुए। वीर्य=पराक्रम।

भावार्थ—कभी उन्हें अत्यन्त एकाग्र मन से तिनकों जैसे साधारण वस्तुओं को देखते हुए यदि गोप-मंडल ऊब जाता तो कृष्ण उन्हे इस प्रकार बताते थे—

विश्व में एक पत्ता भी रहस्यों से रहित नहीं है। एक भी तिनका व्यर्थ नहीं बना है। आप सब अपने विचारों तथा दृष्टि को संकुचित मत बनाइये क्योंकि धलि का एक कण भी व्यर्थ नहीं है।

वन में यदि वे कोई भयंकर हिंस्रक पशु देखते तो अपने पराक्रम, साहस व उपाय से अवसर पाते ही उसे मार डालते।

पृष्ठ १७६—यहीं बड़ा ... ... तुल्य था ॥३७-३९॥

शब्दार्थ—व्याल=सर्प। मति-लोप-कारिणी=बुद्धि नष्ट करने वाली। स्तूप-तुल्य=खम्भे के समान।

भावार्थ—यहीं एक अत्यन्त भयंकर सर्प रहता था। वह भीषण मृत्यु की साक्षात् प्रतिमा था। उसके काले व भयंकर शरीर को देख कर बुद्धि नष्ट हो जाती थी।

जब कभी वह सर्प मार्ग में टेढ़ा होकर, अपने शरीर को कंपाता हुआ तीव्र गति से चलता था तो वनभूमि में उस समय भय का अत्यन्त भीषण स्वरूप छा जाता था।

जब वह सर्प अपने शरीर को एकत्र करके, फन उठा कर बैठता था तो उस समय वह दूर से ही खम्भे के समान दृष्टिगोचर होता था।

अलंकार—३७वें तथा ३९वें में उपमा ।

विलोल ... ... केशरी ।।४०-४२।।

शब्दार्थ—निपात=पतित । प्रलम्ब=लम्बा । आतंक-प्रसू=भय उत्पन्न करने वाला । आरवितम=लाल । वराह=सुअर । केशरी=सिंह ।

भावार्थ—जिस समय कुपित होकर वह सर्प अपने मुख से चंचल जीभ को बार-बार निकालता था तब सभी जीवों के प्राण भय के गढ़े में गिर जाते थे अर्थात् सभी जीव अत्यन्त भयभीत होते थे ।

वह सर्प लम्बा, भय को उत्पन्न करने वाला, उपद्रव मचाने वाला, अत्यन्त, मोटा, यम के दण्ड के समान विशाल, भयंकर, लाल नेत्रों वाला तथा विषभरी फुत्कार का भंडार था ।

उसको देख कर (जंगली) सुअर का श्रेष्ठ पराक्रम भी नष्ट हो जाता था । विशाल, बलवान् तथा वज्र के समान शक्तिशाली सिंह उस सर्प को देख कर धैर्य खो बैठता और शक्तिहीन हो जाता था ।

अलंकार—४०वें पद में रूपक, ४१वे में उपमा, ४२वें मे रूपक ।

पृष्ठ १७७—असह्य ... ... वेग से ।।४३-४५।।

शब्दार्थ—उद्बन्धन=बन्धन गात्र=शरीर । कान्तार=घना जंगल । बुभुक्षा-वश=भूख के कारण ।

भावार्थ—वृक्ष-समूह को उसकी विषभरी तथा पत्तों को जला देने वाली श्वासें सदैव ही असहनीय होती थीं । सर्प के शरीर के कठोर बन्धन से अनेक शिलाखंड चूर-चूर हो जाते थे ।

अनेक कीड़े, पक्षी और मृगादि पशु प्रतिदिन पतंगों के समान उसकी विषाग्नि में जल मरते थे । अत्यन्त कुटिल आत्मा सर्प की क्रोधाग्नि बहुत भीषण व प्राणि-समूहों को नष्ट करने वाली थी ।

वह सर्प बहुधा सघन वन में पर्वत की एक गुफा में रहता था । परन्तु कभी-कभी वह भूख से पीड़ित होकर तीव्र गति से यहाँ आता था ।

विराजता ... ... हो गये ।।४६-४८।।

शब्दार्थ—दिवसेक=एक दिवस। इतस्ततः=इधर-उधर। विदूरिता=दूर। शश=खरगोश।

भावार्थ—सामने वह सुन्दर वृक्ष विराजमान है, जिसके पुष्प अत्यन्त सुन्दर हैं। एक दिन इसी वृक्ष के नीचे गोपमडल सहित कृष्ण प्रसन्नचित्त बैठे थे।

उस समय सूर्य आकाश में ऊंचा चढ़ गया था और वन को प्रकाशित कर रहा था। अनेक ग्वाले इधर-उधर घूम रहे थे। अगणित गायें आनन्द सहित चर रही थीं।

इसी अनुपम उपयुक्त समय में अत्यन्त आर्त्त-नाद से कृष्ण की शांति भंग हो गई और वे गोपमंडली सहित खरगोशों के समान सतर्क हो गए।

पृष्ठ १७८ विशाल ... ... मण्डली ॥४९-५१॥

शब्दार्थ—शृंग=शिखर। स्पर्द्धिनी=मुकाबला करने वाली।

भावार्थ - सामने जो विशाल बड़ का वृक्ष है, उसी की पर्वत के शिखर से स्पर्धा करने वाली अर्थात् बहुत ऊँची चोटी पर कृष्ण तत्काल ही तत्परता व सतर्कता से जा चढ़े।

उन्हें वहीं से काल के समान भयंकर वह सर्प दिखाई पड़ा। वह बड़ी दारुण क्रूरता से जीव जन्तुओं को नष्ट कर रहा था।

उसे देख कर अगणित जीव-जन्तु भय से वन में इधर-उधर भाग रहे थे। निकट के ग्वाले अपनी गौओं सहित बेसुध पृथ्वी पर पड़े थे।

स्व-लोचनों ... ... नन्द ने ॥५२-५४॥

शब्दार्थ— नन्द नृपाल नन्द=राजा नन्द के पुत्र।

भावार्थ—इस भयंकर घटना को अपने नेत्रों से देखते ही कृष्ण क्रोधित हो गए। वे तत्काल वृक्ष से नीचे उतरे। वे बड़ गर्व सहित तीव्र गति से दुष्ट सर्प की ओर दौड़े।

उसके निकट जा कर वे अपनी सुन्दर मुरली को अलौकिक ढंग से बजाने लगे। उस ध्वनि से सर्प मुग्ध होने लगा। बेसुध ग्वाले होश में आ गये।

राजा नन्द के पुत्र कृष्ण ने बार-बार अलौकिक वीणा के स्वर से मूर्ख साँप को वश में करके अपनी चतुरता तथा श्रेष्ठ अस्त्र-शस्त्रों की सहायता से मार गिराया।

अलंकार—'नन्द' शब्द में यमक।

पृष्ठ १७६—विचित्र ... ... सर्प का ॥४५-४७॥

शब्दार्थ - अशंक=निर्भय। अघ पनामी=अघासुर नाम वाले।

भावार्थ– कृष्ण में ऐसी अलौकिक शक्ति है तथा उनका ऐसा अनुपम प्रभाव है कि सदा बिल्कुल निर्जीव रहने वाला व्यक्ति भी सजीव हो उटता है अर्थात् निष्क्रिय व्यक्ति सक्रिय हो जाता है।

जो ग्वाले बेसुध होकर पृथ्वी पर पड़े थे उन्होंने सचेत होते ही सर्प को मृत्यु प्राप्त करता देख कर निर्भय हो कर कृष्ण की बहुत सहायता की।

कई मास तक उस सर्प का विशाल शरीर वन में पड़ा रहा। बाद में अघासुर नामक उस दुष्ट सर्प का चिह्न भी मिट गया।

बड़ा-बली ... ... वारणादि का ॥५८-६०॥

शब्दार्थ– अपमृत्यु=बुरी मृत्यु। सुम=खुर। वपु=शरीर। वारणादि=हाथी आदि।

भावार्थ—वनभूमि में एक बहुत शक्तिशाली विशाल घोडा था। वह मृत्यु की साक्षात् प्रतिमा था। उसकी भीषणता से पशु समूह अत्यन्त कष्ट पाता था।

जब वह घोड़ा मस्त होकर भयंकरता से तीव्र गति से भागता था तो वनभूमि कम्पायमान हो उठती थी। सारी दिशाएं जोर से गूंज उटती थीं।

उसके शक्तिशाली खुरों के प्रहार से हजारों खरगोश आदि जीव नष्ट हो जाते थे। उस बलवान् घोड़े के पाँव के प्रहार से हाथी आदि के शरीर भी खडित हो जाते थे।

पृष्ठ १८०—बड़ा-बली ... ... भीत हो ॥६१-६३॥

शब्दार्थ—दंशनादि=काटना आदि। विपन्न=दुःखी।

भावार्थ—अत्यन्त शक्तिशाली, ऊँचे शरीर वाला बैल भी उसे देख कर दुःखी हो जाता था। गौओं का समूह उसके काटने आदि के अत्याचार से मुक्ति प्राप्त नहीं कर पाता था।

वीर, पराक्रमी व शक्तिशाली ग्वाले भी उस घोड़े का मुकाबला नहीं कर पाते थे। इसके विपरीत वे उसे देखते ही भय से आविभूत होकर कर्त्तव्यविमूढ हो जाते थे।

घोड़े की टापों का कठोर शब्द सुन कर सम्पूर्ण ग्वाले अत्यन्त भयभीत होकर व्याकुलता से तत्काल ही किसी वृक्ष की ऊँची शाखा पर चढ़ जाते थे।

मनुष्य ... . उठी ॥६४-६६॥

शब्दार्थ—रव=कोलाहल। अजस्र=निरन्तर।

भावार्थ कोई भी व्यक्ति उसके सामने आकर किसी भी तरह अपने प्राण नहीं बचा सकता था। उसकी प्रचंडता भयंकर थी। उसका कोलाहल बेसुध करने वाला था।

एक दिन कृष्ण ने एक बड़ा डंडा लेकर गर्वसहित उस घोड़े को घेर लिया। तत्पश्चात् निरन्तर प्रहार करके उसको आवश्यक मृत्यु प्रदान की अर्थात् मार दिया।

कृष्ण के ऐसे पराक्रम, निर्भयता, साहस तथा निपुणता को देख कर सम्पूर्ण ग्वाले मोहित हो गए। सारा जन-समुदाय आश्चर्यचकित हो गया।

पृष्ठ १८१—वनस्थली ... ... व्यक्ति था ॥६७-६९॥

शब्दार्थ कण्टक=काँटा। अकण्टका=बाधा रहित। बालिश=मूर्ख।

भावार्थ—उस वन में काँटों के समान दुःखदायी कई अन्य बहुत दुष्ट और बलवान पशु भी थे। कृष्ण ने अपनी चतुराई से उन्हें समाप्त कर के वनभूमि को कष्टरहित बना दिया।

उसी वन में एक व्योमासुर नामक बहुत बलवान और मूर्ख पशुपालक रहता था। वह दूसरे प्राणियों को सता कर बहुत आनन्दित होता था।

उसके छल-कपटों से व्रजप्रदेश के लोग विशेष रूप से छले जाते थे। वह दुष्ट व्यक्ति व्रज की पवित्र भूमि में आए दिन उपद्रव करता रहता था।

कभी ... ... समूह में ॥७०-७२॥

शब्दार्थ—बोरता=डुबोता। यष्ठि=लाठी। दुरात्मता=दुष्टता।

भावार्थ—कभी वह बैल, गाय और बछड़े चुरा लेता था तो कभी वह उन्हें जल में डुबो देता था और कभी अपनी भारी-लाठी के आघात से वह उनके अंगों को नष्ट कर देता था।

उसकी दुष्टता अत्यन्त भयंकर थी। व्यर्थ में ही कुंजों में आग लगा कर भोले-भाले गाय-बछड़ों के समूह को जलाने में उसे कभी कष्ट नहीं होता था।

वह वन में अनेक भोले-भाले ग्वालों को दुःख देता था। कभी तो वह उन्हें पर्वत की भयानक खोहों में डाल देता था।

पृष्ठ १८२—विदार ... ... दूषिता ॥७३-७५॥

शब्दार्थ—विदार=फाड़। कु-प्रवृत्ति=दुष्ट आदत।

भावार्थ—वह सिर पर चोट करके उसे फाड़ डालता या डरा कर आँखें फोड़ देता था। कभी राक्षस जैसी भीषणता दिखा कर किसी के अमूल्य प्राण ले लेता था।

ब्रजभूमि के देवता कृष्ण ने उसको सुधारने की इच्छा से अनेक प्रयत्न किये परन्तु न तो उसकी क्रूरता दूर हुई और न उसकी बुरी आदतें छूट सकीं।

पूर्व जन्म के पापों से दूषित मानव-आत्मा, अनेक प्रयत्नों से बहुत शिक्षा तथा उपदेश आदि से शुद्ध नहीं होती (अतः उसकी आदतें भी नहीं छूट सकीं)।

निपीड़िता ... ... पातकी ॥७६-८॥

शब्दार्थ—खलेन्द्र=दुष्टराज। वधूं=मार-डालूं। निंद्य=निन्दाजनक।

भावार्थ—उस दुष्टराज व्योमासुर के अत्याचारों से अपनी जन्म-भूमि को पीड़ित देख कर तथा एक बार उसे अपने निकट आता देख कर श्रीकृष्ण क्रुद्ध होकर इस प्रकार बोले—

तुझे सुधारने के मेरे सम्पूर्ण प्रयत्न निष्फल हो गये। तूने अपनी दुष्ट-आदतों को नहीं छोड़ा। अब सर्वश्रेष्ठ उपाय यही है कि मैं संसार के कल्याण की दृष्टि से तुझे मार डालूं।

यद्यपि हत्या करना अत्यन्त निन्दाजनक कार्य है तथापि मनुष्य का प्रमुख कर्त्तव्य यह है कि वह अपने घर को सर्प आदि जीवों से न भर जाने तथा पृथ्वी पर पापियों को न पनपने दे अर्थात् ऐसे व्यक्तियों तथा जीवों को मारना ही श्रेयस्कर है।

पृष्ठ १८३—मनुष्य ... ... विपन्न है ॥७९-८१॥

शब्दार्थ—पिपीलिका=चींटी। वध्य=मारने योग्य। अश्रेय हेतु=हानि-कारक। विप्लवी=विद्रोही। उत्सादक=नाशक।

भावार्थ—मनुष्य तो क्या एक चीटीं को भी मारना अनुचित है यदि उसने हानि नहीं पहुंचाई हो जब कि नीच कर्म करने वाले मनुष्य की हत्या भी पाप न होकर पुण्य कार्य है।

समाज को पीड़ित करने वाला, धर्म का विद्रोह करने वाला, अपनी जाति का शत्रु, महापापी, मानव-मात्र का शत्रु, संसार के प्राणि-समूहों को सताने वाला कभी भी क्षमा पाने के योग्य नहीं है अपितु वह मारे जाने के योग्य है।

शत्रु को क्षमा करना लाभकारी नहीं। समाज को नाश करने वाला दण्ड पाने योग्य है। बुरे कार्य करने वाले व्यक्ति को बचाने से शुभ कार्य करने वाले दुःखी हो जाते हैं।

अतः अरे ... ... किया ॥८२-८४॥

शब्दार्थ—पामर=नीच। आस्फालन=छलांग।

भावार्थ—हे नीच! इसलिए तू सावधान हो जा! तेरी मृत्यु तेरे निकट आ गई है। हे दुष्ट! आज तू अपनी रक्षा नहीं कर सकेगा। सम्भल जा! अब तेरी हत्या उचित व आवश्यक है।

कृष्ण की गर्व भरी बातें सुन कर पराक्रमी व्योमासुर अत्यन्त क्रुद्ध

हुआ उसने अपनी भारी लाठी उठाई और तत्काल ही कृष्ण पर प्रहार कर दिया।

कृष्ण ने अनुपम छलांग लगा कर वह लम्बी लाठी छीन ली। तत्पश्चात उसी लाठी से उपद्रवों के भंडार, व्योमासुर पर अत्यन्त जोर से आघात किया।

पृष्ठ १८४—गुणावली ... ... दायिनी ॥८५-८७॥

शब्दार्थ—गरीयसी=महान।

भावार्थ—श्रीकृष्ण अनेक गुणों के गौरव से विभूषित हैं। वे महान् गौरवशाली तथा यश की प्रतिमा हैं। उन गुणों का सात्त्विक भाव से गायन करने पर हृदय में अपार शान्ति होती है।

वन में, नगर में तथा ग्राम में अनेक ऐसे मनोरम स्थान हैं जहाँ पर कृष्ण ने मन को मंडित करने वाली अनुपम लीलाएँ बड़े आनन्द से की थीं।

उन्हीं स्थानों को जनता धीरे-धीरे व्रज के तीर्थ-स्थान बना रही है। उन स्थानों की धूलि कृष्ण के विरह में हृदय को बहुत शान्ति देने वाली है।

अपार ... ... को ॥८८॥

शब्दार्थ—वदनारविन्द=वदन+अरविन्द=मुखकमल।

भावार्थ—यदि एक बार ब्रज के लाडिले कृष्ण यहाँ और आयें तो हम पर उनका बड़ा उपकार होगा। कृष्ण के मुखकमल व नेत्रों को देख कर ब्रज के ग्वाले अत्यन्त प्रसन्न होंगे।

श्रीदामा ... ... ग्वाला ॥८९॥

शब्दार्थ—मेधावी=बुद्धिमान।

भावार्थ श्याम शरीर वाले कृष्ण का अत्यन्त प्रिय मित्र श्रीदामा था। वह ब्रज के सम्पूर्ण बालकों में अधिक बुद्धिमान व बड़ा था। जैसे ही उसने अपनी कहानी समाप्त की, उसी समय एक अन्य ग्वाला बहुत मोहित सा होकर मधुर स्वर में कहने लगा—

पृष्ठ १८ —विपुल ... ... होगा ॥९०-९१॥

शब्दार्थ—चारु आलाप=सुन्दर बातें।

भावार्थ अनेक सुन्दर क्रीडाओं के आश्रय, आनन्द के भंडार, सम्पूर्ण सुन्दर खेलों मे निपुण, अपने गले मे अनोखी वनमाला पहने, सौन्दर्य से विभूषित कृष्ण कब हर्षित होकर हम से मिलेंगे ?

हे ऊधव ! कृष्ण की मधुर व प्रिय मुरली इन पुष्पों से लदे कुंजों में कब बजेगी ? सुन्दर यमुना के किनारे पर वृन्दावन मे हृदय को प्रसन्न करने वाला सुन्दर वार्तालाप कब होगा ?

कब प्रिय ... ... कलायें ॥९२-९३॥

शब्दार्थ विहरेंगे=विहार करेंगे। छिप्रता=फूर्ति।

भावार्थ—हमारे प्रिय कृष्ण कब फिर आकर इन कुंजों में विहार करेंगे ? वे कब चुने हुए खेल खेलेंगे ? विभिन्न रसों में डूबी हुई भाव तथा सौन्दर्य से युक्त उनकी श्रेष्ठ मुख-मुद्रा कब हमारे नेत्रो मे निवास करेगी।

यदि कृष्ण छोटा सा खेल भी खेलते थे तो एक क्षण के लिए भी चित्त की एकाग्रता नहीं खोते थे अर्थात् वे लापरवाह नहीं थे। अद्वितीय माधुर्यपूर्ण स्फूर्ति की क्रीड़ाएं अन्य बालकों को सदैव ही आश्चर्यचकित किया करती थीं।

चकित कर ... ... शतों को ॥९४-९५॥

शब्दार्थ— मनोनीत=नियुक्त। क्रीड़ावान=खिलाड़ी।

भावार्थ—कृष्ण में आश्चर्यचकित करने वाली अलौकिक शक्तियाँ हैं, जिनके कारण वे सभी विषयों में दूसरो से श्रेष्ठ हो जाते हैं। अत्यन्त कठिन कलाओं में, तथा क्रीड़ादि में वे सदा प्रधान नियुक्त किए जाते थे।

सब से शक्तिशाली व चतुर खिलाड़ी भी अपने छल-कपट के द्वारा प्रिय कृष्ण को नहीं जीत पाता था। हमने ऐसे अनेक अवसर देखे हैं जब कृष्ण अकेले ही सैकड़ों से जीत जाते थे।

पृष्ठ १८६—तदपि ... ... द्वारा ॥९६-९७॥

शब्दार्थ—स-मुद=आनन्द से।

भावार्थ— फिर भी कृष्ण का स्वभाव बहुत सुन्दर है। दूसरे बालकों

को उत्साहित करने के लिए वह अपने जीते हुए खेलों में भी जानबूझ कर हार जाते और अपने प्रिय मित्रों को जिता देते थे।

बालकों को अत्यधिक भूखा देख कर वे तीव्रता से वृक्ष पर चढ़ जाते थे। अपने कमलरूपी हाथों से मीठे-मीठे फलों को तोड़ कर बड़े प्रयत्न से वह आनन्द-सहित उन्हें खिलाते थे।

सरस-फल ... ... मंडली को ॥९८-९९॥

शब्दार्थ—व्रज-रमण=व्रज में रमण करने वाले अर्थात् कृष्ण। पीन=मोटे।

भावार्थ—यशोदा अपने सेवकों द्वारा मीठे फल व अनोखे व्यंजन प्रतिदिन वन में भेजती थीं। व्रजरमण कृष्ण मीठी-मीठी बातें करके तथा ग्वालों को प्रेम से निकट बैठा कर वे व्यंजन खिलाते थे।

वे नई कोंपलों अथवा मोटे प्रिय पत्तों से अनेकों सुन्दर खिलौने बनाते थे। बाद में उन खिलौनों को बहुत सम्मानपूर्वक ग्वाल-मंडली में बाँट कर सब को आनन्दित करते थे।

अभिनव ... ... — हो के ॥१००-१०१॥

शब्दार्थ—अनुदिन=प्रतिदिन। मिष्टता=मधुरता। समासीन=बैठ कर।

भावार्थ—सुन्दर कलियों, पुष्पों तथा कमलों से वे अपूर्व मालाएँ तथा सुन्दर आभूषण बनाते थे। तत्पश्चात् स्वयं अपने हाथों से उन्हें (आभूषणों आदि को) बालकों को पहनाते थे। इस प्रकार वे मित्र-समुदाय को बहुत आनन्द पहुँचाते थे।

प्रतिदिन वे बड़े माधुर्य तथा सुन्दरता से देवताओं व राक्षसों की विभिन्न कथाएं सुनाते थे। वे वृक्ष की सुखकारी छाया में बैठ कर, हँस-हँस कर अपूर्व बातें करते थे।

पृष्ठ १८७ व्रज-धन ... ... बैठने थे ॥१०२-१०३॥

शब्दार्थ—श्रुति=कान। भूरि=अनेक। ढिग=निकट।

भावार्थ—व्रज के धन कृष्ण जब खेल के समय मस्त हो जाते थे तो उनके मुख पर तन्मयता की प्रतिमा दृष्टिगोचर होती थी अर्थात् वे खेलते-खेलते तन्मय हो जाते थे। यदि वे कुंज में कोयल की बोली बोलने लगते तो अनेक स्थानों पर कोयलें बोलने लगतीं।

यदि वह पपीहा, मैना अथवा तोते की कानों को सुखदायक प्रिय बोलियाँ बोलते थे तो अनेक जातियों के पक्षी चहचहाने लगते थे तथा मस्त होकर वृक्ष के निकट आ बैठते थे।

यदि वह ... ... भी था ॥१०४-१०५॥

शब्दार्थ—कलापी=मोर। एण=कस्तूरी मृग। मातंग=हाथी।

भावार्थ—यदि वे हंस की प्रिय चाल चलते थे तो त ल की अपूर्वता देख कर हृदय प्रसन्न हो जाता था। यदि वे सुन्दर मोर के समान नाचते थे तो उनकी अनुपम निपुणता मनों को मुग्ध कर देती थी।

यदि वे कस्तूरी मृग की भाँति चौकड़ी भर कर दौड़ते थे तो मृग-समूह भी उनकी समानता नहीं कर पाते थे। यदि वे वन में सिंह की तरह गर्जना करते थे तो मस्त हाथी भय से थर-थर काँपने लगता था।

नवल ... ... आलोकशाली ॥१०६-१०७॥

शब्दार्थ—संभार=सामग्री। कनक=सोना।

भावार्थ—यदि वह नए फलों, पत्तों तथा पुष्पों की सामग्री से राजसी वस्तुओं का निर्माण करते तथा कहीं पर राजा बन कर बैठ जाते तो उनकी शोभा देखने योग्य हो जाती थी।

ऐसा प्रतीत होता कि वहाँ मेरे बन्धु कृष्ण सुन्दर सोने से निर्मित भव्य आभूषण व सुन्दर मुकुट पहनते हैं जो मन को आकर्षित करने वाले, सुन्दर रत्नों से जड़े हुए तथा शोभाशाली हैं।

पृष्ठ १८८—शिर पर ... ...से भी १०८-१०९॥

शब्दार्थ—पाट=सिंहासन। परिकर=सेवक। पर्यंक=पलंग।

भावार्थ—कृष्ण के सिर पर अनुपम छत्र शोभायमान है। उन पर

सुन्दर चमर ढुलते हैं, सिंहासन रत्नों से शोभायमान हैं। वस्त्र और वेश वाले सैंकड़ों सेवक हैं तथा स्वर्ण-निर्मित गगन-चुम्बी महल हैं।

वैसे तो इन सब ऐश्वर्यों की यहाँ भी कमी नहीं थी। परन्तु वे पुण्यों के अत्यन्त प्रेमी थे। हरी घास से शोभित यह सुन्दर भूमि उन्हें सोने के पलंगों से अधिक प्रिय थी।

यह ... ... ही को ॥११०-१११॥

शब्दार्थ — चन्द्रातप = शामियाना।

भावार्थ — अनुपम शोभा वाले सुन्दर शामियानों से उन्हें यह अपूर्व नीला आकाश अधिक प्रिय था। हृदय को मुग्ध करने वाले अलौकिक महलों से उन्हें सुन्दर कुंजें अधिक प्रिय थीं।

मुग्धता की प्रतिमा मेरे कृष्ण हीरा मोती आदि से अधिक खिले हुए कुसुमों को चाहते थे। वे सुन्दर पुष्पों के अलंकरणों को सोने के आभूषणों से अधिक सुखदायक मानते थे।

अब ... ... बाधा ॥११२-११३॥

शब्दार्थ — शोभा-निधाना = शोभा का घर। सर्ग संभूत = संसार में उत्पन्न नियमन = नियन्त्रण करने।

भावार्थ — ऐसा प्रतीत होता है मानो मेरे मित्र का हृदय अब बदल गया है। अन्यथा वह इन सब बातों को कैसे भूल जाते ? नित्य ही अभिनव शोभा धारण करने वाली कुंजे तथा शोभाशाली पृथ्वी उन्हें प्रतिदिन याद क्यों नहीं आती ?

वे बहुधा ग्वाल-बालों से उनके घर की दुःख-कथा सुन कर वन छोड़ कर शीघ्र ही उनके घर जाते और उनके सांसारिक कष्टों को निबटाते थे।

पृष्ठ १८९ - यदि ... क्यों ॥११४-११५॥

शब्दार्थ — रुज = रोग। वितण्डावाद = वाद-विवाद। प्रथित = प्रसिद्ध।

भावार्थ — यदि घर पर लोग भूखे होते तो वे अन्न तथा धन देते। यदि कोई रोगी होता तो औषधि दिलवाते। यदि क्लेश, वाद-विवाद बढ़ा होता तो वे अपने मधुर वचनों से उसे भी दूर करते।

अनेकों नेत्र (अर्थात् अनेक व्यक्ति) दुःखी होकर अश्रु-जल बहा रहे हैं और प्रिय कृष्ण का मार्ग आज भी देख रहे हैं। हाय ! कृष्ण ने उनका तनिक भी ध्यान नहीं किया। दयानिधान कृष्ण हमें क्यों भूल गए है ?

पद-रज ... ... त्यों ही ॥११६-११७॥

शब्दार्थ - परस=स्पर्श। प्रतपित=तपे हुए। शिखी=मोर।

भावार्थ - ब्रजभूमि उत्कंठित होकर कृष्ण की पद धूलि चाहती है। वृक्षों के समूह हाथ स्पर्श करने के इच्छुक हैं अर्थात् वृक्ष चाहते हैं कृष्ण पुनः उनसे फल-फूल तोड़ें। यहाँ के लोगों की कृष्ण के मुख-कमल की शोभा देखने की प्यास बहुत बढ़ गई है अर्थात् वे कृष्ण को देखने के बहुत इच्छुक हैं।

जिस प्रकार सूर्य की तीव्र किरणों से तप्त होकर मोर प्रत्येक क्षण बादलों की कामना करता है उसी प्रकार ब्रजवासी अनेक सतापों से तप कर मेघ-शरीर वाले कृष्ण के लिए अत्यन्त उत्सुक हो रहे हैं।

नव ... ... आना ॥११८॥

शब्दार्थ--समुत्पन्न=उत्पन्न।

भावार्थ—जिस प्रकार नये बादलों के जल की धाराएँ उत्पन्न होते हुए अनेकों वृक्षों की प्राणाधार होती हैं उसी प्रकार नव-मेघ जैसे शरीर वाले कृष्ण का घर आना दुःखियों के लिए लाभदायक होगा।

कथन ... ... गेह को ॥११९॥

शब्दार्थ बुध=विद्वान।

भावार्थ—इस प्रकार ब्रज की दुःख-कथा कहते-कहते आकाश-मण्डल लालिमा से भर गया अर्थात् संध्या हो गई। अतः विद्वान् ऊधव को लेकर सम्पूर्ण ग्वाले अपने-अपने घरों को चल दिए।

चतुर्दश सर्ग

पृष्ठ १९०—कालिन्दी पल्लवों से ॥१-२॥

शब्दार्थ - कुंजातिरम्या=अति रमणीक कुंज। पुष्पभारावनम्रा=पुष्पों के भार से झुकी हुई। सरि=सरिता। तपन=सूर्य। लीला=क्रीड़ा

भावार्थ यमुना के तट पर एक अत्यन्त रमणीक कुंज थी। उस कुंज में छोटे-छोटे सुन्दर वृक्ष अत्यन्त मनोरम थे। प्रत्येक अनुपम वृक्ष पर क्रीड़ा-शील, सुन्दर व पुष्पों के भार से झुकी हुई लताएँ शोभायमान थीं।

एक बार ऊधव इसी कुंज में प्रफुल्लित हृदय से बैठे थे। उनके सम्मुख नदी का क्रीड़ाशील जल शोभायमान था। सूर्य की किरणें धीरे-धीरे सब ओर फैल रही थीं। वायु बड़ी उमंग से पत्तों के साथ अपूर्व क्रीड़ा कर रही थी।

अलंकार— पहले पद में छेकानुप्रास।

बालाओं ... ... आती ॥३-४॥

शब्दार्थ—मंजरिक=पायल। उदक=जल। विरस=उदास। आशा=निराशा।

भावार्थ - इसी समय बालिकाओं का एक दल आता हुआ दिख ई दिया। अपनी पायलों की सुन्दर ध्वनि से वे दिशाओं को गुंजरित कर रही थीं। इस शोभाशाली बालिका-मंडली में कई सुन्दर बालिकाएँ बहुत भोली-भाली थीं।

यमुना नदी का प्रिय नीला जल देख कर एक सुन्दरी ने बड़े उदास मुख से एक दूसरी ग्वाल-बाला से कहा—यमुना का तट मुझे खिन्न बना रहा है क्योंकि इसे देख कर मुझे क्रीड़ा करने वाले, मेघशरीर वाले कृष्ण की छवि स्मरण हो आती है।

पृष्ठ १९१—श्यामा - --- मूर्त्ति कैसे ॥५-६॥

शब्दार्थ—मर्म्मज्ञ=रहस्य जानने वाली।

भावार्थ—उस सुन्दरी की बातें सुन कर एक बालिका रोने लगी। रोते-रोते उसके दोनों नेत्र लाल हो गए। यदि वह लज्जा के कारण अपनी अश्रु धारा रोकने का प्रयत्न करती तो उसके नेत्रों में और भी आंसू आ जाते।

उसको इस प्रकार रोता देख कर (उसके रोने का रहस्य जानने वाली) एक चतुर बालिका कहने लगी—हे बहिन! यदि तू इस प्रकार रोयेगी तो

कैसे काम चलेगा ? क्योंकि रोने से तेरे दोनों नेत्रों में ज्योति कैसे रहेगी ? और ज्योति के अभाव में तू कृष्ण की शोभाशाली श्याम प्रतिमा कैसे देख सकेगी ? अतः तू रो मत !

जो यों ... औषधी है ॥७-८॥

शब्दार्थ—कृषित=दुर्बल। कामिनी—काम की इच्छा रखने वाली,सुन्दरी।

भावार्थ—यदि तू इसी प्रकार दुःखी होकर विरह-अग्नि में जलती रहेगी तो तेरे शुष्क दुर्बल शरीर में प्राण कैसे टिक सकेंगे अर्थात् तू मर जायेगी। यदि तू अपना प्रिय आनन्दित मुख (कृष्ण) नहीं देख पायी और स्वर्ग सिधार गई तो वहाँ भी सुख अनुभव नहीं कर सकेगी। (अतः मृत्यु से बचने के लिए, विरहाग्नि में मत जल !)

इस चतुर स्त्री का वचन सुन कर काम-इच्छा रखने वाली एक सुन्दरी इस प्रकार बोली—हे मेरी प्रिय सखि ! इस दुःखी बालिका को रोने दे। जो ग्वाल-बालाएँ कृष्ण की विरहाग्नि में जल रही हैं, अश्रुजल ही उनकी पीड़ा को शान्त करने की औषधि है।

वाष्प ... वे हैं ॥९-१०॥

शब्दार्थ—समाच्छन्न=ढक जाता। निह्नुता होती=दूर हो जाती। पर्जन्य=बादल।

भावार्थ—अनेक प्रकार के दुःखों तथा बढ़ी हुई पीडा से उच्छ्वास रूपी भाप उठती है और बालिकाओं का हृदय रूपी आकाश इन मेघों से ढक जाता है। अतः यदि इन बालिकाओं के नेत्र बादलों की भाँति अश्रु नहीं गिराएँ तो उनकी उदासी तनिक भी दूर नहीं होती। (जब आकाश में बादल घिरे होते हैं तो वर्षा होने पर ही आकाश निर्मल हो पाता है)।

जिस किसी ने भी किसी समय कृष्ण के वचन सुने हों, या कभी कृष्ण का अनोखा मुख देखा हो, वे भी कृष्ण की याद आने पर अत्यन्त व्याकुल हो जाते हैं तो वे बालिकाएँ, जिनके कृष्ण प्राणाधार थे, भला क्यों नहीं रोयेंगी ?

अलंकार—९वें पद में सांगरूपक।

पृष्ठ १९२—प्यारे ... ... आये ॥११-१२॥

शब्दार्थ—उन्माद-कारी=पागल कर देने वाला ।

भावार्थ—जो युवतियाँ कृष्ण को प्रिय भाई, पुत्र या सम्बन्धी के रूप में प्रेम करती हैं वे भी अत्यन्त व्याकुल होकर उदास हो गई हैं तो भला वे बालिकाएँ जो अपना अनोखा हृदय कृष्ण को दे चुकी हैं अर्थात् कृष्ण को प्रियतम के रूप मे चाहती हैं उनके विरह दुःख मे क्यों न जल मरेंगी ?

जैसे ही व्याकुल हृदय से ग्वाल-बाला ने यह कथन कहा, सारी बालाएँ काँप कर दारुण स्वर से रो उठीं । बालाओं का पागल कर देने वाला ऐसा अपूर्व विरह देख कर ऊधव कुंज से उठ कर उनके निकट आये ।

ज्यों पाते ... ... गोपियों का ॥१३-१४॥

शब्दार्थ उन्मुक्त=स्वच्छन्द । प्रमित=थोडी । सिवता=युवता ।

भावार्थ—जैसे (पहाड़ों पर) तेजी से बहती जल की स्वच्छन्द धारा समतल (मैदानी) भूमि पर आकर थोडी शान्त व स्थिर हो जाती है उसी प्रकार ऊधव को पाकर सम्पूर्ण ग्वाल-बालाओं का भ्रम उत्पन्न करने वाला दुःख का वेग थोड़ा शान्त हो गया ।

सब गोपियों ने प्रिय बातें कह कर सम्मान सहित व विधि-पूर्वक ऊधव को नम्रता से अपने समीप बैठाया । तत्पश्चात् ऊधव से पूछा कि हमारे कुमार अब भी घर क्यों नहीं आये ? क्या वे अपने चरण-कमलों की प्रेमिका—गोपियों को भूल गए ?

अलंकार—१३वें पद में उदाहरण ।

ऊधो बोले ... ... आती ॥१५-१६॥

शब्दार्थ— बेंड़ी=बेढंगी । मीमांसा=विवेचन ।

भावार्थ—ऊधव बोले— समय की गति बहुत रहस्यमय, अज्ञात तथा बेढंगी है । किस समय क्या होगा, इस बात को कोई जीव नहीं जान पाता । कृष्ण ब्रज में पुनः आयेंगे अथवा नहीं, इस कष्टमय प्रश्न की विवेचना मैं किस प्रकार कर सकता हूं ।

कृष्ण को आज भी पहले की तरह वृन्दावन प्रिय है। वे अपने प्रिय माता-पिता को भूल नहीं गए हैं। वे पहले जैसे ही ग्वाल-बालाओं का ध्यान करते हैं तथा उन्हें पहले की तरह ही प्रेम की साक्षात् मूर्ति बालिकाओं की याद आती है।

पृष्ठ १६३ —प्यारी बातें ... ... मूर्त्ति का है ॥१७-१८॥

शब्दार्थ—जनक=पिता। उच्छ्‌वास=आहें, ठंडी-सासें।

भावार्थ—बालक-बालिकाओं की, प्रिय माता-पिता की, गोप-गोपियों की प्रिय बातें कहते हुए श्रीकृष्ण को मैंने प्रायः मोहित होता देखा है। उस समय उनका व्याकुल हृदय ठंडी आहों से तथा नेत्र अश्रुजल से भर जाते हैं।

सुबह-शाम, हर क्षण उन्हें उनकी याद आती है। सोते समय स्वप्न में भी वे ब्रजभूमि को देखते हैं। मथुरा में तो कृष्ण का शरीर भर है, उन का हृदय तो भँवरों की तरह सदा यहाँ कुंजों में ही घूमता रहता है।

हो के ... ... ही है ॥१९-२०॥

शब्दार्थ—अतिशयता=अधिकता।

भावार्थ—प्रत्येक व्यक्ति का यही प्रश्न होता है कि जब कृष्ण को ब्रज-भूमि से हृदय से ही इतना प्रेम है तो वे क्यों नहीं आते? दूसरे व्यक्ति कहते हैं कि कृष्ण को तीन कोस आना करोड़ों कोस दूर आने की तरह कठिन क्यों लगता है?

जो व्यक्ति कृष्ण के दर्शनों की इच्छा से निरन्तर अपने नेत्र कृष्ण का मार्ग देखने में लगा कर अपने दिन व्यतीत करते हैं यदि वे व्याकुल होकर इस प्रकार के प्रश्न करते हैं तो कोई आश्चर्य या अधिकता की बात नहीं है।

ऐ संतप्ता ... ... लालसायें ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—विरह-विधुरा=वियोग से व्यथित। लिप्सा=आकांक्षा।

भावार्थ—हे वियोग से व्यथित गोपियों! तुम में से कोई भी श्रेष्ठ कृष्ण के रहस्य को तनिक भी नहीं जानता। वे हृदय से पृथ्वी के सम्पूर्ण

जीवों का कल्याण चाहते हैं। उन्हें विश्व का प्रेम अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है।

जब उनके नेत्रों के सम्मुख विश्व-हित आ जाता है तो वह सम्पूर्ण स्वार्थों तथा अनेक सुखों को तुच्छ बना देता है। वे लोक-सेवा के लिए अपने हृदय में भरी सैकड़ों आकांक्षाओं को एक योगी के समान दबा देते हैं।

पृष्ठ १६४—ऐसे-ऐसे — — से हैं ॥२३-२४॥

शब्दार्थ—अपर-कृति= संसार। कूल-वर्ती=किनारे पर स्थित। च्युत=विचलित।

भावार्थ—कृष्ण के नेत्रों के सम्मुख विश्व-कल्याण के ऐसे अनेक कार्य हैं, जिनके आगे वे दूसरे सब विषयों को भूल गए हैं। वे सच्चे हृदय से कर्त्तव्य-पथ के पथिक बन चुके हैं अतः वे इच्छा रहित हृदय वाले व्यक्ति के समान संसार के किनारे पर स्थित हैं अर्थात् संसार की वासनाओं से ऊपर उठ गए हैं।

पहले वे अपने कर्त्तव्य की विवेचना करते हैं तत्पश्चात् वे धैर्यपूर्वक उस कार्य को करने में मग्न हो जाते हैं। वे अपनी इच्छा से विवश होकर अथवा वासना में फँस कर अपने मुख्य कर्त्तव्य से विचलित नहीं होते।

घूमूँ जा ... ... बड़ों की ॥२५-२६॥

शब्दार्थ—वेले=समय। आर्त्त-वाणी=दुःख का स्वर।

भावार्थ यदि उनका हृदय पुष्पों से भरे वन में जा कर घूमने, समीर का आनन्द लेने तथा पुष्पों की प्रिय लता देखने को चाहता है परन्तु उसी समय कोई रोता हुआ व्याकुल व्यक्ति मिल जाए तो वे वाटिका में नहीं जायेंगे बल्कि उसे सान्त्वना देने लग जायेंगे।

यदि कृष्ण अपने माता-पिता की सेवा कर रहे हों अथवा अपने बड़ों के निकट बैठ कर उनका आदर-सम्मान कर रहे हों पर उसी समय किसी दुःखी का स्वर सुनाई पड़ जाये तो वे बड़ों की सेवा छोड़ कर उस दुःखी को शरण देकर उसका क्लेश दूर करेंगे।

जो वे ... ... देंगे। २७-२८॥

शब्दार्थ—वर्धिता=बढ़ती हुई। शास्ता=शासक। शास्ति=उपदेश।

भावार्थ—यदि वे घर में बैठे अपने अनेकों कार्यों में व्यस्त हो पर कोई आकर, व्याकुल होकर उनसे कहे कि बढ़ती हुई आग की लपटें घरों को दग्ध कर रही हैं तो वे अपने हजारों प्रिय कार्य छोड़ कर दौड़ पड़ेंगे।

यदि उनका कोई प्रिय मित्र अथवा सम्बन्धी हो परन्तु वह नीच, मनुष्य-मात्र का शत्रु अथवा पापी हो जाए तो वे अपने हृदय की सम्पूर्ण वेदनाएँ भूल कर (अपनत्व की वेदनाएँ) शासक के रूप में उचित दण्ड तथा उपदेश प्रदान करेंगे अतः वे पक्ष-पात रहित हैं।

पृष्ठ १९५—हाथों में ... ... न आते ॥२९-३०॥

शब्दार्थ—न्यस्त=रक्खा हुआ। अवलि=पंक्ति, सूची।

भावार्थ—यदि कृष्ण के हाथों में ऐसा कोई कार्य हो जो सम्पूर्ण कुल, जाति तथा मित्र-बन्धुओं को कष्ट प्रदान करने वाला हो परन्तु जिसमें कृष्ण विश्व का लाभ देखते हो तो वे दुःखी होकर भी सुख अनुभव करेंगे।

अब कृष्ण के नेत्रों के सामने अनेक अच्छे, लाभकारी तथा लोक-कल्याण के कार्यों की सूची है, वे सदा उसी में व्यस्त रहते हैं। यही कारण है कि वे अपने हृदय से भी अधिक प्रिय ब्रजभूमि में नहीं आ पाते।

हो जावेंगी ... ... तजेंगे ॥३१-३२॥

शब्दार्थ- शैथिल्य=शिथिलता, ढील। निर्मोही=मोह रहित, कठोर।

भावार्थ—कृष्ण के हृदय वृत्ति में राजनीति की अनेक कठिन समस्याएँ बाधा बन रही हैं अर्थात् उन समस्याओं के कारण कृष्ण ब्रज नहीं आ पा रहे। ये कार्य ऐसे हैं कि थोड़ी भी शिथिलता दिखाने से बहुत दुःखद सिद्ध होंगे तथा बुद्धिमत्ता द्वारा पूरे करने पर अति लाभदायक।

फिर भी मैं यह नहीं कह रहा कि नन्द के प्रिय-पुत्र कृष्ण ब्रज में आयेंगे ही नहीं और उसे भूल जायेंगे। ब्रज उन्हें अति प्रिय है अतः जिसे वे इतना प्रेम करते हैं उसे कठोर चित्त होकर कैसे छोड़ देंगे।

हाँ! ... ... --- निमग्ना ॥३३-३४॥

शब्दर्थ—प्राचीना=आयु में बड़ी।

भावार्थ—हाँ, एक बात अवश्य है। होनी बहुत बलवान होती है और ईश्वरेच्छा अत्यन्त शक्तिशाली है। इस विश्व में अनेक कार्य होते होते रुक जाते हैं। यदि ऐसा बुरा दिन ब्रजभूमि में आए (कि कृष्ण ब्रज नहीं आएँ) तो हे गोपियों ! अपने हृदय का बल (अर्थात् धैर्य) मत खो देना।

हे प्रौढ़ (अत: समझदार) और स्नेहशील गोपियों ! अपने प्रेम द्वारा तुम इन छोटी बालिकाओं को जो विरह में दग्ध होकर अश्रु जल बरसा रही हैं, समुचित रूप से समझाना तुम्हारा कर्त्तव्य है। ये बालाएँ मोह-माया में फँस न जाएँ, (ये तुम्हें ध्यान रखना है)।

पृष्ठ १९६—जो बूझेगा ... ... नहीं है ॥३५-३६॥

शब्दार्थ—श्रेय=कल्याण।

भावार्थ यदि ब्रजवासी लोक सेवा की भावनाओं को नहीं पहचान सकेंगे और यह न जान सकेंगे कि विश्व-कल्याण का क्या महत्त्व है अथवा विश्व का उपकार करने वाले महापुरुषों के कर्त्तव्य को नहीं समझ सकेंगे तो कृष्ण के हृदय को अपार कष्ट होगा।

सभी मनुष्यों का हृदय एक सा होता है। यदि एक व्यक्ति का हृदय सुख नहीं पाता तो (उससे सम्बद्ध) दूसरे का हृदय भी सुख अनुभव नहीं कर सकता जो व्यथाएँ एक हृदय को व्यथित करती हैं, उन व्यथाओं से पीड़ित होने से दूसरा हृदय भी नहीं बच सकता। तात्पर्य यह कि यदि तुम्हें विरह की पीड़ा है तो कृष्ण को भी विरह पीड़ा सता रही है।

जो ऐसी ... ... सोच देखो ॥३७-३८॥

शब्दार्थ—अधिप=नाथ। चारुता=सुन्दरता।

भावार्थ यदि ये बालिकाएँ इसी प्रकार रोती रहीं तो कृष्ण को भी अनेक प्रकार की पीडाएँ सताती रहेंगी। यदि सम्पूर्ण ब्रजवासी रो-रो कर दग्ध होते रहे तो ब्रज-नाथ श्रीकृष्ण को भी कैसे शान्ति मिलेगी ?

यदि उनका हृदय शान्त तथा चिन्तामुक्त नहीं होगा तो वे विश्व कल्याण के कार्य किस प्रकार सुन्दरता से कर सकेंगे? इसलिए हे गोपियों !

सीचो ! अत्यन्त प्रिय कृष्ण के शुभ-कार्यों में तनिक भी बाधा कैसे उचित होगी ?

धीरे-धीरे — — ... बात बूझें ।।३९-४०।।

शब्दार्थ – भ्रमित=भटका हुआ । वेधिनी=बेधने वाली ।

भावार्थ—अपने भटके हुए हृदय को शनैः-शनैः योग द्वारा वश में करो । विश्व-कल्याण के लिए अपने स्वार्थों को भी आनन्द से तज दो । वासना की प्रतिमाओं को देख कर तुम मोह में न पड़ो । इस प्रकार करने से दुःख शान्त होगा और प्रिय शान्ति प्राप्त होगी ।

सब गोपियों ने उदास होकर परन्तु विनय-पूर्वक ऊधव की हृदय-छेदने वाली गंभीर व प्रिय बातें सुनीं । तत्पश्चात् वे उदास, अनमनी व आश्चर्य से बोलीं— हे ऊधव ! हम जैसी नीच व मूर्ख स्त्रियाँ आपकी बात कैसे समझ सकती हैं ?

पृष्ठ १९७—हा जाते ... ... गोपिकायें ।।४१-४२।।

शब्दार्थ—मनीषी=विद्वान । धी=बुद्धि । तरी=नौका ।

भावार्थ—जिस योग मार्ग में बहुत ज्ञानी व विद्वान व्यक्ति भी भटक जाते हैं, वह मार्ग हम मंद-बुद्धि स्त्रियों को कैसे सरल होगा । जो नौका छोटे-छोटे नदी-तालाबों में भी डूब जाती है, वह भला इस सम्पूर्ण पृथ्वी पर फैले विशाल सागर को कैसे पार कर सकती है ?

हम सम्पूर्ण सुख और सकल स्वार्थ त्याग देंगीं । यही नहीं अपने हृदय में कोई वासना भी नहीं रखेंगी । हे विद्वान ऊधव ! हमें केवल इस बात का उपाय बता दो कि हम अपने हृदय-धन कृष्ण को कैसे त्यागें ।

अलंकार—४१वें पद में दृष्टान्त ।

भोगों .... रमा हो ।।४३-४४।।

शब्दार्थ—भुवि=पृथ्वी । अवलि=पंक्ति ।

भावार्थ— हम गोपियाँ सम्पूर्ण भोगों को, पृथ्वी के सब ऐश्वर्यों को, सांसारिक इच्छाओं को; अपने माता-पिता, प्रिय सम्बन्धियों तथा बन्धु-

बांधवों को भूल जायेंगी। हम अपने शरीर, हृदय व स्वर्ग की सम्पत्ति को भूल जायेंगी। परन्तु हम मेघ जैसे शरीर वाली कृष्ण की साँवली-प्रतिमा कैसे भूल सकेंगी ?

जो कृष्ण सम्पूर्ण-ब्रज के प्राणियों को अत्यन्त प्रिय है। जिसके प्रेम से हमारा रोम-रोम रंगा हुआ है। जो हमारे प्राणों में, हृदय में तथा नेत्रों में समाया हुआ है, भला पृथ्वी पर कौन प्राणी उसे भुला सकेगा ? अर्थात् उसे भुलाना असंभव है।

भूला जाता ... ... काढ़ देवें ।।४५-४६।।

शब्दार्थ उद्योगी हो= प्रयत्न करके। काढ़=निकाल।

भावार्थ—वह सम्बन्धी जो हृदय में बसा हुआ हो, जिसकी सुन्दर शोभा नेत्रों में समाई हुई हो, वह भुलाया जा सकता है। परन्तु कृष्ण को कैसे भुलाएँ जिनमें हृदय ही बस गया है; जिनकी प्रिय छवि देखकर आँखें स्वयं उसमें समा गई हैं ?

हे ऊद्धव ! कोई यदि यह कहे कि गोपियों, अपना प्यारा अपूर्व हृदय निकाल दो, तो हम ऐसा कर सकेंगी। परन्तु शरीर में प्राण रहते हम से यह नहीं हो सकेगा कि प्रयत्न करके कृष्ण को हृदय से निकाल दें।

पृष्ठ १९८—मीठे ... ... पाती। ४७-४८।।

शब्दार्थ—निर्मोही=मोह-रहित।

भावार्थ जिनके मधुर-वचन मैं प्रतिदिन सुनती थी; हाय ! आज उनकी कहानी ही उन कानों से मैं सुन पाती हूं। जो मोह रहित कठोर हृदया कृष्ण सदैव नेत्रों के सम्मुख रहते थे, आज मैं भूल से भी उनकी शोभा नहीं देख पाती।

आज मैं व्याकुल होकर, कलेजा कूट कर रोती हूं, कभी उन्हीं नेत्रों से मैं कृष्ण के दोनों पाँवों की सुषमा देखती थी। अब कैसे बुरे दिन आ गए हैं और भाग्य कितना बुरा हो गया है कि मैं प्रिय कृष्ण के चरणों की धूलि भी प्राप्त नहीं कर पाती।

ऐसी ... ... अम्बुदोसी। ४९-५०।।

शब्दार्थ—ठौरों=स्थानों। नीप=कदम्ब का वृक्ष। नील म्बु=नीला जल।

भावार्थ—ब्रजभूमि में ऐसी अनेक कुंजें है, जहाँ पर पहुंचते ही दोनों नेत्रों के सम्मुख कृष्ण की अपूर्व प्रतिमा आ जाती है। जिन स्थानों पर यशोदा के पुत्र कृष्ण ने बड़ी प्रसन्नता से क्रीड़ाएँ की हैं, उन स्थानों पर आज भी नेत्र उमग से ठहर जाते हैं।

कदम्ब वृक्ष को पुष्पों से लदी डालें देख कर कृष्ण की अपूर्व प्रतिमा सम्मुख आ जाती है। यमुना के तट पर अनुपम नीला जल देख कर हृदय में कमल का सा माधुर्य उत्पन्न हो जाता है।

अलंकार—५०वे पद में उपमा।

सूखे ... ... सोना ।।५१-५२

शब्दार्थ— पायोधि=समुद्र।

भावार्थ—यमुना नदी का अपूर्व जल शुष्क हो जाए, कुंजों का समूह जल जाए, हम गोपियों के नेत्र फूट जाये व हृदय नष्ट हो जाये, सारा वृन्दावन उजड़ जाए, कदम्ब मूल से उखड जाये तब कहीं यह सम्भव है कि अपार-गुणों के सागर कृष्ण को हम भूल जाएँ।

आपके सम्मुख जो उदास-मुख लिए बालिकाएँ बैठी हैं, ब्रजभूमि में ऐसी अनेक बालिकाएँ हैं जिनका रोना-धोना, व्याकुल होना, विरह में जलना, न सोना देख कर हृदय दुःख से भर जाता है।

पृष्ठ १९९—पूजायें ... ... होंगी ।।५३-५४।।

शब्दार्थ—वांछा=कामना। प्रेमोन्मत्ता=प्रेम-दीवानी।

भावार्थ—उन गोपियों ने विभिन्न पूजा, व्रत आदि बड़े परिश्रम तथा बड़ी श्रद्धा-भक्ति से वर्षों तक की है। उनकी केवल एक कामना थी कि उन का विवाह कृष्ण से हो जाए। यही इच्छा उनकी असफल होती दिखाई दे रही है अतः वे क्यों न दुःखी होंगी?

वे अपने हृदय में कमल-नेत्र कृष्ण की प्रेमिका बन चुकी हैं। वे अपना भोला-भाला हृदय कृष्ण को दे चुकी है। उनके नेत्रों में मनोहर कृष्ण की

सुन्दर शोभा विद्यमान है। अतः वे पृथ्वी पर क्यों न कृष्ण के प्रेम में पगली बनें ?

पृष्ठ १९९—नीला ... ... कैसे ! ।।५५-५६।।

शब्दार्थ—अनुरत=प्रेम। कंटकाकीर्ण=काँटों से भरे।

भावार्थ—जिनके नेत्रों में नीले मेघ रुपी कृष्ण समाए हैं वे धुएं के समूह की ओर प्रेम से कैसे देख सकती हैं ? जो वास्तव में कृष्ण में अनुरक्त हो चुकी हैं वे अपने हृदय में किसी अन्य को कैसे स्थान दे सकेंगी ?

हे ऊद्धव ! अब तुम्हीं सोचो यदि ये बालिकाएँ अविवाहित रह गई तो व्रजभूमि के लोगों को कितना कष्ट होगा ? वे बालाएँ कितनी दुःखी और उदास होवेंगी। उनके दिन कितने कष्टपूर्ण हो जायेंगे।

अलकार ५५वें पद में दृष्टान्त।

सर्वांगों ... ... वे हैं ।।५७-५८।।

शब्दार्थ—यौवनाम्भोधि=यौवन का समुद्र। ओखे=दुर्गम। वामता=विपरीतता। आवर्त्त=भँवर।

भावार्थ—इन बालिकाओं के सम्पूर्ण अंगों में यौवन रूपी समुद्र हिलोरें ले रहा है। उनकी ठंडी आहें अत्यन्त प्रवल लहरों के समान हैं। वे ज्ञान और बुद्धि रूपी मजबूत नाव भी तोड़े डालती हैं उनके आघातों से धैर्य रूपा पर्वत भी खंडित हो जाता है।

बालिकाएँ ऐसे दुर्गम सागर में फंस गई हैं। समय की विपरीतता वायु के प्रवल झोकों के समान है। नाव भवरो में फँस गई है और नाविक नहीं है। हाय ! वे कैसी घोर विपत्ति में पड़ गई हैं।

अलंकार—दोनों पदों में सांगरूपक।

पृष्ठ २००—शोभा ... ... सहेंगी ।।५९-६०।।

शब्दार्थ—उत्सन्न=नष्ट। सं-सिद्धि=सफलता। अप्रगल्भा=भोली-भाली। मदन=काम।

भावार्थ—उनके नेत्रों के सम्मुख इच्छा रूपी पुष्पों से भरा सुख रूपी उद्यान निरन्तर शोभायमान था। हाय! शोभा का निधान वह उपवन प्रतिदिन नष्ट होता जा रहा है। उसके प्यारे पुष्प भी अब नहीं मिल रहे हैं।

ये बालिकाएँ अत्यन्त भोली-भाली व सीधी-सादी है। कामाग्नि मर्यादा, अच्छी बुद्धि, कुल की लाज आदि को नष्ट कर देती है तथा कठोर तपस्या से प्राप्त सफलता, सिद्धि आदि को जला डालती है, उस कामाग्नि की तीव्र-ज्वाला ये बालिकाएँ कैसे सह सकेंगी ?

चक्री ... ... रहेंगी ॥६१-६२॥

शब्दार्थ—चक्री=चक्रधारी, विष्णु। पिनाकी=पिनक वाले अतः शिव। रति-रमण=रति का पति, काम। शर=तीर।

भावार्थ—जिस कामदेव के बाण से विष्णु चकित हो जाते हैं, शिव जिसके सम्मुख काँप उठते हैं, जो वज्र जैसे कठोर हृदय वाले मनुष्य को दुखी बना देता है, जो विश्व में सम्मपूर्ण प्राणियों को सताता रहता है, उससे वे बलाएँ कैसे बच पायेंगी ?

कामदेव का बाण, जो अत्यन्त मृदु होने पर भी वज्र का कार्य करता है, जो पुष्प के समान होकर पर्वत का कार्य करता है, जो अत्यन्त शीतल होते हुए भी अग्नि के समान जलाने वाला है, उससे वे बालाएँ अपनी रक्षा कैसे कर सकेंगी ?

प्रत्यंगों ... ... को ॥६३-६४॥

शब्दार्थ—प्रत्यंग=अंग-अंग। स्नेहोत्फुल्ला=श्रीकृष्ण के प्रेम से खिली हुई। अंभोजनी=कमलिनी।

भावार्थ—जिस कामदेव का नशा अंग-प्रत्यंग में फैल जाता है, जो कालकूट आदि विषों की भांति अत्यन्त भयंकर हो जाता है, जिसमें नशीले पदार्थों से भी अधिक नशा उत्पन्न करने की शक्ति है। भला उसके नशे से गोपियाँ क्यों न पागल होंगी।

जब कृष्ण के स्नेह से प्रसन्न उन खिली हुई बालिका रूपी कमलिनी पर कामदेव रूपी हिमपात का प्रहार होगा तो वे पीड़ा से अत्यन्त व्याकुल

ग्रौर रोमांच उत्पन्न करने वाली हो जायेगी। हाय ! उस समय कौन इन्हें ग्रपने नेत्रों से देख सकेगा ?

ग्रलंकार—६३वें पद में व्यतिरेक।

पृष्ठ २०१—मेरी बातें ... ... प्रेम की है ॥६५-६६॥

शब्दार्थ—बुध-विदिता=विद्वानों द्वारा जानी हुई। चित्र=विचित्र।

भावार्थ—मेरा कथन सुनकर यदि ग्राप ये प्रश्न करें कि कृष्ण ग्रकेले ही सैकड़ों बालाग्रों से कैसे विवाह करते तो मेरी केवल एक विनती है। ग्राप जैसे उच्चकोटि का विद्वान क्या प्रेम की मदान्धता को नही जानता, जिसे विद्वानों ने भली भाँति जान लिया है।

ग्रनेकों तारिकाएँ सुन्दर चन्द्रमा में ग्रनुरक्त हैं। लाखों कमलनियाँ सूर्य की प्रेमिकाएँ हैं। यदि ये ग्रनेकों बालिकाएँ कृष्ण में ग्रासक्त हैं तो इसमें विचित्र क्या है। केवल प्रेमी का हृदय ही प्रेम की महानता को समझ सकता है।

पृष्ठ २०१—जो धाता ... ... शोक-मग्ना ॥६७-६८॥

शब्दार्थ—सुमना=सुमन जैसी।

भावार्थ यदि ईश्वर ने संसार में सौन्दर्य की रचना की है तो मानव को इस सौन्दर्य का मोह क्यों नही होगा ? कृष्ण जैसे सुन्दर व्यक्ति के सौन्दर्य की ग्राभा देखकर पुष्प समान सुन्दर ग्रनेक बालकाएँ क्यों न मुग्ध होंगी ?

यदि वे कृष्ण पर मुग्ध होंगी तो उन्हे प्राप्त करने का प्रयत्न क्या नहीं करेंगी ? यदि वे ग्रपने प्रयत्नों में ग्रसफल होंगी तो पागल क्यों न होंगी ? हे उद्धव ! वैसे तो सम्पूर्ण व्रज-भूमि कृष्ण वियोग के शोक में डूबी हुई हैं पर इन व्रज बालाग्रों की समस्या तो ग्रत्यन्त जटिल हो गई है।

जो वे ... ... चिन्तामणी हैं ॥६९-७०॥

शब्दार्थ—मधुपुर=मथुरा। वृष्णि=यादव। चिन्तामणी=चिन्तन करने पर ही मन चाहा पदार्थ देने वाली मणि।

भावार्थ—यदि कृष्ण मथुरा जाकर देवकी के पुत्र नहीं बनते और यादव-वंशी नहीं कहाते तो वे वशक वर्षों तक व्रज में नहीं आते पर न तो हमारी आशा टूटती, न हृदय वंचन होता और न जी उदास होता अर्थात् कृष्ण के यादव-वंशी बन जाने पर उनके आने की कोई आशा ही नहीं रही।

हे ऊद्धव ! मथुरावासी अत्यन्त भाग्यशाली हैं तथा उन्होंने बहुत पुण्य किए हैं कि उन्हें ऐसा अनुपम रत्न मिल गया है। व्रजभूमि के सर्व प्राणी अत्यन्त दुर्भाग्यशाली हैं जो अपनी सुन्दर चिन्तामणी अर्थात् कृष्ण को पुनः प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं।

पृष्ठ २०२—भोली ... ... बड़े हैं ॥७१-७२॥

शब्दार्थ—अ-बुध=नासमझ।

भावार्थ—व्रज-भूमि के भोले-भाले लोग योग विद्या को नहीं जानते। ये नासमझ नारियाँ ज्ञान-विज्ञान की बातें कैसे समझ सकती हैं। आप इस तरह की बातें कह कर हमें पीड़ा क्यों पहुंचाते हो। कृपा करके ऐसा उपाय बता दो कि हम कृष्ण का प्रिय मुख देख सकें।

क्या वे पुनः व्रज-भूमि में आकर अनुपम क्रीड़ाएं करेंगे ? क्या पुनः ग्वाल बालक बालिकाओं के नेत्र उन्हें देख कर प्रसन्न होंगे ? क्या फिर कभी वन के कुंजों में उनकी मुरली का स्वर गूंजेगा ? क्या वे अपूर्व दिन पुनः आ सकेंगे ?

श्रेयःकारी ... ... जिला दो ॥७३-७४॥

शब्दार्थ - श्रेयःकारी=कल्याणकारी। ईदृशी=ऐसी। समुत्सन्न=नष्ट।

भावार्थ—कृष्ण के आने की आशा ही सम्पूर्ण व्रज का कल्याण करने वाली है। इससे प्रत्येक व्यक्ति थोड़ा अथवा अधिक शान्त प्राप्त करता है। हे उद्धव ! कृपया तुम ऐसी सुन्दर आशा को मत तोड़ो। यदि यह व्रजभूमि नष्ट हो गयी तो तुम्हें भला क्या प्राप्त होगा ?

कृष्ण के माता-पिता की कष्टपूर्ण दशा देख कर ही कुछ विचार करो। प्रेम से पागल अत्यन्त व्याकुल ग्वाल-बाला को देखो। व्याकुल गोप-गोपियों

को देख कर कुछ दया करो । हे ऊद्धव ! ब्रज की मृत होती हुई भूमि को पुन: जीवन-दान दो ।

बोली ... ... होती । ७५-७७।।

शब्दार्थ अपरा=अन्य । ककुभ=दिशा । सिताभा=सित+आभा, श्वेत-छवि । प्रतिभात=ज्ञात ।

भावार्थ – एक अन्य गोपी शोक से इस प्रकार बोली – हे उद्धव ! कृपया ब्रज को अवश्य ही जीवन दान दो ! तत्काल मथुरा जाओ तथा हमारी दारुण दशा बताओ मेघ-शरीर वाले कृष्ण को ब्रज में लौटा लाओ ।

कृष्ण का चरित्र जैसा अत्यन्त प्रिय तथा विश्व-भर को प्रसन्न करने वाला, वैसा मैं अब आपको सुनाती हूं । आप ऐसा उपाय करिए कि सौन्दर्य के भंडार कृष्ण पुन: अपनी अलौकिक क्रीड़ाएँ दिखाएँ तथा ब्रजवासी उन्हें पुन: देखें ।

पृथ्वी पर शरद-ऋतु की रमणीयता व्याप्त थी । विशाल नीला आकाश निर्मल हो गया था । सर्व-दिशाओं में अत्यन्त श्वेत शोभा छा गई थी । प्रकृति बहुत प्रसन्न ज्ञात होती थी ।

पृष्ठ २०३—होता ... ... नदी थी ।।७८-८०।।

शब्दार्थ--कान्तार काश=काँस के वन । सरितातिभव्या—सरिता+अति+भव्या । विमलाम्बुवती=विमल=अम्बु=वती = निर्मल जल वाली ।

भावार्थ—काँस के वन, अपने खिले हुए श्वेत पुष्पों के द्वारा नेत्र वाले (समझदार) सभी व्यक्तियों को यह बता रहे थे कि संसार में श्वेतता वृद्धि प्राप्त कर रही है तथा सर्व-दिशाओं में सतोगुण का प्रसार होता जा रहा है । (सतोगुण को श्वेत वर्ण का माना जाता है) ।

अति सुन्दर नदी यमुना धीरे-धीरे बह रही थी । उसके निर्मल जल में बहुत सी सुन्दर लहरें उठ रही थीं । उसके जल की बूंदें नवीन मोतियों के समान अत्यन्त उज्जवल, शोभाशाली व छविमान थीं ।

अब जल-प्रवाह किनारों को नहीं डुबो रहा था । प्रवाह का शब्द भी कानों को भेदने वाला अत्यन्त तीव्र नहीं था । नदी के भँवर समूह भी अब

पृथ्वी को नहीं डुबो रहे थे । अब यमुना नदी धैर्यवान्, गम्भीर तथा निर्मल जल वाली हो गई थी ।

अलंकार—७९ में उपमा ।

था मेघ ... ... थे ॥८१-८३॥

शब्दार्थ—कर्दम=कीचड । सुगह्वरों=सुन्दर गुफा । कृती=कृतज्ञ । वरूथ=समूह । तडाग=तालाब । धौत=धुली हुई ।

भावार्थ—आकाश मेघ-हीन होकर अत्यन्त निर्मल कान्तिमय हो गया था । नव वधू रूपी दिशाएँ मलीनता रहित हो अत्यन्त प्रसन्न हो गई थीं । भूमि अति सुन्दर, कीचड़-रहित, निर्मल व रमणीक थी । सब ओर जल से धुली हुई सफेदी सी शोभायमान थी ।

वन में, नदी किनारों पर, सुन्दर गुफाओं में, स्वच्छ जल के स्रोत धीरे-धीरे बह रहे थे । उनमें से एक अपूर्व स्वर निरन्तर निकल रहा था । मानो वे कृतज्ञता से शरद्-ऋतु का यशोगान कर रहे थे ।

नए आए हुए पक्षी समूहों से बावड़ी, तालाब आदि शोभायमान हो रहे थे । मानो वे विकसित कमल रूपी प्रसन्न नेत्रों से मुग्ध होकर इन पक्षियों को देख रहे थे ।

पृष्ठ २०४ नाना ... ... विभा थी ॥८४-८६॥

शब्दार्थ—विभूति=सम्पत्ति । प्रान्तर=जंगल । मराल=हँस । अगस्त=एक तारा, जो शरद ऋतु में दिखाई देता है ।

भावार्थ—अनेक तालाब अपनी गोद में नव-विकसित कमलों को लिए शोभित थे तथा मन को मुग्ध कर रहे थे । ऐसा प्रतीत होता था मानो वे अपने सैकडों हाथों को फैला कर शरद्-ऋतु से सम्पत्तियाँ माँग रहे थे ।

जंगलों में श्वेत व काले रंगों से चित्रित अनेक चंचल खंजन पक्षी दिखाई पड रहे थे । ब्रज में प्रसन्नता से आए हँसों की पंक्तियाँ सुन्दर तालाबों पर शोभायमान थीं ।

अपूर्व शोभा वाले विशाल आकाश में तथा प्रफुल्ल पृथ्वी पर नवोदित अगस्त्य नक्षत्र की नई शोभा व्याप्त हो रही थी । उसने वर्षा-ऋतु के

बादलों को जलहीन कर दिया ता अनेक वन खडों व मार्गों का जल शुष्क कर दिया था।

अलंकार—८४वें पद में उत्प्रेक्षा।

था क्वार ... ... मिलाती।८७-८९॥

शब्दार्थ—राका=पूर्णिमा। कलाकर=चन्द्रमा। नग=पर्वत। कन्का=कन्या, पुत्री।

भावार्थ—असौज का महीना था। अत्यन्त सुन्दर पूर्णिमा की रात्रि थी। चन्द्रमा अपनी पूरी कलाओं सहित शोभायमान था। सम्पूर्ण दिशाओं को प्रकाशवान तथा निर्मल बना कर आकाश में श्वेतता (चाँदनी) सुन्दरता सहित शोभायमान थी।

दिशाओं में शरद्-ऋतु को अत्यन्त शोभायमान पाकर आकाश को मेघ रहित पाकर, चन्द्रमा की अपूर्व चाँदनी सुन्दर पृथ्वी से अत्यन्त मनोरम ढंग से मिल रही थी।

रात्रि के प्रेमी चन्द्रमा की अपूर्व चाँदनी जब पर्वत शिखरों को अगणित हीरों आदि से अलंकृत करती थी। जब यही चाँदनी सूर्य की पुत्री यमुना की लहरों पर पड़ती तो ऐसा प्रतीत होता मानो मणियों का सुन्दर चूर्ण मिला रही हो।

अलकार-- ८९वें पद में उत्प्रेक्षा।

पृष्ठ २०५—थे स्नात ... ... मानवों का॥९०-९२॥

शब्दार्थ—स्नात=नहाए हुए। पारद=पारा। अंशु=किरण।

भावार्थ—सम्पूर्ण वृक्ष चाँदनी से नहाए से प्रतीत होते थे। उनका प्रत्येक पत्ता चमकदार दिखाई दे रहा था। फैली हुई लताएँ, विकसित बेलें व पुष्पित शाखाएँ अत्यन्त अनोखी तथा स्वच्छ चाँदनी में डूबी हुई थीं।

पृथ्वी पर चाँदनी फैली हुई थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो पृथ्वी चाँदी के वर्कों से ढकी हुई हो अथवा क्षीर-सागर के दूध से भरी हो। वृक्षों तथा बेलों के प्रत्येक पत्ते पर चाँदनी इस तरह फैली हुई थी मानो उन सब पर पारा चढ़ा हो।

आकाश में सुन्दर चन्द्रमा धीरे-धीरे मुस्करा रहा था। पृथ्वी पर मानो अमृतधारा बह रही थी। यह चाँदनी किरणों के माध्यम से नेत्रों में प्रवेश करके मनुष्यों के हृदयों को प्रायः मस्त कर देती थी।

अलंकार—दोनों पदों में उत्प्रेक्षा।

अत्युज्वला ... ... सुधा से ॥६३-६५॥

शब्दार्थ—अत्युज्वला = अत्यन्त उज्जवल। दिव्याम्बरा = अलौकिक वस्त्रो वाली। सुरन्ध्री = गृहिणी। पय-सीकर = जल कण।

भावार्थ—पूर्णिमा के चाँद रूपी मुख वाली रात्रि रूपी गृहिणी अतीव शोभायमान तथा आकर्षक थी। उसने तारिका रूपी मोतियों की अतीव श्वेत माला पहन रखी थी तथा अपूर्व चाँदनी रूपी अलौकिक वस्त्र पहन रखे थे।

श्वेत रात्रि पूर्ण रूप से उज्जवल हो गई थी। रात्रि का स्वामी चन्द्रमा सूर्य के समान प्रतीत होता था। कुशल चकोरी कभी तो आकृष्ट होकर चाँदनी रूपी सुधा का पान करती थी तो कभी आश्चर्य चकित सी रह जाती थी।

अतीव प्रिय वायु पुष्पों की सुगन्धि तथा जलकण लिए धीरे-धीरे बह रही थी। वह समीर सुन्दर चन्द्रमा की चाँदनी से सींची जाकर अत्यधिक प्रसन्नता दायक बन गयी थी।

अलंकार—६४ में भ्रमालंकार। कवि-परम्परा के विपरीत चकोरी चाँदनी देख प्रसन्न है।

पृष्ठ २०६—चन्द्रोज्वला ... ... सा ॥६६-६८॥

शब्दार्थ—मयूख = किरण। गणाग्रणीं = गण-अग्रणी = समूहों में श्रेष्ठ। आदौ = पहले। मरुत = वायु। पीयूष = अमृत।

भावार्थ—वनभूमि चन्द्रमा के समान उज्जवल, चाँदी के वर्कों के समान मनोहर, शान्त, अतीव सुन्दर किरणों से सिंची हुई, श्वेत शरीर वाली, मधुर समीर युक्त, निर्मल जल युक्त, सुन्दर किनारों वाली तथा सुगन्धित पुष्पों वाली थी।

ऐसी अपूर्व भूमि में इतने आकर्षक व सुसज्जित समय को पाकर ब्रज के ग्वालों में श्रेष्ठ, आनन्द के भंडार कृष्ण की सुरीली मुरली एकाएक बज उठी।

मुरली का भावमय तथा आकर्षक स्वर पहले तो समीर की सहायता से सम्पूर्ण दिशाओं में फैल गया। तत्पश्चात अनेकों सहृदयों के कानों में अमृत की आनन्द वर्धक बूंदों के समान पड़ा।

पूरा ... ... तपनांगजा के ॥९९-१०१॥

शब्दार्थ—जनताति=जनता+अति। तथांगनाएँ=तथा स्त्रियाँ। तपनांगजा=यमुना।

भावार्थ—वँशी के स्वर से यदि गोपियाँ मुग्ध हो गईं तो गोप समूह भी अत्यन्त मोहित हो गए। ब्रजभूमि में आनन्द की तरंगें फैल गईं। जन-समुदाय के हृदयों में आनन्द के बीज बो गये।

मुरली का स्वर सुनकर असीम जनता, अनेक गोपियाँ गोप व उनकी पत्नियाँ वनभूमि में विहार करने के चाव से घर छोड़कर तथा उत्साहित होकर दौड़ पड़ी।

अतीव उत्साह से भरपूर्ण, मोहित, प्रेम में लीन जनता को आया देखकर कृष्ण ने वन में यमुना नदी के किनारे पर सुन्दर लीला का प्रबन्ध किया।

पृष्ठ २०७—हो हो ... ... सिखाती ॥१०२-१०४॥

शब्दार्थ—प्रमत्तता=मस्ती। स्वर-सप्तक=सात स्वर। श्रुति=कान।

भावार्थ—सब व्यक्ति बहुत से वर्गों में विभाजित हो गए तथा वन में आकर्षक लीला प्रारंभ की सब लोग अपने अतीव मधुर कंठ से गाकर, वाद्य-यन्त्र बजाकर, हृदय की मस्ती से पागल से हो गए।

मंजीरों घुंघरूओं तथा करधनी की आकर्षक ध्वनि सुन्दर वाद्य यन्त्रों के ध्वनि के समान फैल गई। तत्पश्चात अतीव कोमल हाथ से आकर्षक वीणा आनन्द से बजाई गई।

मृदंग पर जो सधी हुई चोटें पड़ती थीं वे सातों स्वरों को सजीव बनाती थीं। वह ध्वनि बड़े कौशल और माधुर्य के साथ मिलकर कानों को मनोरमता सिखा रही थीं।

मीठे ... ... लसाती १०५-१०७।।

शब्दार्थ—निनादित=बजकर। सुनादित=सुन्दर रूप से बजकर। चपलांगिनी=चंचल अंगों वाली।

भावार्थ—मधुर व सुरीली अनेकों मुरलियाँ बज-बजकर सबको प्रफुल्लित कर रही थीं। पर वन में चतुर कृष्ण की मुरली सबसे अधिक सरस तथा आनन्द प्रद थी।

जब कृष्ण की सुन्दर उंगलियों से बज-बजकर वन में मुरली गूँज उठती थी तब प्रत्येक पत्ते पर चन्द्रमुखी चंचल किरणों का सुन्दर नृत्य प्रारम्भ हो जाता था।

पृथ्वी तथा आकाश में अर्थात् सर्वत्र फैली हुई चन्द्रमा की चाँदनी रूपी अमृत धारा में बाँसुरी के स्वरों की अनुपम अमृत धारा मिल रही थी। अनुपम रस की यह धारा पृथ्वी पर सर्वत्र बह कर दिव्य आनन्द बिखेर रही थी।

पृष्ठ २०८ – उत्फुल्ल ... ... चन्द्रिका थी ।।१०८-११०।।

शब्दार्थ—विकाशमय=खिली हुई। तद्गता=तन्मय। विहसितातिः= अत्यन्त हँसती हुई।

भावार्थ—(मुरली का स्वर सुन कर) वृक्ष-समूह प्रसन्नता से खिल उठते थे। पुष्प समूह प्रसन्नता से फूल कर अत्यन्त माधुयपूर्ण हो जाता था। सुन्दर बेलें विकसित होने लगतीं तथा नई लताए सौन्दर्य का भडार बन जातीं।

यमुना नदी की काली धारा विभिन्न क्रीड़ाएँ करती हुई, कल-कल ध्वनि करती हुई तथा सुन्दर छविमय होकर अत्यन्त तल्लीन थी। यह धारा उस संगीत स्वर से उत्साहित होकर उमंग से नचने लगती, उसमे आसक्त हो जाती उल्लास से भर जाती तथा हर्षित होती थी।

मधुर समीर अलौकिक ढंग से स्थिर हो गया था। ऐसा प्रतीत होता

था मानों मुग्ध होकर उसने अपनी चंचलता त्याग दी हो। मुरली की मनोरम ध्वनि से बहुत आनन्दित होकर श्वेत चाँदनी मधुर हँसी हँस रही थी।

अलंकार—११०वें पद में उत्प्रेक्षा।

सत्कण्ठ ... ... तानें ॥१११-११३॥

शब्दार्थ— उरस्थल=हृदय। मत्तप्राय=मस्त। किन्नर=यक्ष। सुवाद्य=सुन्दर बाजे। स्वन=शब्द।

भावार्थ—स्त्री-पुरुषों के समूहों का एक साथ मधुर कंठ से गाना पृथ्वी पर किस को उत्साहित नहीं करता। उमंग भरने वाली तथा मधुर कण्ठ से उत्पन्न संगीत-लहरी मनुष्यों के हृदय रूपी बाजों को बजा रही थी।

वायु गले के स्वरों को, मुरली की अनुपम ध्वनि को, मदंग की प्रिय ध्वनि को व सुन्दर वीणादि की ध्वनियों को लेकर बड़े आनन्द से इधर-उधर विचरण करती हुई मार्ग में अनेक पशु-पक्षियों, मनुष्यों तथा किन्नरों को अतीव मस्त बना रही थी।

बहुत से सोने के आभूषणों में हीरे के समान, अनेक पक्षियों के नाद में कोयल की ध्वनि के समान, उन अनेक प्रकार के वाद्य-यन्त्रों के स्वर में श्रीकृष्ण की मुरली की तान अत्यन्त अनुपम थी अतः स्पष्ट रूप से अलग थी।

अलंकार—११३वें पद में उदाहरण।

पृष्ठ २०६—ज्यों-ज्यों ... ... सातो ॥११४-११६॥

शब्दार्थ—रसार्द्र=रस से भीग कर। मोहन=मोहित करने की शक्ति। ऋजु-रन्ध्र=सीधे-छिद्र।

भावार्थ—जैसे-जैसे सुन्दर वाद्य-ध्वनि बढ़ती गई तथा माधुर्य में वृद्धि होती गई, वैसे ही वैसे सब के हृदयों में कला के प्रभाव से अद्भुत विवशता आती जा रही थी अर्थात् सब व्यक्ति अपने आप को भूलते जा रहे थे।

इसलिए सम्पूर्ण ग्वाले तथा गोपियाँ बाँसुरी के संगीत-रस से भीग कर अपने शरीर को भी भूल गए। बाद में गाना रुक गया, वीणा सहित सम्पूर्ण वाद्य-यन्त्र रुक गये परन्तु मुरली का अपूर्व स्वर नाद करता रहा।

उस समय प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में यह विश्वास होता था कि कृष्ण की वंशी को वशीकरण मंत्र से फूंक दिया गया है। उसके सातों छेद मानो प्राणियों को मुग्ध कर देने के सुन्दर भडार हैं।

अलंकार—११६वें पद में उपमा।

पुत्र-प्रिया ... ... विलोको ॥११७-११९॥

शब्दार्थ—उर-वेधक=हृदय को वेधने वाली। मुद-मत्त=आनन्द विभोर।

भावार्थ—श्रीकृष्ण ने सुन्दर रागों तथा उनकी प्रेमिकाओं रागनियों को गाया। इस प्रकार जन-समुदाय के सम्मुख राग-रागनियों का स्वरूप उपस्थित किया। कृष्ण ने विभिन्न सुन्दर व हृदय-वेधक तानें ले लेकर अत्यन्त मनोहर क्रीड़ाएँ कीं।

तत्पश्चात् श्रेष्ठ मुरली की तानें अकस्मात् रुक गईं और सम्पूर्ण जनसमुदाय की चेतना लौट आई। आनन्द की ध्वनि से भरी हुई सब दिशाएँ अब भी हजारों कंठों से गूंजने लगीं।

सब को देख कर श्रीकृष्ण आनन्द-विभोर हो बोले—सुन्दर चाँदनी में वन की शोभा देखिए। अपने घरों से इन कुंजों में आना सफल करो। इस छविपूर्ण प्रकृति के गौरव को दृष्टिगत करो।

पृष्ठ २१० बीसों ... ... भावुकों का ॥१२०-१२२॥

शब्दार्थ—कला-कर=चन्द्रमा। छवि-गर्विता=रूप का गर्व करने वाली प्रिया। प्रफुल्लतम=अत्यन्त प्रसन्न।

भावार्थ—स्त्रियों के अनेकों अपूर्व दल वहाँ थे और इसी प्रकार पुरुषों के भी अनेक दल थे। स्त्री-पुरुषों के मिले-जुले दल भी हजारों थे। वे कृष्ण की बातें सुन कर उत्साहित हो गये।

सम्पूर्ण दल आनन्दित होकर वन में फैल गए। वे अनेकों दृश्य देख कर सुख अनुभव करने लगे। कई किसी नई वेल को देख कर अपना हृदय न्योछावर कर देता था तो कोई चन्द्रमा की कला का यशोगान करने लगा।

कोई अपनी प्रियतमा की अपूर्व कांति देख कर उसे बड़ प्रेम से चन्द्रमुखी कह कर सम्बोधित करता था। फिर भी जब उसकी रूठी हुई गर्वीली प्रियतमा उसका तिरस्कार कर देती थी तो सब भावुक लोग अत्यन्त प्रसन्न हो उठते थे।

जा कूल ... ... प्रिया के ॥१२३-१२५॥

शब्दार्थ—अलि-दारु वेधी=लकडी को काटने वाला भंवरा। उद्दाम=महान। विच्छिन्न हो=बिछुड़ कर। चय=समूह।

भावार्थ—प्रेमियों का दल जब निर्मल तालाव के किनारों पर जाकर लकड़ी तक को काट देने वाले भंवरों को प्रेम के कारण कमलिनियों में बंद देखता था तो उसे महान प्रेम की यथार्थ महिमा का ज्ञान हो जाता था।

बहुत सी गोपिकायें अपने दलों से बिछुड़ कर सुन्दर स्थानों पर स्वतन्त्रता से घूमती थीं अथवा चाँदनी से धुले स्थानों पर बैठ कर आनन्द से मधुर वार्त्तालाप करती थीं।

कोई अपने हाथ से फूलों से लदी लता को हिला कर पुष्प-समूह की वर्षा करता और प्रसन्न होता था जब कि कोई पुष्पों तथा पत्तों से लदी मनोहर शाखा को अपनी प्रियतमा के हाथों में रख रहा था।

पृष्ठ २११—आ मंद ... ... वधू ने ॥१२६-१२८॥

शब्दार्थ—मत्त=भरपूर्ण। क्रीट=मुकुट। अर्कजा=यमुना। मयंक=चन्द्रमा। शाटी=साड़ी।

भावार्थ—मनमोहक कृष्ण इस गोप-मंडली में धीरे-धीरे आकर मधुर वार्त्तालाप करते थे अथवा भाव भरे स्वर में माधुर्य मिला कर अमृतमयी बाँसुरी बजा रहे थे।

प्रकाश से कीर्तिमान पर्वत की श्रेणियाँ उन शोभा देखने वाले दर्शकों

को दिखाकर श्रीकृष्ण कहते थे— देखिए,पर्वतराज गोवर्धन के शीश पर अपार प्रकाशवान चन्द्रमा मणि से जड़ित मुकुट जैसा प्रतीत होता है।

प्रवाह पूर्ण, निर्मल व काली यमुना में तारों सहित चन्द्रमा की छाया देख कर प्रायः श्रीकृष्ण सोचते थे कि प्रसन्न वनभूमि रूपी वधू ने रत्न जड़ित काली साड़ी पहन रखी है।

अलंकार—उत्प्रेक्षा तथा रूपक।

ज्योतिमयी ... ... दिखाता ॥१२९-१३१॥

शब्दार्थ—भाखते=कहते। मलिनान्तरों=मलिन हृदय वालों का।

भावार्थ—अत्यन्त प्रकाशवान, फूलों से लदी अतः हँसती हुई सी लता को सुन्दरता से किसी वृक्ष से लिपटी हुई दिखा कर श्रीकृष्ण कहते थे कि पति में अनुरक्त तथा उस पर आश्रित स्त्रियों का जीवन कितना आनन्दमय होता है।

प्रकाश से सुशोभित वृक्ष समूह के नीचे छाये हुए अन्धकार को हाथ से दिखा कर श्रीकृष्ण कहते थे कि कुटिल हृदय वाले व्यक्ति का बाहरी रूप अत्यन्त सुन्दर दिखाई देता है।

इतने मनोहर और कांतिमान समय में भी अत्यन्त उदास कमलिनी को देख कर श्रीकृष्ण कहते थे कि कुलीन स्त्रियों को पति विना अन्धकार ही अन्धकार अर्थात् निराशा दिखाई पड़ती है।

विशेष—रात्रि को कमलिनी का स्वामी सूर्य उपस्थित नहीं होता अतः वह नहीं खिलती।

पृष्ठ २१२—फूले ... — मुक्ता ॥१३२-१३४॥

शब्दार्थ—अंक पले=गोद में पले। ककुभ=दिशा। हृष्ट=प्रसन्न। रंजन-कारिणी=कांति प्रदान करने वाली।

भावार्थ—तालाबों में विकसित कमलों को देख कर कृष्ण यह सुन्दर उदाहरण सब को सुनाते थे—अपनी गोद में पले चन्द्रमा का विकास देख कर यह जल-राशि कमलों के बहाने अपनी प्रसन्नता प्रकट कर रहा है।

प्रत्येक स्थान पर चन्द्रमा की कांति फैली देख कर कृष्ण हर्षित हो कहते थे कि प्रत्येक धूलि कण को भी प्रकाशित करने वाली चाँदनी की शोभा तथा यश पृथ्वी व आकाश मे फैला हुआ है।

यदि कृष्ण पुष्पों तथा पत्तों पर शोभायमान ओस की बूदें प्रकाश से चमकती देखते तो आनन्द से कहते थे कि वन-देवियों ने चन्द्रमा की कला पर प्रसन्न होकर सुन्दर मोतियों को न्यौछावर कर दिया।

आपाद ... ... कला का ॥१३५-१३७॥

शब्दार्थ—आपाद मस्तक=सिर से पैर तक। अखी=वन। मृगांक=चन्द्रमा। ज्योति-आकर=प्रकाश की खान। भूषा=आभूषण।

भावार्थ—जब वे सिर से पैर तक खिले हुए सुन्दर पौधों को प्रसन्नता से देखते तो बताने लगते—चन्द्रमा की कला से प्रसन्न होकर ही मानो ये नये पौधे फूले नहीं समा रहे हैं।

चन्द्रमा को दिखा कर कृष्ण इस प्रकार कहते थे—सौन्दर्य रूपी पृथ्वी का यह सुनहरी सुमेरु पर्वत है। आकर्षण रूपी वन का यह कल्प वृक्ष है। यह चन्द्रमा आनन्द रूपी सागर की श्रेष्ठ मणि है।

यह चन्द्रमा प्रकाश का पुंज, अमृत का समुद्र, शोभा का भंडार, रात्रि का प्रिय पति, प्रकृति रूपी सुन्दरी के मस्तक का सुन्दर आभूषण तथा अतीव सुन्दर कला का तो सर्वस्व है।

अलंकार—१३६वें में रूपक।

पृष्ठ २१३—जैसी ... — कढ़ेंगे ॥१३८-१४०॥

शब्दार्थ—शर्वरी=रात्रि। कढेंगे=निकलेंगे।

भावार्थ—यह रात्रि जितनी मनोरम थी, उतनी पहले कभी किसी मानव-नेत्र ने नहीं देखी थी। इस रात्रि में जैसा आनन्द रूपी रस-प्रवाह बहा वैसा ब्रजभूमि में कभी नहीं बहा था।

इस महान रात्रि में वाद्य-यन्त्र – बीन, मृदंग तथा मुरली आदि जितने मधुर बजे, जैसा सुन्दर नृत्य हुआ, जितना अनुपम गायन हुआ तथा जितना

प्यारा वातावरण बना, उसकी प्रशंसा करोड़ों मुखों से भी नहीं की जा सकती।

जिसने कृष्ण के मुख की अपूर्व शोभा देखी है, जिसने मन लगा कर वह मुरली-स्वर सुना है, जिसने इस रात्रि में कृष्ण का विहार देखा है, उसके हृदय से कृष्ण कैसे निकल सकेंगे ?

अलकार—१३९ में अतिशयोक्ति।

हो के ... ... कोई ॥१४१-१४३॥

शब्दार्थ—विभिन्न=अलग। कर=किरण। पसीजता है=दया आती है। परितोष=सान्त्वना।

भावार्थ—चाहे सूर्य की किरणें बदल जायें और अपनी उष्मा त्याग दें, चाहे सूर्य की किरणें अपनी मनोहरता को छोड़ दे तब भी ब्रजभूमि के मनुष्यों के हृदय से कृष्ण की मधुर व आकर्षक प्रतिभा नहीं निकलेगी।

वही यमुना अब भी बह रही है, उसका जल तथा प्रवाह भी पहले जैसा ही है। कुजों में पहले जैसा ही सौन्दर्य है तथा वही वनभूमि है। वही पुष्प तथा पत्ते हैं तथा पहले जैसी ही ब्रजभूमि है अर्थात् सब कुछ पहले की तरह है परन्तु कृष्ण के बिना वे पहले जैसे प्रिय नहीं लगते।

कोई दु:खी व्यक्तियों को देख कर पिघल जाता है, कोई दु:ख के कारण स्वयं रो पड़ता है, कोई समझा-बुझा कर सान्त्वना देना चाहता है पर सच्चा हितैषी व्यक्ति कोई नहीं है (जो कृष्ण को यहाँ ले आये)।

पृष्ठ २१४—सच्चे ... ... कृपाधिकारी ॥१४४॥

शब्दार्थ—भूरि=बहुत।

भावार्थ—हे ऊधव ! मैं तुम्हारी दासी तुम से यही विनती करती हूं कि तुम ब्रजभूमि के वास्तविक हितैषी बनो अर्थात् कृष्ण को ब्रज में ले आओ। ब्रजवासियों के समान कोई भी दु:खी नहीं होगा। हम (कृष्ण बिना) अनाथ के समान हैं तथा आपकी बहुत कृपा के योग्य हैं।

बातों ... ... सुनती ॥१४५॥

शब्दार्थ—स्वकीया=अपनी।

भावार्थ—बातें करते करते सम्पूर्ण दिन बीत गया परन्तु गोपियाँ नहीं उकताईं। वे अपनी पीड़ाओं को पहले की तरह ही सुनाती रहीं। सैंकड़ों वे गोपियाँ, जो किनारे पर बाद में आईं, अपनी व्यथाओं को बहुत उत्कंठित होकर सुनाती रहीं।

परन्तु ... ... किया ॥१४६॥

शब्दार्थ—आगता=आती। बुद्धि-निधान=बुद्धिमान। आलोचित=आलोच्य विषय अर्थात् वार्त्तालाप का विषय। वृत्त=वृत्तान्त।

भावार्थ—परन्तु संध्या का आगमन होता देख कर कृष्ण के बुद्धिमान भ्राता, ऊद्धव, ने सम्पूर्ण गोपिकाओं को उपदेश देकर आलोच्य विषय को समाप्त किया।

तदुपरान्त ... ... विदा हुए ॥१४७॥

शब्दार्थ - पावन=पवित्र।

भावार्थ उसके पश्चात् उस दिव्य तथा पवित्र प्रेम की अत्यन्त प्रशंसा करते हुए तथा ब्रज की वधुओं को समझा-बुझा कर ब्रज के आभूषण, कृष्ण के भ्राता ऊद्धव वहाँ से विदा हो गए।

———

पंचदश सर्ग

पृष्ठ २१५—छाई ... — ... व्यथा से ॥१-३॥

शब्दार्थ—भ्रमित= भूली हुई। विटपचय=वृक्ष-समूह।

भावार्थ—एक दिन प्रातःकाल फूलों और पत्तों में मधुर शोभा छाई हुई थी। अत्यधिक तन्मय होकर ऊद्धव कुंजों में विहार कर रहे थे। इसी अपूर्व शोभाशाली समय में एक बालिका दृष्टिगोचर हुई। वह मनों भावों में भटकी हुई प्रतीत होती थी।

उसे पुष्पों आदि से बातें करते देखकर, तथा पागलों की तरह विचित्र कार्य करते देखकर, उसका रहस्य लेने के उद्देश्य से ऊद्धव उत्सुकतावश कुंजों में वृक्ष-समूह की ओट में चुपचाप बैठ गए।

बालिका के दोनों नेत्रों के सम्मुख अनेक पुष्प थे। वे सूर्य की किरणों में विकसित होकर शोभायमान थे एक पुष्प अधिक छविशाली था, उसमें अपूर्व लाली थी। वह बालिका उसके समीप जाकर बड़ी वेदना से कहने लगी:—

आहा ... ... हो गई है ॥४-६॥

शब्दार्थ—सुषमा=शोभा। अटन= भ्रमण। परसा=स्पर्श किया।

भावार्थ—हे पुष्प ! तुझ पर कितना अपूर्व माधुर्य छाया हुआ है। तू कितना रसयुक्त व शोभाशाली है। मेरे मन मे आता है कि तुझे चूम लूं तथा अपने हृदयस्थल से लगा लूं।

आज तू इतना माधुर्यपूर्ण दिखाई पड़ रहा है, उसका क्या कारण है ? क्या आज मेघ जैसे शरीर वाले कृष्ण ब्रजभूमि मे आने वाले हैं ? अथवा तूने उन्हें कुजों में भ्रमण करता देखा है ? अथवा उन्होंने तेरे समीप आकर आनन्द से अपने हाथ द्वारा तेरा स्पर्श किया है ?

तेरी प्रिय, मधुर व रसयुक्त लालिमा से ऐसा प्रतीत होता कि तेरा हृदय भी कृष्ण में ही निमग्न है। मैं इतनी व्याकुल हो रही हूँ पर तू बोल भी नहीं रहा है ? क्या तेरी रसपूर्ण जिह्वा बोलने में असमर्थ हो गई है।

पृष्ठ २१६—हा ! ... ... — सखा के॥ ७ ६॥

शब्दार्थ—काठ=लकड़ी, अतः कठोर पदार्थ। पातकी=पाप। पाटल=गुलाब। सरबस=सर्वस्व।

भावार्थ—हाय ! मैं भोली-भाली तेरे द्वारा, किस प्रकार ठगी जा रही हूं। जो तेरी शब्द रहित लम्बी पंखुड़ी को जिह्वा बता रही हूं ? तुझे दया कैसे आयेगी ? तू मेरा कष्ट कैसे दूर कर सकेगा ? तूने कांटों में से जन्म लिया है अतः कठोर पदार्थो का सम्बन्धी है।

तत्पश्चात जूही के समीप आकर वह बेचैन बालिका इस प्रकार बोली—पापी गुलाबों ने मेरी बातें बिलकुल नहीं सुनी। (वास्तव मे) नारी हृदय की पीड़ा का नारी ही समझ सकती है। हे जूही ! तू विकसित मुख वाली अर्थात् प्रसन्न चित्त है अतः तू ही मुझे शान्ति प्रदान कर।

तेरी मधुर सुगन्धि मुझे सदैव ही आकर्षित करती थी पर अब वह ही मुझे रुचिकर प्रतीत नहीं होती मुझे सत्य बात बता दे कि तेरी सुगन्ध बदल गई है अथवा तू स्वय ही बदल गई है अथवा (हमारी तरह) तेरा भी सर्वस्व ऊद्धव के मित्र कृष्ण के साथ चला गया।

अलंकार—७वें पद में काव्यलिंग।

छोटी-छोटी ... — ... ... डूबी ॥१०-१२॥

शब्दार्थ—वंचना=ठगा जाना। खचित=युक्त।

भावार्थ—अपनी छोटी-छोटी श्यामवर्ण की प्रिय पत्तियों में जब तू आभ से अतीव विकसित होती थी तो ऐसा प्रतीत होता था मानो तारों से जगमग आकाश शोभायमान हो। हाय ! तू उस सुन्दर शोभा से आज रहित क्यों हो गई है ?

तेरे सम्पूर्ण पत्तों में पहले की तरह श्यामवर्णता दृष्टी गोचर होती है। तू अब भी अन्य सब लताओं से अधिक विकसित है परन्तु अब तुझ में पहले जैसी सुन्दरता नहीं देख पाती। तेरी यह दशा कैसे हो गई, क्या मुझे नहीं बताओगी ?

मुझे तेरे में कई बातें पहले की अपेक्षा अधिक जान पड़तीं हैं। तू मुझे बेचैन क्यो कर रही है ? मेरी पीडा क्यों बढ़ा रही है ? मेरा ठगा जाना देखकर तुझे दुःख क्यों नहीं होता ? क्या तू भी (कृष्ण के) निष्ठुरतापन मे रगी हुई है ?

अलकार—१०वें पद में उपमा।

पृष्ठ २१७—हो-हो ... ... न देगी ॥१४-१५॥

शब्दार्थ—भुक्त भोगी=अनुभवी।

भावार्थ—हे जूही ! क्या तू आश्चर्य चकित होकर मेरे कष्टों को सुन रही है। हे सुन्दर मुख वाली जूही, मैं इतना रहस्य भी नहीं जान पा रही, और क्या आशा तुझ से कर सकती हुं ? तू मेरे लिए तो निराशा की प्रतिभा बन गई है।

जो व्यक्ति सुखी होता है वह दूसरों की पीड़ा को नहीं जान पाता

यदि उसने स्वयं अनुभव न किया हो। तू प्रसन्नता से फूल रही है तथा हरे पत्तों के मध्य शोभायमान है अतः तू उदास पुष्प की व्यथा को कैसे समझ सकेगी ?

तू प्रेम के रंग से रहित है अथवा तुझ पर भी प्रेम का रंग चढ़ा है ? क्या तू मुझे प्रेम-भरी दृष्टी से नहीं देखेगी ? हे बहिन चमेली ! मैं तुझ से एक दो प्रश्न पूछना चाहती हूं, बता, करुणा करके मुझे उत्तर देगी न।

अलंकार—१३वें पद में उत्प्रेक्षा।

थोड़ी ... ... आन्दोलिता है ॥१६-१८॥

शब्दार्थ—वृन्दा-विपिन-पति=वृन्दावन के स्वामी, कृष्ण। व्यंजिका= प्रकट करने वाली। कल=चैन।

भावार्थ—तेरी प्रसन्नता प्रदान करने वाली अर्थात् सुन्दर पंखुड़ी के मध्य जो थोड़ी सी लालिमा है, क्या वह कृष्ण के प्रति तेरा प्रेम प्रकट कर रही है। यदि ऐसा है तो तू भी अपनी जिह्वा खोल कर बता दे कि प्रिय कृष्ण के जाने से अत्यन्त शोक में मग्न है।

मेरा हृदय वेदना की पीड़ा से पागल हो रहा है अर्थात् मैं पागल सी हो रही हू। मेरे हृदय में अनेकों पीड़ाएं व्याप्त हो गई हैं। मुझे दिन में चैन प्राप्त नहीं होता और रात्रि को उकता जाती हूं। मेरे नेत्रों के अश्रुजल से मेरा सम्पूर्ण मुख भीग जाता है।

क्या तू भी रात्रि को (कृष्ण के विरह में) रोती रहती है जो पत्तों में ओस की इतनी बूदें इकट्ठी हो गई हैं। अपने हृदय की व्यथा से काँपती रहती है अथवा मधुर-वायु के झोंकों से हिल-डुल रही है।

विशेष—कल्पनाएं नवीन हैं तथा सुन्दर हैं।

पृष्ठ २१८—तेरे पत्ते ... ... बेला ॥१६-२१॥

शब्दार्थ—आमोदिका=प्रसन्न करने वाली। दयिते=प्रिये। ईदृशी=ऐसी।

भावार्थ—हे चमेली ! तेरे पत्ते बहुत सुन्दर हैं तथा तू बहुत कोमल है। पुष्पों के परिवार में तेरा पौधा अत्यन्त अपूर्व है। मेरे नेत्र तुझे देखने

के लिए ललचते रहते हैं। हाय ! तू भी मेरे व्याकुल हृदय को आनन्द क्यों नहीं प्रदान करती।

हाय ! तू मुझ से बिल्कुल भी नहीं बोली और न ही कुछ बातें बताईं। मेरा हृदय यह कहता है कि तू कृष्ण के ध्यान में तन्मय हो गई है। मेरे प्रिय कृष्ण तुझे हार्दिक प्रेम करते थे, हे प्रिय चमेली ! भला तेरी ऐसी दशा क्यों न हो ?

हे बेला के पुष्प ! न जूही कुछ बोली और न ही चमेली ने कुछ प्रेम प्रकट किया। मैंने अपने दोनों नेत्रों से गुलाबों का रंग भी देखा है। मुझे ऐसी आशा भी नहीं है कि तू मुझ पर दया करके बोल पड़ेगा तू भी निष्ठुरता की साक्षात् प्रतिमा है।

मैं पूँछूगी ... ... रंग होता ॥२२-२४॥

शब्दार्थ—स्नेहाम्बु=प्रेमजल। अन्यथाकारिता=उल्टापना। ननुवा=नहीं तो।

भावार्थ—(यद्यपि तू बडा निष्ठुर है) तथापि मैं अपने प्रश्न तुझ से अवश्य पूँछूगी। यदि तू मुझे ठीक-ठीक उत्तर देगा तो तेरी बडी कीर्त्ति फैलेगी। अनेकों पुरुष प्रेम से रहित क्यों होते हैं ? उनका हृदय प्रेम के जल से सिंचित क्यों नहीं होता ?

मैं तेरे समीप आकर तनिक भी आनन्द प्राप्त नहीं करती, इसके विपरीत तेरी तीव्र सुगन्धि मुझे अत्यन्त दुःखी बनाती है। हे बेला के पुष्प ! तू ही बता कि माधवी लता की सुगन्धि क्यों सुखदायक होती है जब कि तेरी सुगन्धि कष्टदायक होती है।

तू सम्पूर्ण पुष्प-समूह में सब से अधिक उज्जवल है। (श्वेत वर्ण सात्विकता का द्योतक होता है) यह अधिक अच्छा होता कि तेरी वृत्ति भी सात्विक होती। हाय ! प्रकृति के स्वभाव में उल्टापन भी होता है (तभी तो तेरा वर्ण श्वेत होते हुए भी तू सात्विक वृत्ति का नहीं है)। तुझ जैसे कठोर हृदय वाले का वर्ण तो काला होना चाहिए था।

अलंकार—२२वें पद में रूपक।

पृष्ठ २१९—नाना ... ... जान लेगा ॥२५-२७॥

शब्दार्थ — तदाकार=उसी का स्वरूप । कुन्त=भाला ।

भावार्थ— मैं अपने कृपण के निष्ठुर हाथों से प्रतिदिन कष्ट पा रही हूं । तुझ में भी निष्ठुरता पूर्णतया भरी हुई है । मैं अत्यन्त उदास होकर तुझ से पूछती हूँ कि निष्ठुर व्यक्ति अन्य व्यक्तियों को क्यों सताते हैं ?

हाय ! तू अब भी नहीं बोला ? तू अतीव क्रूर है । मैं भी कितनी लाचार होकर तुझ से व्यर्थ ही बोल रही हूँ । जब दुर्भाग्य होता है और बुरे दिन आते हैं तब इस पृथ्वी पर कोई किसी का नहीं होता अर्थात् सब छोड़ जाते हैं ।

गुलाब के पुष्पों ने जो प्रेम के ही आकार तथा स्वरूप वाले हैं (लाल वर्ण के हैं, मेरे हृदय की पीड़ा को नहीं समझा, तो तू श्वेत वर्ण वाला तथा भाले के स्वरूप वाला ही क्यों बोलेगा तथा मेरे पीड़ित हृदय के कष्टों को कैसे समझ सकेगा ?

चम्पा ... ... असम्मानिता है ॥२८-३०॥

शब्दार्थ —भृंग=अलि=भँवरा । असम्मानिता=अपमानित ।

भावार्थ — हे चम्पा ! तू खिले हुए मुँह वाली तथा रंग-रूप वाली अर्थात् सुन्दर है । यद्यपि एक अच्छे पुष्प की भाँति तुझ में सुगन्धि पाई जाती है तथापि एक भी भँवरा भूल कर भी तेरे समीप नहीं जाता । आखिर तुझ मे ऐसी क्या कमी तथा अभाव है ?

क्या तेरे हृदय में इस बात की कुछ चिन्ता है ? क्या तूने इस बात का तनिक भी रहस्य जान लिया है । हे सुन्दरी ! तूने भँवरे का ऐसा क्या अपराध किया है कि तू मेरे समान प्रिय के प्रेम से रहित है ।

अपने सम्पूर्ण अंगों में मधुर धूलि तथा पराग को चिपकाये जो पुष्पों पर आकर विधिपूर्वक गर्भाधान करता है, जो मधुर रस का रसिक है तथा तथा गंजता रहता है, ऐसे प्रिय सहृदय भँवरे से तू अपमानित होती है अर्थात् वह तेरे पास नहीं आकर तेरा अपमान करता है ।

विशेष—एक पुष्प का पराग दूसरे पुष्प पर पड़ने से फल उत्पन्न होते हैं। यह कार्य वायु, तितली तथा भ्रमर करते हैं।

पृष्ठ २२०—जो आँखों ... ... रंगेगा ।।३१-३३।।

शब्दार्थ—कुन्द=एक श्वेत पुष्प।

भावार्थ—जिसकी सुन्दर शोभा प्रतिमा के समान नेत्रों में अंकित हो जाती है, जो हृदय रूपी सागर को आन्दोलित करने के लिए पूर्णिमा का चन्द्रमा है, जो मुरली के मधुर शब्द से अमृत-का प्रवाह बहाता है, ऐसे कृष्ण की विरहाग्नि में जल रही हूं।

हे वहिन ! मेरी तथा तेरी अनेक व्यथाएँ एक समान हैं अतः तू मेरे समीप आजा। मैं तुझे गले से लगाकर रोऊं। इस पृथ्वी पर अनेकों वे स्त्रियाँ भी जन्म लेती हैं जो अपना अपराध जाने बिना रातदिन रोती रहती हैं।

मैंने पृथ्वी पर केवल श्वेत रंग ही ऐसा पाया है जिसे प्रयत्न करने से किसी भी रंग में रंगा जा सकता है। हे कुन्द ! जितनी अपूर्व श्वेतता तुझ में है। ऐसी मैंने अन्यत्र नहीं देखी। क्या तू भी मेरे हृदय के रंग में स्वयं को रंगेगा ?

क्या है ... ... पा सकेगा ।।३४-३६।।

शब्दार्थ—शोकोपहत=शोक से नष्ट। द्रवेगा=पिघलेगा।

भावार्थ प्रसन्नता से खिल उठना क्या होता है, इसे पुष्प ही जान सकते हैं। तू पत्तियों के बीच में विकसित कितना सुन्दर प्रतीत होता है। परन्तु यदि विधाता की दुर्बुद्धि से कोई कली विकसित हुए बिना ही मुरझा जाये तो कितनी पीड़ा होती है।

हे कुन्द ! प्रेम में मग्न मेरे हृदय रूपी कली प्रतिदिन मुरझाती जा रही है, वह तनिक भी विकसित नहीं हो पाई। क्या तू इसे अपने समान विकसित बना देगा अथवा इसके समान तू शोक में नष्ट प्राय हो जायेगा।

पर वे दिन पुनः नहीं आयेंगे जब तू मेरे हृदय में उसकी प्रफुल्लता

को तनिक भी ला सके। हाँ, यदि मुझे देखकर तेरा हृदय तनिक भी पिघलेगा तो मेरे हृदय की उदासी उसे प्राप्त हो जायगी।

पृष्ठ २२१—हो जावेगी ... ... बनाया ॥३७-३६॥

शब्दार्थ—प्रथित=प्रसिद्ध। अभिधा=नाम। चित्तामोदी=हृदय को प्रसन्न करने वाली। केतकी=केवड़ा।

भावार्थ—हे कुन्द ! यदि तू किसी दुखनी की पीड़ा से दुःखी नहीं होगा तो तेरी प्रसिद्ध कोमलता पर सन्देह हो जायेगा। यदि तू उदास हृदयों को पाकर उदास नहीं होगा तो तेरा नाम, सुन्दर मन वाला अर्थात् सुमन कैसे सिद्ध होगा ?

हे केतकी ! जिसने (विधाता ने) तुझे सोने के रंग वाला शरीर तथा हृदय को आनन्दित करने वाली सुगन्धि दी है उसी ने तुझे काँटों से क्यों भर दिया है तथा इतनी धूलि क्यों दी है कि भमर की आखें भी बंद हो जायें ?

जिसने यमुना जैसी सुन्दर नदी, देखने योग्य कुंजें, प्रिय वृन्दावन, सुन्दर वृक्ष, अपूर्व लता एवं शोभाशाली पक्षी दिए हैं, हाय ! उसी ने ब्रज-भमि को कृष्ण से वंचित किया है।

क्या थोड़ा ... ... भरा है ॥४०-४२॥

शब्दार्थ—अंधता=अन्धापन। उभय=दोनों। जीवनोद्यान=जीवन रूपी बाग।

भावार्थ—हे सखि ! क्या तू इस बात का थोड़ा सा रहस्य भी जान सकी है ? क्या विधाता की मूर्खता इससे प्रकट नहीं होती ? अर्थात् प्रकट होती है। यदि इस विश्व में विधाता की कुटिलता न मिली होती तो यह सुख का भंडार व अत्यन्त मनमोहक होता।

मैंने प्रायः देखा है कि भँवरा यदि तेरे पास आता है तो उसे अच्छा परिणाम प्राप्त नहीं होता। तेरी धूलि से उसके दोनों नेत्रों में अन्धापन आ जाता है तथा कांटों से उसके दोनों पंख कट-फट जाते हैं।

हाय ! प्रेम करने वालों को इतनी पीड़ा क्यों होती है ? प्रेम का मार्ग इतना कष्टमय तथा रुकावटों से भरपूर क्यों होता है ? जीवन-रूपी उपवन की शोभा को बढ़ाने वाला प्रेम रूपी जो वृत्त है, वही इतने दुःख-रूपी कांटों से क्यों भरा हुआ ?

पृष्ठ २२२—पूरा ... ... रँगूगी ॥४३-४५॥

शब्दार्थ—बन्धूक=गुडहल । पक्वता=पक्कापन । महर-सुत=नन्द के पुत्र, कृष्ण ।

भावार्थ—हे गुड़हल के पुष्प ! (क्योंकि तेरा रंग लाल है) तेरा हृदय अनुराग की लालिमा से रंगा हुआ है । तू प्रेम-मार्ग की मर्यादा समझ सकता है । तेरे सुन्दर शरीर की गहरी लालिमा से प्रतीत होता है कि तू भी अपने पति सूर्य के रंग (लाल) में पूर्णतया रंगा हुआ है ।

तेरे जैसे पुष्प प्रेम-मार्ग के पथिक के रूप में जन्म लेकर पृथ्वी पर प्रेम की परिपक्वता प्रकट करते हैं। तुझे देख कर मुझे अत्यन्त सुख प्राप्त होता है । क्या तू मेरी अनेकों उचित प्रार्थनाओं को सुनेगा ।

मेरा शरीर तो गोरा है पर कृष्ण मेघ के समान काले शरीर वाले हैं अतः हम दोनों के मध्य यह एक असमानता आ गई है । मेरे और कृष्ण के मध्य यह अन्तर किस प्रकार दूर हो सकेगा ? जिस प्रकार तू अपने प्रिय सूर्य के रंग (लाल) में रंगा हुआ है, उसी प्रकार मैं भी मेघ शरीर वाले कृष्ण के काले रंग में स्वयं को रगूँगी ।

पूरा ज्ञाता ... ... में जो ॥४६-४७॥

शब्दार्थ—युक्ति=उपाय ।

भावार्थ—हे प्रिय पुष्प ! मैं तुझे प्रेम विषय का पूर्ण जानकर समझती हूँ अतः तुझ से उपाय पूछती हूँ । यदि मेरा शरीर भी कृष्ण के रंग में नहीं रंगा गया तो मेरे हृदय को शान्ति प्राप्त नहीं हो सकेगी ।

तू पुष्प है फिर भी तुझ में प्रेम की परिपक्वता है जब कि मैं मनुष्य हूँ तब भी मेरे प्रेम में कमी है । यदि मेरे सम्पूर्ण अंगों में कृष्ण का काला रंग नहीं छा जावेगा तो मेरे लिए यह अत्यन्त कष्ट व लज्जा की बात होगी ।

पृष्ठ २२३—खिला ... ... — रंग में ॥४८-५०॥

शब्दार्थ—वृन्त=डंडी। विनोद-वर्द्धिनी=आनन्द बढ़ाने वाली।

भावार्थ—सुन्दर लता की गोद में विकसित काले रंग के पुष्प ! तू मुझे बता; किस पूर्व जन्म के पुण्य से तुझे यह अत्यन्त प्यारी, कोमल व श्याम वर्णता मिली है।

तेरे निकट डंडो की हरियाली वहुत सुहावनी है। तेरे मध्य भाग की सफेदी अतीव मनोरम है। अग्रभाग में सुन्दर श्याम रंग है जो नेत्रों को अत्यन्त आनन्द प्रदान करने वाला है।

पर तेरे अनेक रंगों को देख कर हृदय में वहुत पीड़ा होती है। यदि तू केवल काले रंग का होता तो विश्व में तू अलौकिक पुष्प होता।

तथापि ... ... आनना ॥५१-५३॥

शब्दार्थ—श्यामलांगता=काले अंग होना। सु-आनना=सुन्दर मुख वाली।

भावार्थ—फिर भो तू पूर्णतया दुर्भाग्यशालिनी नहीं है क्योंकि काला रंग कुछ तो चढ़ा हुआ है ही। दुर्भाग्यशाली तो वह है जिसके शरीर पर कहीं भी काला रंग शोभायमान नहीं है।

हे पुष्प ! यदि तुझ में थोड़ी सी भी सुगन्धि नहीं होती तो भी अपने काले रंग के कारण तू ब्रजवासियों की दृष्टि में सदा सम्मान प्राप्त करता रहेगा।

हे सुन्दर मुख वाली सूर्य मुखी ! जिस ओर भी सूर्य का निवास होता है, उसी दिशा में घूम कर तू उसे बड़े शौक से निहारती है।

पृष्ठ २२४—अपूर्व ... ... वियोग की ॥५४-५६॥

शब्दार्थ—मदीय=मेरे। मुखारविन्द=मुख-कमल। निशान्त=रात्रि का अन्त, प्रातःकाल। विभावरी=रात्रि।

भावार्थ—मेरे भी ऐसे ही दिन थे (अर्थात् जब मैं सदा कृष्ण को ही देखती रहती थी)। इसलिए उस समय मैं भी तुझ जैसी प्रसन्न होती थी जब कृष्ण के सुन्दर मुखकमल को मैं आनन्द से देखती रहती थी।

परन्तु अब मेरे पहले जैसे अच्छे दिन नहीं हैं और न मैं पहले के समान प्रसन्न चित्त हूँ। जिस प्रकार तू रात्रि को कुम्हला जाती है, उसी प्रकार मैं भी उदास हूँ।

रात्रि के अन्त में, अतः प्रातःकाल में तू अपने प्रिय पति से पुनः सदैव की भाँति प्रसन्न होकर मिलती है। हे प्रिय सूर्यमुखी! पर वियोग की यह मेरी गहन रात्रि कभी भी समाप्त नहीं होगी।

नृलोक ... ... विपत्ति का ॥५७॥

शब्दार्थ—नृलोक=मनुष्य लोक, संसार। विपदावसान=विपत्ति का नाश।

भावार्थ—इस विश्व में वह बहुत सौभाग्यशालिनी है जिसकी विपदाओं का कभी न कभी नाश हो जाता है और वह सुख प्राप्त करती है। संसार में वह बहुत दुर्भाग्यशाली है जिसकी विपदाओं का कभी नाश ही नहीं होता।

कुवलय ... ... पड़ी है ।५८-६०॥

शब्दार्थ—कुवलय=कमल।

भावार्थ—हे भ्रमर! तू अभी-अभी कमल समूह में से निकला है। अत्यन्त खिले हुए प्रिय पुष्पों में भी तू विहार करता रहा है। अतः अब तू मालती की कुंज में मत जा। उकताती हुई मुझ दुखियारी की विपदाएँ सुन।

मैं पुष्पों के पास यह समझ कर आई थी कि वे पृथ्वी पर प्रसन्नता की प्रतिमा हैं (अतः मुझे भी प्रसन्नता प्रदान करेंगे) परन्तु हाय! वे मुझे क्या सुख प्रदान कर सकेंगे जब कि स्वयं अनेकों कष्टों से पीड़ित हैं।

मैंने अनेकों पुष्पों को मुरझाता पाया है, अनेकों पुष्पों को कीड़े खा रहे हैं। अनेकों के मुख पर वायु के थपेड़े लग रहे हैं और कितने ही पुष्पों की पंखुड़ियाँ पृथ्वी पर पड़ी हैं।

पृष्ठ २२५—तदपि ... ... वंचिता है ॥६१-६३॥

शब्दार्थ—भव-जनित=संसार में उत्पन्न होने वाले। सौम्यता=सुशीलता। कौतुकी=कौतक करने वाला।

भावार्थ—फिर भी इनमें मैंने बहुत गर्व देखा है। दुःखी मनुष्यों को देख कर ये उदास नहीं होते। किसी की पीड़ा देख कर इनका हृदय कष्ट नहीं अनुभव करता। संसार में उत्पन्न अनेकों का स्वभाव ही ऐसा है कि वे दूसरो के कष्ट से दुःखित नहीं होते।

हे भ्रमर! मैं तुझ में भी सुशीलता व सभ्यता नहीं देख पा रही। तू मेरे कष्टों को ध्यानपूर्वक नहीं सुन रहा। तू बहुत चंचल, धृष्ट तथा कौतुक दिखाने वाला है। तू किसी भी पुष्प पर थोड़े समय के लिए भी टिक नहीं सकता।

यदि तू अपनी गुंजार त्याग कर, धैर्यपूर्वक मेरी पीड़ा को कुछ समय के लिए भी सुनेगा तो तुझे मालूम होगा कि इस पृथ्वी पर एक बालिका प्रेम न पाकर कितनी व्याकुल है।

पृष्ठ २२५—अलि ... ... मूर्त्ति की है ॥६४-६६॥

शब्दार्थ—वपु=शरीर। मधुकर=भ्रमर।

भावार्थ—हे भ्रमर! यदि तू मेरी बात ध्यानपूर्वक नहीं सुनेगा तब भी आज मैं अपनी पीड़ा तुझ से कहूँगी। (कारण यह है कि) पृथ्वी पर जिनका वर्ण मैं काला पाती हूँ, उनसे कुछ कहने में मुझे आनन्द प्राप्त होता है।

पृथ्वी पर रहने वालों की तो बात ही क्या, आकाश में विचरण करते हुए कृष्ण के शरीर जैसी शोभा वाले जो बादल हैं, मैं उन्हें घंटों तक एक-टक दृष्टि से देखती हूँ और न जाने उनसे क्या-क्या कहती हूँ।

हे भ्रमर! सुन, तेरी श्याम-वर्णता कृष्ण के शरीर की अत्यन्त अपूर्व श्यामता जैसी नहीं है फिर भी मेरे नेत्र जब भी तुझे देखते हैं, तभी कृष्ण की प्यारी प्रतिमा का ध्यान आ जाता है।

पृष्ठ २२६—तब तन ... ... कंटकों से ॥६७-६९॥

शब्दार्थ—कटि=कमर। वपन=बोना। पटु=चतुर। कोप=कलि।

भावार्थ—तेरे शरीर पर जैसे पीले रेखा छविमान है, उसी प्रकार प्रिय कृष्ण की कमर में पीला वस्त्र (पीताम्बर) शोभित होता था। तेरी

गुंजार तथा गुन-गुन शब्द करना देख कर कृष्ण की सरस बाँसुरी का स्वर याद आ जाता है।

यदि विधाता ने इस संसार में विरह का सृजन किया था तो याद रखने की शक्ति निर्मित करके कौन सी बुद्धिमानी की ? यदि उसने स्मृति की रचना की ही थी तो उसे प्राणियों के हृदयों में कठोर पीड़ा बोने में चतुर क्यों बना दिया ?

हे भ्रमर ! तू इसी प्रेम-पाश में बंध कर कितनी छोटी-बड़ी विपत्तियाँ झेलता है। भाग्यवश तू कमलों की कलियों में बन्द हो जाता है। कांटों से कट कर बहुत कष्ट सहन करता है।

परनित ... ... इन्द्रियां हैं ।।७०-७२।।

शब्दार्थ—अनायास=सहसा। मति-शाली=बुद्धिमान।

भावार्थ—हे भ्रमर ! जितनी पीड़ा मुझे प्राप्त हो रही है, तुझे उस से बहुत कम कष्ट भोगना पड़ रहा है। यदि मेरा कष्ट तेरे शरीर के काले रंग के समान है तो तेरा दुःख तेरे शरीर की पीली रेखा की भाँति थोड़ा है।

अनेक बुद्धिमान व्यक्ति कहते हैं कि पुष्पों के सौन्दर्य से तेरा हृदय सहसा आकृष्ट हो जाता है। जबकि दूसरे विद्वान तेरे प्रेम का कारण पुष्पों के मधु अथवा सुगंध को बताते हैं।

हे भ्रमर ! यदि हम तेरे आकर्षण का कारण इन विषयों— रूप, गंध आदि को मानें तो तुझे यह मालूम होना चाहिए कि ये केवल तीनों इन्द्रियाँ— (नेत्र, नासिका, जिह्वा)—ही तुझे कष्ट प्रदान करती हैं।

पृष्ठ २२७—पर मुझ ... ... निर्दयी है ।।७३-७५।।

शब्दार्थ—ईदृशी=इस प्रकार की। चाव=शोक।

भावार्थ—पर मुझ निर्बल को पीड़ा पहुँचाने वाली पाँच इन्द्रियाँ हैं तथा तेरी तीनों इन्द्रियों से अधिक सजग व तीव्र हैं। इसके अतिरिक्त कितने ही सांसारिक छल-कपट मेरे साथ लगे हैं। भला, फिर क्यों न मेरी विपदाएँ अधिक व्याकुलता पहुँचाने वाली होंगी।

हे कृष्ण के मित्र भ्रमर ! जब हम इस प्रकार कष्ट में हैं तो तुझे कुछ दयालु होना चाहिए। प्रिय कृष्ण निष्ठुर बनकर हमारे नेत्रों से दूर हो गये हैं तू हमारे नेत्रों के सम्मुख ही कठोर मत बन।

हे भ्रमर ! तू नव-विकसित पुष्पों के पास आकर्षित होकर जाता है, गुंजार करता है और बड़े शौक से बैठ जाता है। तू मेरी पीड़ाओं को बिल्कुल नहीं सुनता, तू इतना क्रूर क्यों हो गया है।

कब टल ... ... श्यामता का ॥७६-७७॥

शब्दार्थ—मँडलाता=मँडराता ।

भावार्थ—हे भ्रमर ! एक वह दिन था जब कृष्ण के हटाने से भी नहीं जाता था और मस्त होकर मेरे मुख पर मँडराता रहता था और एक दिन आज है जब तू मेरी ओर देखता तक नहीं।

हे भ्रमर ! दूसरों का कष्ट कभी किसी ने बाँटा है ? अर्थात् नहीं बाँटा है। सभी परचित व्यक्ति केवल प्रेम प्रकट कर सकते हैं। हाय ! यदि तू इतना भी नहीं कर सका तो मैं समझ लूं कि यह सारा अपराध काले वर्ण का है अर्थात् काले वर्ण के व्यक्ति निष्ठुर होते हैं।

पृष्ठ २२८—कमल ... ... रुचिकारिता ॥७८-८०॥

शब्दार्थ—कु-कपाल=दुर्भाग्य। तरसा=वेग से।

भावार्थ—क्या कमल-नेत्र श्रीकृष्ण कल लौट आये ? क्या मेरे दुर्भाग्य की रेखा बदल गई ? अन्यथा सुरीली व अमृत की वर्षा करने वाली बाँसुरी बन में पुन: क्यों बज उठी है ?

विशेष:—उस बालिका को मुरली बजने का भ्रम हुआ है।

हे बाँसुरी ! सत्य बता दे कि किस तपस्या के प्रभाव से किस समय तुझे इतनी मधुरता, मादकता, कोमलता व सरलता मिली है ?

हे मुरली ! तुझ में माधुर्य, पवित्रता व सुन्दरता का वास है। इन गुणों के कारण तू किसे आश्चर्य चकित नहीं करती ? इन्हीं के कारण सम्पूर्ण पृथ्वीवासी तुझ पर आसक्त हैं।

निरख ... ... अनुरागती ॥८१-८३॥

शब्दार्थ—प्रतिपति=प्रभाव। पोर=गाँठ। कलता=सौन्दर्य।

भावार्थ—हे मुरली ! तेरे प्रभाव की व्यापकता देखकर मैं क्यों न कहूं कि तेरी आकर्षक पोर में सफलता, सुन्दरता तथा रुचिता विद्यमान है।

हे बाँसुरी ! (बता यदि ऐसा नहीं है तो) व्रज की गोपियाँ तेरे स्वर से क्यों व्याकुल हो जाती हैं ? पुलकित होती, प्रसन्न होती, मधुर-मधुर बोलती गोपियाँ तेरा स्वर सुनकर ही चैन क्यों नहीं पातीं अर्थात् बेचैन हो जाती हैं।

(यदि ऐसा नहीं है तब) तेरा स्वर किस मंत्र से सिद्ध है कि जिसे सुनते ही व्रज बालाएँ अत्यन्त व्याकुल होकर तथा पुलकित होती ठगी हुई सी, प्रेममयी होकर कृष्ण से मिलने के लिए घर छोड़ देती हैं।

पृष्ठ २२६—तब ... ... शीलता ॥८४-८६॥

शब्दार्थ— मोचती=छोड़ती । मदशालिता=मादकता। छिद्र-वती =छेद वाली अतः दोष वाली।

भावार्थ—तब व्रज की नव-वधुएँ व्याकुल होकर ठगी सी वन में कृष्ण को खोजतीं फिरती हैं। अपने दोनों नेत्रों से अश्रुजल गिराती हैं कृष्ण को देखने के लिए लालायित हो उठती हैं, काँप उठती हैं और कभी देखती रह जाती हैं।

हे प्यारी मुरली ! यदि तू अभी बजी थी तो पुनः बज क्योंकि तुझ जैसी मनोरम अन्य कोई नहीं है। परन्तु कृपया अपनी कुटिलता, कड़वाहट तथा मादकता को त्याग दे। (मुरली से कृष्ण की याद आती है अतः वह कड़वाहट व मादकता उत्पन्न करने वाली तथा कुटिल है।)

हे वंशी ! तुझमें अनेक छिद्र (अर्थात् दोष हैं !) हैं। यदि तू फिर भी सम्मान प्राप्त करने की इच्छुक है तो हे गौरवपूर्ण मुरली ! अपनी सरलता, सौजन्यता तथा मर्यादा को मत त्याग।

लसित ... ... हीनता ॥८७॥

शब्दार्थ—लसित=शोभित।

भावार्थ—हे वंशी ! तू अपनी तपस्या के प्रभाव से व्रज-देव कृष्ण के हाथ में सुशोभित है इस कारण से हम निर्बल नारियों को व्यर्थ ही मतसता और अपनी मूर्खता प्रकट मत कर।

मदीय ... ... मदंगजा ॥८८-९०॥

शब्दर्थ—मदीय=मेरी। रसोदरी=रस का भण्डार। कुसंगजा=बुरी संगति से उत्पन्न। मानसजा=मन से उत्पन्न। मदगंजा=मेरे अंगों से उत्पन्न।

भावार्थ—कुंजों में विहार करने वाली मेरी प्रिय कोयल ! मुझे बता कि तू मेरे निकट आकर क्यों कूक रही है ? क्या तू मेरे हृदय का भ्रम देखकर ही दुःखी, संकुचित और पीड़ित हो गई है ?

यह पुष्प के कुंजों का छल है (कि बाँसुरी का स्वर सुनाई पड़ा) अन्यथा अब अमृतमयी, आकर्षक तथा सरस कृष्ण की मुरली व्रजभूमि में क्यों बजेगी ? अर्थात् कभी नहीं बजेगी।

हे कोयल यदि तू मेरी अवस्था को देखकर पीड़ित हो गई है तो कहीं और मत जा। मेरे निकट बैठकर बुरे सग से, मन से तथा अपने अगों से उत्पन्न मेरी अपार पीड़ा सुन।

पृष्ठ २३०—यथैव ... ... विमोहिता ॥९१-९३॥

शब्दार्थ त्वदीय=तेरे। आविलता=मलिनता। करालता=भयंकरता। प्रवासिनी=विदेश में रहने वाली।

भावार्थ—हे कोयल ! जिस प्रकार तेरे बच्चे कौओं की गोद में पलकर भी तेरे ही रहते हैं, उसी प्रकार श्रीकृष्ण भी मुझे अतीव दुःखी तथा उदास बनाकर यादव-वंश में जा मिले हैं।

इतना होने पर भी अधिक पीड़ा नहीं होती अगर व्रजभूमि कृष्ण को भूल जाती। भाग की यह भीषणता, मलिनता व भयकरता अत्यन्त दुःखदायी है

गोकुल ग्राम की निर्धन गोपियाँ कभी भी मथुरा जाकर नहीं रहेंगी। वे राज्य-भोग लेकर भला क्या करेंगी ? वे तो कृष्ण में निमग्न हैं, उन पर मुग्ध हो गई हैं और यही उनके लिए उचित है।

जहाँ न ... ... समाग्रली ।।९४-९६।।

शब्दार्थ – वांछित=इच्छित । कामद=कल्प वृक्ष । काम-दुधा=कामधेनु । गरीयसी=गौरवशालिनी । केकी=मोर ।

भावार्थ—जहाँ पर वृन्दावन शोभायमान नहीं हैं, जहाँ मनोरम ब्रज-भूमि नहीं है तथा जहाँ सूर्य पुत्री यमुना प्रसन्नता पूर्वक नहीं वह रही है, ऐसा तो हमें स्वर्ग भी ग्रच्छा नहीं लगता ।

हमारे लिए तो ये करीब की झाड़ियाँ ही कल्पवृक्ष के समान इच्छा पूर्ण करने व ली हैं । ये गौवें ही हमें कामधेनु के समान गौरवशालिनी लगती हैं । जव हमारे नेत्रों में कृष्ण की मोहक, श्याम व ग्राकर्षक मूर्ति वसी हुई है तो देवराज इन्द्र भी क्या हैं ?

जहाँ पर वे वृक्ष नहीं है जहाँ कृष्ण मुरली बजाते थे, न सुन्दर निकुंजे हैं, न मोर हैं, न कोयल हैं ग्रौर न मैना ही हैं । जहाँ पर भोली-भाली गोपियाँ जैसी सखियाँ नही है, ऐसे वैकुण्ड की भी हम इच्छा नहीं रखते ।

पृष्ठ २३१—न कामुका ... ... मलीनता ।।९७-९९।।

शब्दार्थ—ग्रनन्यता=एकरूपता । ग्रवांछिता=न चाहने योग्य ।

भावार्थ—न तो हम राज-वेश की इच्छुक हैं ग्रौर न हो हमें कृष्ण का यदुनाथ न म प्रिय लगता है । हम तो कृष्ण की एकरूपता की विरहणी, पागल तथा वियोग से पीड़ित है ।

हे कोयल ! तू मेरी विरक्तिपूर्ण व पीड़ामय बातें सुन कर ग्रत्यधिक दुःखी हो गई है । तेरा स्वर मुझे बहुत कष्ट पहुंचा रहा है, दग्ध कर रहा है तथा दुविधा में डाल रहा है ।

नहीं ! नहीं !! तू मेरी बातें सुनकर दुःखी नहीं हुई है, प्रत्युत तेरे शब्दों की यह व्याकुलता स्पष्ट बता रही है कि ग्रपने प्रिय श्रीकृष्ण के विरह के कारण ही तुझे यह ग्रवांछनीय पीड़ा व उदासी प्राप्त हुई है ।

ग्रत: प्रिये ... ... मना ।।१००-१०१।।

शब्दार्थ—स्व-वेधी=हृदय को बींधने वाली । जीवितेश=प्राणेश । ग्रभिज्ञ=जानकार ।

भावार्थ – इसलिए हे प्रिय ! तू तत्काल मथुरा जा और प्राणेश कृष्ण को हृदय वेधने वाला स्वर सुना दे जिससे वे विरह की निष्ठुरता, व्यापकता व गम्भीरता को भली भाँति जान सकें।

प्रिय कोयल तू तो अब भी नहीं उड़ी ? क्या तू मथुरा नहीं जायेगी ? अच्छा, मत जा। वहाँ जाना उचित नहीं है जहाँ पर उलाहना सुनना भी मना है।

पृष्ठ २३२—पाके ... ... लोचनों में ॥१०२-१०४॥

शब्दार्थ—परम-पूत=अत्यंत पवित्र। अंजित करूँ=अंजन लगाऊँ।

भावार्थ—हे कमल समान, कृष्ण के प्रिय पद-चिह्न ! तुझे प्राप्त करके मैंने अत्यन्त पवित्र वस्तु प्राप्त कर ली है। मेरे अश्रु प्रवाहित करते हुए नेत्रों में ज्योति आ गई है। हृदय की बढ़ती हुई पीड़ाएँ घटने लगी हैं।

हे पाँव के चिह्न ! पहले तू मुझे व्रज में कहीं पर भी नहीं मिला था। अतः मेरे नेत्रों से प्रतिदिन अश्रु जल क्यों न बहे ? क्यों न मैं विरहाग्नि में प्रायः जलती रहूं ? मेरे दुःखी प्राण कैसे आनन्दित होवें।

हे प्यारे चरण-चिह्न ! मेरा हृदय चाहता है कि तुझे अपने मस्तक पर लगाऊँ। आनन्द से अपने हृदय पर लगा लूं। तेरी धूलि को शरीर पर भभूति की तरह मल लूं तथा आनन्द से अपने नेत्रों में अजन की तरह लगा कर उन्हें सुन्दरता प्रदान करूँ।

लाली ... ... अंक में मैं ॥१०५-१०७॥

शब्दार्थ—तीसी=अलसी। अचिन्तित=अकल्पनीय। पदांक=चरण-चिह्न। विदूर=अलग।

भावार्थ हे श्री कृष्ण के चरण चिह्न ! तुझे उनके चरण जैसी दर्शनीय लालिमा सुन्दरता व कोमलता तथा अलसी के पुष्प जैसी सलोनी साँवलता प्राप्त नहीं है तब भी तेरी सुन्दरता मुग्ध करती है।

हे चरण चिह्न ! जिस प्रकार तू संयोगवश उनके चरण-कमल से

बेसुध होकर पृथ्वी पर अंकित हो गया है उसी प्रकार दुर्भाग्यवश मैं कृष्ण के चरण कमलों से बिछुड़ कर अकल्पनीय बेसुधी में पड़ी हूँ।

हे चरण-चिह्न ! यदि मैं तुझे अपनी गोद में उठा पाती तो मेरे कष्टों की व्यापकता कुछ दूर हो जाती, मैं पृथ्वी पर ही दिव्य वस्तु प्राप्त कर लेती तथा मेरा शेष जीवन शान्तिमय हो जाता।

अलकार– १०५वें पद में उपमा।

पृष्ठ १३३—हूं मैं ... ... हाथ आने ॥१०८-११०॥

शब्दार्थ – विलोप=नष्ट। युग-हस्त=दोनों हाथ। विदेह=शरीर रहित।

भावार्थ—हे प्रिय चरण-चिह्न! मैं तुझे अत्यधिक चाव से उठा रही हूँ। अब तू मेरी गोद में आजा। हाय ! हे विधाता यह क्या हुआ ? अब मैं क्या करूँ ? पृथ्वी पर अंकित प्रियतम का चरण चिह्न भी नष्ट हो गया।

क्या मेरे दोनों हाथ बहुत कलंकित हो गए हैं जो वे चरण-चिह्न को छू भी नहीं सकते। वास्तव में मेरे हाथ बहुत निन्दनीय व बड़े कलकपूर्ण हैं, तभी तो वे चरणों की वन्दना से भी वंचित हो गए।

मैं भी अत्यन्त मूढ़ हूँ। हाय ! मैं भ्रम में पड़ कर यह भी न जान सकी जो शरीर की सुधि-बुधि भूल कर वन में वास करते हैं वे किसी को प्राप्त नहीं होते अतः श्रीकृष्ण के चरण चिह्न किसी अन्य के हाथों में कैसे आ सकते हैं।

पादांक ... ... दृगों को ॥१११॥

शब्दार्थ—पूत=पवित्र। सतत=निरन्तर।

भावार्थ—हे धूलि ! तू कृष्ण के चरण चिह्नों से पवित्र व प्रशंसा योग्य बन गई है। मैं बड़े चाव से तुझे आंचल में बाँध लेती हूँ। तू मुझे निरन्तर बहुत शान्ति प्रदान करेगी तथा निराशा रूपी अन्धकार में विचरण करते मेरे नेत्रों को ज्योति प्रदान करेगी।

कुछ कथन ... ... द्वारा ॥११२-११४॥

शब्दार्थ—केलि शीला=अटखेलियाँ करने वाली। मति-लोपी=बुद्धि नष्ट करने वाला। कुन्तली=घुंघराले बालों वाला। पाँवड़े=चादर।

भावार्थ—हे लहरों से अठखेलियाँ करने वाली यमुना ! मैं तुझ से अपनी विपदाएँ कहूँगी। क्या तू करुणापूर्वक व प्रेम से उन्हें सुनेगी अथवा प्रतिक्षण कल-कल स्वर करती हुई चली जायेगी।

हे प्रसन्न अंगो (चंचल जल) वाली यमुना ! क्या तू मुझे बता सकती है कि सुन्दर वंशी-ध्वनि करने वाला, आकर्षक अंगों से सुशोभित, भ्रमर-समूहों की बुद्धि हरने वाला, घुंघराले बालों वाला सुन्दर कपोलों व मधुर वचनों वाला कृष्ण आज भी क्यों नहीं आया ?

मेरे नेत्र प्रत्येक दिन जिस ओर लगे रहते हैं, जिस प्रियतम के लिए मैं अपनी हर्षित पलकों को प्रेम से मार्ग पर पाँवड़े की तरह बिछाए हूँ, उसे घर आना अब अच्छा क्यों नहीं लगता ?

पृष्ठ २३४—मम उर ... ... पाया ॥११५-११७॥

शब्दार्थ संग=पत्थर। याम=पहर।

भावार्थ—जिस प्रियतम के लिए मेरा हृदय मोम के समान कोमल है, उसी ने अपना हृदय पत्थर जैसा कठोर क्यों बना लिया है ? मेरे जिस हृदय में उसी की प्यारी मूर्त्ति निवास करती है, वह उसी हृदय की सुधि-बुधि क्यों चुरा रहा है ?

जिस पर मैंने अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया है वही प्रिय कृष्ण क्यों क्रूर हो गया है ? जिस कुमार कृष्ण के बिना पहर मुझे युगों के समान लम्बे लगते हैं, वह अपनी शोभा इन नेत्रों को क्यों नहीं दर्शाता ?

हे सखि ! जिसे हमने सर्वस्व त्याग कर प्राप्त किया है, उस कृष्ण ने हमें त्याग कर क्या प्राप्त किया है ? जिसका हम सदा ही मुख निहारते रहते हैं, वह प्रिय हमें एक क्षण के लिए भी क्यों नहीं देखता ?

विलसित ... ... अज्ञता है ॥११८-१२०॥

शब्दार्थ— निर्मम=निर्दयी। अज्ञता=मूर्खता। तर्कनाएँ=विचार।

भावार्थ—जो प्रिय कृष्ण मेरे हृदय में देवता के समान विराजता है वह अपने हृदय में मुझे थोड़ा सा स्थान भी क्यों नहीं देता ? जिसके बिना मेरे प्राणों को चैन प्राप्त नहीं होता वही प्रियतम मुझे प्रतिदिन क्यों सताता रहता है ?

मेरे नेत्र जिसके स्वरूप में निमग्न हैं, हाय ! वही उन्हें निर्दयी की तरह रुलाता रहता है। यह हृदय जिसके प्रेम में रमा हुआ है वही उसे मोह की मदिरा पिलाता है।

हे सखि ! जब मेरे अपने अंग ही मेरे नहीं रहे तब मैं प्रियतम के लिए ही क्यों विचार करूँ ? जब मैं अपने शरीर की ही सुधि-बुधि नहीं जानती तो प्रियतम को कुछ भी कहना मूर्खता है।

पृष्ठ २३५—दृग अति ... पाऊँ ॥१२१-१२३॥

शब्दार्थ—आतुरी=उत्सुकता। विदलित=दुःखी। विलपूं=भटकूं।

भावार्थ—मेरे नेत्र कृष्ण की साँवली मूर्ति में अनुरक्त हैं। मेरे दोनों कान मधुर तान सुनने के इच्छुक हैं। प्रियतम मिलने की अत्यधिक इच्छा से मेरे हृदय की उत्सुकता प्रतिक्षण बढ़ती जाती है।

यदि मैं रात्रि को फूट-फूटकर नहीं रोती तो मेरा हृदय फट जाता व पागलपन बढ़ जाता। यदि मेरे नेत्रों से अश्रुधारा नहीं बहती तो विरहाग्नि मेरे सम्पूर्ण शरीर को जला डालती।

मैं अपने हृदय की इच्छा (कृष्ण दर्शन की) कब तक दबाए रहूँ ? मैं अपना चित्त कब तक जलाती रहूँ ? अपने कोमल कलेजे पर कब तक पत्थर रखे रहूँ ? वनों में रोती-रोती भटकती रहूं अथवा पृथ्वी में समा जाऊँ ? अपने प्रियतम कृष्ण की प्रिय छवि मैं किस प्रकार देख पाऊँ ?

तवतट ... ... भगाती ॥१२४-१२६॥

शब्दार्थ—असेतांगिनी=श्याम अंगों वाली। तरलित=चंचल। प्रतपित=तपी हुई।

भावार्थ—हे यमुना ! मेरे प्रियतम भावों में निमग्न व प्रसन्नचित्त

होकर तेरे किनारे पर प्रतिदिन आकर भ्रमण करते हैं। एक दिन मेरी सम्पूर्ण पीड़ाएँ अपनी कल-कल ध्वनि के माध्यम से उन्हें प्रेमपूर्वक सुना देना।

मैं यदि भाग्यवश कभी तेरे प्रवाह में गिर जाऊ तो मेरे शरीर को ब्रज की ही मिट्टी में मिलाने की कृपा करना और अधिक कृपा करते हुए उस पर अपूर्व काले वर्ण के सुन्दर पुष्प बड़े सौजन्य से उगाना।

विशेष—प्रेम की चरम परिणति।

हे यमुना ! मैं श्याम रंग में निमग्न हूं जबकि तू श्याम अंग वाली है। तेरे हृदय में चंचल लहरे हैं और मेरे हृदय में भी शान्ति नहीं है। अतः हम दोनों में समानता है। इसलिए हे सखि ! मैं विरह व्यथा से संतप्त हूं तथा तू उष्मा को हरण करने वाली है (अतः तू मेरा ताप हर लेवे) हमें शान्ति प्रदान करने वाली बन जा।

पृष्ठ २३६—रोई — ... उत्कंठिता सी ॥१२७॥

शब्दार्थ—उन्मना=उत्सुक। ढिग=निकट।

भावार्थ—वह बालिका पहले तो पुष्पों के निकट आकर रोई। तत्पश्चात भ्रमर के साथ वार्त्तालाप करने लगी। फिर मुरली स्वर से भ्रम में पड़कर कोयल से वार्त्ता करती रही। उसके बाद प्रियतम के चरण-कमल के चिन्ह को उत्सुक होकर देखा और अन्त में बहुत उत्सुक होकर यमुना के तट पर आई।

तदुपरान्त — — ... अल्प भी ॥१२८॥

शब्दार्थ—ठौर=स्थान।

भावार्थ—तत्पश्चात् ऊद्धव को बहुत व्याकुल करके वह बालिका अपने घर चली गई। ऊद्धव ने बालिका के सब कथनों को सुना तथा वे छिप कर सब स्थानों पर भी गये परन्तु वे तनिक भी नहीं बोल सके।

———

षोड़श सर्ग

पृष्ठ २३७—विमुग्ध-कारी ... ... मयी । १-३॥

शब्दार्थ—मधु=वसन्त । वनांत=वन पल्लवाविता=पत्तों वाली । अकीलिता=जिसका कीलन नहीं किया गया, स्वच्छन्दता ।

भावार्थ--मन को मोहित करने वाली सुन्दर वसन्त ऋतु थी । पृथ्वी बड़ी मनोहर लग रही थी । वन-प्रदेश में वसन्त का वसन्तीपन अपुर्व ढंग से सुशोभित था ।

नवीनता प्राप्त वन के सौंदर्य में, आनन्दित लताओं, पक्षी समूहों में कुंजों, तथा पक्षियों के स्वर से कूजित कुंजों में वसंत की अपूर्वता व्याप्त हो रही थी ।

वनभूमि पुष्प रस से छलक रही थी । वह पुष्पों से लदी हुई थी, नये मृदुल पत्तों से भरी हुई थी तथा कोयल के स्वच्छन्द सगीत से मुखरित थी ।

निसर्ग ... प्रफुल्लता ।।४-६॥

शब्दार्थ सिलिन्द=भ्रमर । निसर्ग=प्रकृति । पीठका=सिंहासन । पुंजी-कृत=इकट्ठी की गई । मनोज=कामदेव ।

भावार्थ प्रकृति, सुगन्धि व पराग ने क्रमश पृथ्वी, कोयल व भ्रमर को मनोरमता, मादकता तथा उन्मत्तता अत्यन्त सुन्दर भाव से प्रदान की थी ।

कहीं पर वसन्त के अनेक भाव भरे ऐश्वर्य के समान अथवा कामदेव के सन्दर सिंहासन के समान मन को प्रसन्न करने वाली मृदुल कमलिनियाँ व कुमोदिनियाँ सुशोभित हो रहीं थीं ।

नवीन अंकुरों में, कलियों के समूहों में, अत्यन्त अपूर्व फलों व पत्तों के समूहों में तथा प्रकृति द्वारा उत्पन्न पुष्पों में वसन्त की प्रसन्नता मानों एकत्र हो गई थी ।

अलंकार ५वें में यथाक्रम तथा छटे में उपमा ।

पृष्ठ २३८—विमुग्धा ... ... रंजिता ॥७-९॥

शब्दार्थ—रंग-भूमि=रंग-मंच। वसुंधरोपमा=पृथ्वी के समान। अन्यूनता=अधिकता। मार=कामदेव। स-अंगरागा=अंगराग सहित।

भावार्थ—वृक्षों के समूह की शाखाएँ नवीन कलियों तथा सुन्दर मंजरियों से युक्त मोहित करने के श्रेष्ठ रंगमंच के समान थीं तथा प्रलोभन उत्पन्न करने के लिए मधुर क्रीड़ा स्थल के समान थीं।

अनुपम फल-फूलों की अधिकता दिखाकर, पत्तों से रहित वृक्षों की पत्र युक्तता उन वृक्षों के सच्चे त्याग की महिमा को प्रकट कर रहे थे। तात्पर्य यह है कि शिशिर के पश्चात् वृक्षों पर नये पत्ते, पुष्प और फल आ गये थे।

वसंत की मधुरता की उन्नति में गति लाने वाली और कामदेव के महान सजीव उत्सव से अंकित सुन्दर कोपलें, प्रेम में पगे हुए पराग आदि के अंग रागों सहित वृक्ष के अंक में सुशोभित थीं।

अलंकार—७वें पद में उपमा।

पृष्ठ २३८—नये नये ... ... मंजरी ॥१०-१२॥

शब्दार्थ—ललामता=सुन्दरता। अपलाशता=पत्र-रहितता। प्रियाल=चिरौंजी का फल।

भावार्थ—नये-नये पत्तों से आच्छादित वृक्षों तथा पुष्पों में अलौकिकता विद्यमान थी। वसन्त ऋतु में विकसित लताएँ और प्रसन्न बेलें प्रायः अपूर्व छटा से सुशोभित हो रही थीं।

अनार तथा कचनारों के वृक्षों पर मन को मुग्ध करने वाली लालिमा विद्यमान थी। पलाश का वृक्ष लाल रंग के पुष्पों से ढका हुआ था। इस प्रकार पलाश के वृक्ष की पत्रहीनता छुप गई थीं।

सुन्दर चिरौंजी की मंजरियाँ प्रियतमा के समान बड़ी प्रफुल्लित थीं तथा दूसरों को प्रसन्न करने वाली थीं। वे सुगन्धि से परिपूर्ण थी, नेत्रों को सुख प्रदान करती थीं तथा वसंत ऋतु की वासंतिकता से सुशोभित थीं।

पृष्ठ २३९—दिशा ... ... मोदिनी ॥१३-१५॥

शब्दार्थ—पुष्प-संकुला = पुष्पों से भरी हुई। अलापिका = बोलने वाली।

भावार्थ—वसन्त ऋतु में सर्वत्र प्रसन्नता व्याप्त हो गई थी पृथ्वी पुष्पों से भर गई थी। वृक्ष नये पत्तों से परिपूर्ण हो गया था। वसन्त ऋतु में लताएँ यौवन के भार से (फूलों के भार से) झुक गई थी। कोयल पंचमराग में गा रही थी।

मलय पर्वत से आती हुई वायु अलौकिक सुगन्ध से परिपूर्ण थी व नाड़ी-समूह में अमृत धारा प्रवाहित कर रही थी। यह किसे आनन्दित नहीं कर रही थी ? अथात् सबको आनन्दित कर रही थी।

मलयाचल से आई समीर की क्रियाएँ अलौकिक थीं। वह पुष्पों को प्रसन्न करने वाली, सुगन्धि बढ़ाने वाली, लता तथा वेलों का विकास करने वाली व उन्हें विकसित करने वाली थी। यह समीर वृक्षों की श्रेणियों को आनन्दित करने वाली व मुग्ध करने वाली थी।

वसंत ... ... कोविदार का ॥१६-१८॥

शब्दार्थ—शिखाग्नि-तुल्या = अग्नि-शिखा के समान। प्रीति-निकेत = प्रीति से भरी हुई। विदारता = चीरता। कोविदार = कचनार।

भावार्थ—विरह-निमग्न ब्रज-भूमि के लिए वसंत की शोभा भी दुःखदायी सिद्ध हो रही थी। हरी-भरी वृक्षों की पंक्तियाँ ब्रजवासियों को पीड़ित कर रही थीं।

वृक्ष समूह में निकली नई कोंपलें अग्नि की लपटों के समान ब्रजवासियों के नेत्रों तथा हृदयों को अत्यन्त दग्ध करती थीं। अनार तथा कचनार की शाखाएँ लाल पुष्पों से लदी होने के कारण अंगारो के समूह से लदी जान पड़ती थीं।

प्रियाल की प्रेम की भंडार सुन्दर मंजरियाँ भी उन ब्रजवासियों को अत्यन्त प्रतिकूल अतः दुःखदायी थीं। कचनार का वृक्ष भी हृदय को अत्यन्त व्याकुल करता था, मानो चीर डालता था

अलंकार—१७वें पद में उपमा।

पृष्ठ २४० भयंकरी ... ... क्रिया ॥१६-२१॥

शब्दार्थ – पलाशिनी = कच्चामांस खाने वाली, राक्षसी। इतस्ततः = इधर-उधर। अमानिता – अपमानिता।

भावार्थ — ढाक के वृक्षों की अतीव लाल पंक्तियाँ अत्यन्त भयानक, व्याकुलता में वृद्धि करने वाली, सन्देह की प्रतिमा, आन्नद को नष्ट करने वाली तथा राक्षसी समान प्रतीत होती थीं।

भ्रमरों के झुंड पागल से बने हुए इधर-उधर भटक रहे प्रतीत होते थे। कोयल का अपूर्व मधुर स्वर भी दोषयुक्त तथा कलंकित लगता था।

पुष्पों का आर्कषरग तथा माधुर्य भी उदासी से ग्रसित प्रतीत होता था। मलय पवन की क्रियाएँ भी अपमानित सी हो रही थीं क्योंकि किसी को उनकी इच्छा नहीं थी और कोई उनसे आन्नद भी प्राप्त नहीं कर पा रहा था।

बड़े ... ... श्यामता ॥२२-२४॥

शब्दार्थ - रक्तिमता = लाली। श्यामता = हरियाली।

भावार्थ – अपार कीर्त्ति वाले वृषभानु के घर के निकट एक अनुपम वाटिका थी। वसन्त ऋतु के इन्हीं सुहावने दिनों में व्रज-देवि राधा को ज्ञान देने के लिए ज्ञानी ऊद्धव इस वाटिका में पधारे।

वसन्त ऋतु को पाकर यह प्रशान्त वाटिका स्वभाव से ही अत्यन्त सुन्दर हो गई थी किन्तु विकास की सुन्दर क्रियाएँ बड़ी शान्ति से हो रही थीं।

वृक्षों के समूहों की कोंपले धीरे-धीरे बढ़ रही थीं तथा लालिमा के ऐश्वर्य को अत्यन्त शीघ्रता से आन्नद देने वाली सुन्दर हरियाली प्रदान कर रहा थीं।

पृष्ठ २४१—अनेक ... ... पुंज में ॥२५-२७॥

शब्दार्थ—सु-व्यंजिता = भली भाँति प्रकट। पाथोज = कमल।

भावार्थ—वे कोंपले मानो अनेक प्रकार से यह गम्भीर रहस्य प्रकट कर रही थीं कि जो प्रेम के लाल रंग में नहीं डूबेगा वह कृष्ण के काले रंग को भी प्राप्त नहीं कर सकता।

मोहक हरे पत्तों के मध्य पुष्प आन्नद से विकसित हो रहे थे। अत्यन्त पवित्र समीर पुष्पों की सुगन्धि को पवित्र बनाकर सर्वत्र फैला रही थी।

उस प्रसन्नता में तथा विकसित कमलों के समूह में पवित्र शान्ति के साथ ही साथ एक अव्यक्त विषाद भी मिश्रित था, जो धीरे-धीरे प्रकट हो रहा था।

स-शान्ति ... ... काकली ।।२८-३०।।

शब्दार्थ – विहंगिनी=पक्षिणी। कलोल=क्रीडा। ध्वनिता=शब्दायमान।

भावार्थ—(सदा चंचल रहने वाले) भ्रमर शान्ति पूर्वक उडते हुए कुंज में आकर चुपचाप ही पुष्प के निकट जाते थे। वे अत्यन्त शान्त, चुप तथा सयंमी बन गये थे। वे बड़े धैर्य से मधुपान करते थे।

पक्षी आनन्द से वृक्षों पर आ बैठते थे। अपनी प्रेमिकाओं के साथ वार्त्तालाप करते व विहार कर रहे थे। इन क्रीड़ारत पक्षियों का क्रीड़ा व्यापार अत्यन्त संयम पूर्वक हो रहा था।

कोयल का मधुर स्वर बार-बार उसके कंठ को तजकर बाहर नहीं निकल पा रहा था। वह अपनी जोरदार कूकों से दिशाओं को शब्दायमान नहीं बना रही थी। कोयल की मधुर ध्वनि कुंठित होकर वाटिका में व्याप्त नहीं हो पा रही थी।

विशेषः– वाटिका में राधा विद्यमान है। वह विरह विषाद से व्याकुल है अतः भ्रमर व कोयल आदि अपनी स्वाभाविकता से दूर होते रहे हैं।

पृष्ठ २४२—इसी तपोभूमि ... ... दशा हुई ।।३१-३३।।

शब्दार्थ—समावृता=घिरी हुई। अलि-वृन्द=सखी-समूह।

भावार्थ—तपोवन के समान इस पवित्र वाटिका के मध्य एक सुन्दर निकुंज थी। यह कुंज सांवले वर्ण के पुष्पों के समूह से तथा अनेकों लता व बेल समूहों से भली-भांति घिरी हुई थी।

इस अत्यन्त शान्त कुंज में वृषभानु की पुत्री राधा विराज रही थीं। इसलिए कृष्ण-बन्धु ऊद्धव ने उन्हें इसी कुंज में सखी-समूह से घिरा पाया।

वृषभानु की पुत्री राधा अत्यन्त शान्त व उदास थी। वह देवी के समान अत्यन्त अलौकिक प्रतिमा सी प्रतीत होती थी। उनके दर्शन करके ऊद्धव पवित्र भक्ति भाव से परिपूर्ण हो गए तथा उनके हृदय की विचित्र अवस्था हो गई।

अतीव ... ... मूर्तिका ॥३४-३६॥

शब्दार्थ – विषाद-अंकिता=दुःख से पूर्ण। सुधी=बुद्धिमान।

भावार्थ - राधा के नेत्रों की छवि अत्यन्त मधुर थी परन्तु उनमें शान्ति एवम् दुःख की रेखाएँ स्पष्ट थीं। उनके मुख-कमल की अनुपम आभा में प्रसन्नता व व्याकुलता मिश्रित थी

कृष्ण के बन्धु उद्धव को आया देखकर उनका स्वागत करने के लिए वे प्रेम पूर्वक उठीं। तत्पश्चात् अपने शान्त निकुंज मे बड़े भक्ति-भाव से बठाया।

ऊद्धव ने पहले बड़े आदर से राधा की कुशल क्षेम पूंछी। तत्पश्चात् बुद्धिमान ऊद्धव ने नम्रतापूर्वक कृष्ण का सन्देशा इस प्रकार सुनाया—

पृष्ठ २४३—प्राणाधारे ... ... नित्यश: थे ॥३७-३८॥

शब्दार्थ—गुरू-गिरि=भारी पर्वत। पय=दूध। नीर=पानी।

भावार्थ—हे प्राणों की आधार! अतीव सच्चे प्रेम की प्रतिमा! राधा! विधाता ने इस प्रकार मुझे तुम से अलग कर दिया है। मैं किस कठिन मार्ग का पथिक हो गया हूं कि नित प्रतिदिन तुमसे मिलने की प्रिय आशा से दूर होता जा रहा हूँ?

जो दो हृदय मिलकर एक हो गए हैं, विधाता ने उनके शरीरों को इस प्रकार अलग कर दिया है। जो दो प्रेमी दूध और पानी के समान प्रतिदिन मिलते थे, विधाता ने उनके मध्य इतना भारी पर्वत क्यों खड़ा कर दिया है?

उत्कंठा ... ... कोई ॥३९-४०॥

शब्दार्थ – निहित=छिपा हुआ। श्रेय=कल्याण।

भावार्थ—मैं (तुम्हारा संदेश मिलने की) उत्सुकता से विवश होकर प्रायः आकाश, भूमि, वृक्ष, तारे व मनुष्यों के मुखों को देखा करता हूँ। हे प्रिये ! मुझे कहीं भी ऐसी ध्वनि सुनने को नहीं मिली जिससे मेरे चिन्तातुर हृदय को शान्ति प्राप्त होवे।

यद्यपि विधाता के विधान को कोई नहीं जान सकता, तो भी हे प्रिये ! अपने मन में यह सोच लेना उचित होगा कि हम दोनों के मिलने के सब उपाय जो निष्फल होते जा रहे हैं, उसमें भी कल्याण का बीज अवश्य छिपा हुआ होगा।

पृष्ठ २४४—हैं प्यारी ... ... वही है ।।४१-४२।।

शब्दार्थ - लिप्सा=लोप। विशद=स्वच्छ। निरत=लीन।

भावार्थ—सुख और भोग की इच्छाएँ बहुत प्रिय और मधुर होती हैं परन्तु हे प्रिय ! विश्व हित की इच्छा और भी अधिक मनोरम है। आत्मा के परम कल्याण मोक्ष की कामना श्रेष्ठ है किन्तु आत्म-बलिदान की भावना उससे भी अधिक श्रेष्ठ है।

जो व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या में लीन है वह अपना कल्याण चाहने वाला कहा जा सकता है; उसे हम आत्मत्यागी नहीं कह सकते। हे प्रिये ! जिसे अपने हृदय से अधिक विश्व-कल्याण व लोक सेवा अधिक प्रिय है, इस पृथ्वी पर सच्चा आत्मत्यागी वही है।

जो पृथ्वो ... ... है ।।४३-४४।।

शब्दार्थ—विपाशा=व्यास नामक नदी, बन्धन रहित। जन्हुजा=गंगा। आद्या=पहली। रंजनी=मनोरंजन करने वाली।

भावार्थ—यदि सांसारिक विषय-वासना का माधुर्य व्यास नदी के समान अपरिमित है तो लोक सेवा से उत्पन्न आनन्द की प्राप्ति गंगा के समान पवित्र है। यदि प्रथम (सांसारिक विषय) हृदयों में नक्षत्रों की ज्योति के समान व्याप्त है तो दूसरी (लोक सेवा) चाँदनी के समान।

यद्यपि सांसारिक भोगों में मनोरंजन करने वाली विभिन्न शक्तियाँ हैं तथापि वे विश्व-कल्याण के समान मुग्धकारी नहीं है। वास्तव में इन भोग

विलासों में कई बड़े क्लेशकारी कष्ट हैं जबकि लोकसेवा में अलौकिक शांति शोभित होती है।

है आत्मा ... ... भूतोपकारी ॥४५-४६॥

शब्दार्थ—भावी=होनी। दयिते=प्रिये। स्वार्थोपरत=स्वार्थों से हटकर।

भावार्थ—हे राधा! इस संसार में अपनी आत्मा का सुख भला किसको प्रिय नहीं है? सम्पूर्ण व्यक्ति बड़े शौक से इस आत्मसुख के माधुर्य में बचे हुए हैं। परन्तु जो व्यक्ति अपने आत्मत्याग के द्वारा आत्मसुख के मोह में नहीं फँसता, इस पृथ्वी पर उसी का आना वास्तव मे सफल है।

यदि होनी अत्यन्त बलवान है और विधाता की इच्छा ही मुख्य है तो अपनी मन-वांछित वस्तु न पाने पर दुःखी होना उचित नहीं है। हे प्रिये! वास्तव में वही कार्य कल्याणकारी हैं जो स्वार्थ-भावना से रहित और सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाले तथा सात्त्विक हों।

पृष्ठ २४५—अतीव ... ... बना ॥४७॥

शब्दार्थ—अन्यमना=उदास। दृगारविन्द=नेत्र रूपी कमल।

भावार्थ—व्रजदेवी राधा ने अत्यन्त उदास व दुःखी होकर, कमल रूपी नेत्रों से अश्रुजल गिराते हुए तथा अपने हृदय को वज्र के समान कठोर बनाकर श्रीकृष्ण का सम्पूर्ण सन्देश सुना।

पुनः ... ... उच्चता ॥४८॥

शब्दार्थ—कलमोचित=स्त्रियों के योग्य।

भावार्थ - तत्पश्चात् उन्होंने बड़े शान्त भाव से, कभी अश्रुजल बहाते हुए और कभी धैर्यपूर्वक तथा स्त्रियों के योग्य हृदय की महानता दर्शाते हुए अपनी सब बातें कृष्ण बन्धु उद्धव से कहीं।

मैं हूं — ... ... — क्या है ॥४९-५०॥

शब्दार्थ—धी=गम्भीर। तरल-उर=कोमल हृदय। विमना=उदास।

भावार्थ—हे उद्धव जी! मैं आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुई हूँ। कृष्ण का सन्देश सुनकर तो मैं और भी आनन्दित हुई हूं। हृदय के अज्ञान

रूपी अंधकार को नष्ट करने वाली ज्ञान की ज्योति जो धुन्धली होती जा रही थी, अब वह फिर से जगमगाती हुई प्रकाशित हो उठी है।

यद्यपि मेरे प्रियतम पुरुष हैं, पृथ्वी का श्रेष्ठ रत्न हैं, शान्त तथा बुद्धिमान हैं तथापि उनके सन्देशों में उनकी पीड़ा स्पष्ट है। पर मैं तो स्त्री हूँ, कोमल हृदय वाली तथा प्रेम से वंचित की हुई हूं अतः यदि मैं व्याकुल, उदास और दुःखी होती हूं तो आश्चर्य क्या है।

हो जाती ··· ··· ··· न होती ।।५१-५२।।

शब्दार्थ—श्री-हीना=शोभा से रहित। कश्चिदावेग-द्वारा=किसी आवेग के द्वारा। विबुध-जन=बुद्धिमान मनुष्य। मुह्यता=मोह।

भावार्थ—जिस प्रकार चन्द्रमा के अस्त हो जाने से रात्रि उदास अर्थात् अन्धकारमय हो जाती है, जिस प्रकार वसन्त ऋतु के अन्त में बाटिका की शोभा नष्ट हो जाती है; उसी प्रकार चन्द्र-मुख प्रिय कृष्ण की ज्योति से रहित होकर ब्रजभूमि शोभा हीन तथा सौन्दर्य हीन हो गई है।

जिस प्रकार पवन चलने से जल में प्रायः लहरें उठती हैं, उसी प्रकार किसी आवेग के कारण हृदय अधीर हो उठता है। इन विकलताओं से व्याकुल होना स्वभाविक बात है। यह बात अलग है कि ज्ञानी और विद्वान मनुष्यों में मोह नहीं होता (हम न तो ज्ञानी हैं और न ही विद्वान)

अलंकार—दोनों पदों में उदाहरण।

पृष्ठ २४६—पूरा ··· ··· ··· जाती ।।५३-५४।।

शब्दार्थ—विरह-जनिता=विरह से उत्पन्न। पक्ष=पंख।

भावार्थ—मैं प्रिय कृष्ण के हृदय का रहस्य पूर्णतया जानती हू। उनके हृदय में जो महान आकांक्षा है उसे भी भली भाँति समझती हूं। अतः मैं प्रतिदिन अनेक प्रयत्न करके संयमित होने का प्रयत्न करती हू तब भी विरह से उत्पन्न पीड़ा मुझे कष्ट प्रदान करती है।

यदि मैं आकाश में कोई पक्षी उड़ता हुआ देखती हूं तो आज भी मैं अपने हृदय में बड़ी उत्सुकता से सोचने लगती हूँ, कि यदि मेरे निर्बल

शरीर में पक्षियों जैसे पंख होते तो मैं आनन्द से उड़कर कृष्ण के पास चली जाती।

जो उत्कंठा ... ... लालसा है ॥५५-५६॥

शब्दार्थ—मंजु=सुन्दर। निर्लिप्ता=निर्लेप।

भावार्थ—जब किसी समय कृष्ण से मिलने की इच्छा अधिक प्रबल होती तो मन में एक कल्पना जागृत हो जाती कि यदि मैं वायु बन सकती तो सबकी प्रिय गति पाकर जाती तथा अपने परम प्रिय कृष्ण के चरण कमलों का स्पर्श कर आती।

यद्यपि मैं सांसारिक मोह से प्रायः रहित हूँ तथा सदा अपने मन को वश में किए रहती हूँ तब भी कृष्ण की याद आते ही व्याकुल हो जाती हूँ। आज भी मेरे हृदय में विश्वहित की इच्छा इतनी प्रबल नहीं होती जितनी प्रियतम से मिलने की रहती है।

हो जाता ... ... है ॥५७-५८॥

शब्दार्थ—प्रसवकर्त्ता=उत्पन्नकर्त्ता। विशिख=वाण। विक्षेप-शीला=विक्षिप्त कर देने वाली।

भावार्थ—किसी के रूप के प्रभाव से हृदय में जो मोह उत्पन्न हो जाता है, जिसके कार्य भूमि पर अधिक विस्तृत हैं, जो प्रायः मनों में एक अनुपम मुग्धता को जन्म देता है तथा जिससे चित्त का भ्रम और उद्विग्नता मनोहर क्रीड़ा-भूमि के रूप में परिणत हो जाते हैं।

जिसकी कल्पित मूर्ति को पाँच वाण धारण करने वाला कामदेव माना जाता है, जो अपने पुष्पों के वाणों से सारे विश्व के प्राणियों को वेध देता है। उस काम की चित्त को विक्षिप्त कर देने वाली भाव भरी बड़ी मधुर लीलाएँ मनुष्यों के मनों को उन्मत्त बना देती है।

पृष्ठ २४७—वैचित्र्यों ... ... द्वारा ॥५९-६०॥

शब्दार्थ—आसंग=आसक्ति। प्रणयज=प्रेम से उत्पन्न होने वाली। तृषा=प्यास। निलय=वाण।

भावार्थ—यद्यपि इस मोह में ऐसी अद्भुत शक्तियाँ हैं तथापि विद्वानों ने उसे प्रेम नहीं माना है। प्रेम और मोह में अन्तर है। यद्यपि दोनों से ही मिलने की उत्कंठा प्रबल होती है तदपि प्रेम से उत्पन्न कामना ही अधिक श्रेष्ठ और स्थायी होती है।

जिस प्रकार प्यासे व्यक्ति की प्यास को हम प्रेम नहीं कह सकते तथा जिस प्रकार भूखे की भूख को हम अन्न में आसक्ति नहीं मान सकते उसी प्रकार रूपवान व्यक्तियों की मनोहर छवि को देख कर उत्पन्न आकर्षण प्रेम नहीं केवल मोह होता है।

मूली भूता ... ... से भी ॥६१-६२॥

शब्दार्थ—समधिकृत=अधिकार युक्त। प्रशमित=प्रशान्त। वृत्ति=व्यापार।

भावार्थ—इस प्रेम के मूलभूत कारण बुद्धि के वे व्यापार हैं जो व्यक्ति के सद्गुणों को देख कर और भी अधिक शक्तिवान हो जाते हैं। वे गुण सदा नवीन, अलौकिक तथा स्थिर होते हैं तथा प्रेम-मार्ग में इन्हीं गुणों से स्थायित्व आता है।

सौन्दर्य स्थायित्वहीन होता है तथा विकृत होता है (नष्ट हो जाता है)। अतः मोह (सौन्दर्य से उत्पन्न) में स्थायित्व नहीं पाया जाता अर्थात् मोह का प्रभाव शीघ्र ही दूर हो जाता है। सौन्दर्य के विकास में प्रायः एकरूपता होती है अतः संभोग के पश्चात् मोह शान्त अर्थात् नष्ट हो जाता है।

नाना ... ... को है ॥६३-६४॥

शब्दार्थ—वलित=युक्त। शुचिता-मूर्ति=पवित्रता की मूर्ति। उत्सर्ग=त्याग। प्रमिति=सीमा।

भावार्थ—मोह अनेक प्रकार के स्वार्थों व मधुर सुख की कामनाओं में मग्न रहता है। वह विकलताओं से युक्त तथा ममत्व लिए हुए है। जब कि प्रेम कामना-रहित, पवित्रता की प्रतिमा तथा सात्त्विक होता है। उसमें आत्म-त्याग की चरम सीमा होती है।

मोह की मस्ती हृदय में शीघ्रता से बढ़ने लगती है जबकि प्रेम हृदय में धीरे-धीरे बढ़ता हुआ पूर्ण रूप से व्याप्त हो जाता है। मोह के कारण हृदय के अन्य सब व्यापार कुंठित हो जाते हैं जबकि प्रणय अन्य पवित्र भावनाओं को जगा कर उनका विकास करता है।

पृष्ठ २४८—हो जाते ··· ··· उसी को ॥६५-६६॥

शब्दार्थ - समीचीन=उचित। भूयसी=बहुत अधिक। अभिधा=नाम।

भावार्थ—कई बार हृदय में ऐसे अनेक भाव उत्पन्न हो जाते हैं जिनमें प्रायः मोह के कारण प्रणय होने का भ्रम हो जाता है। वास्तव में वे भाव प्रेम नहीं होते और न ही उचित होते हैं अपितु उनमें मोह की वासना ही अधिकतर पाई जाती है।

मनुष्य के हृदय की यह भावना जो प्रियतम के सुख-सन्तोश की आकांक्षा से सर्वस्व न्योछावर कर देती है तथा पुण्य की यश की अथवा धर्म की भी इच्छा नहीं करती, उसे ही विद्वानों ने प्रेम नाम दिया है।

आदौ ··· ··· ··· ··· नहीं वे ॥६७-६८॥

शब्दार्थ—आदौ=प्रथम। उक्त=कही हुई। ग्राही=ग्रहण करने वाले।

भावार्थ—प्रेम की इस वर्णित श्रेष्ठ वृत्ति के द्वारा प्रथम तो प्रेमी के गुणों का ग्रहण होता है। तत्पश्चात् उसके सम्पर्क में रहने की इच्छा उत्पन्न होती है। सम्पर्क में रहने के कारण आत्मीयता का जन्म होता है और अन्त में प्रेमी अपनी सुधि-बुधि भूल कर आत्म त्याग की भावना में निमग्न हो जाता है।

मनुष्य के हृदय में किसी सुगन्धि, मधुर स्वर, कोमल स्पर्श तथा मधुर रस के प्रति जो मोह उत्पन्न होता है, यद्यपि वह मोह मानव हृदय को अत्यधिक आकृष्ट करता है तथापि वह उतना तन्मयकारी नहीं हो सकता (जितना सच्चा प्रेम)।

व्यापी ··· ··· ··· की है ।६९-७०॥

शब्दार्थ—मीन=मछली। द्विरद=हाथी।

भावार्थ—सुगन्धि आदि की अपेक्षा रूप का मोह अधिक व्यापक होता है। उसमें चंचलता भी अत्यधिक है। इस विश्व में परवाने के प्रेम के समान भ्रमर, मछली, हाथी व हरिण के मोह को नहीं माना जाता।

विशेष—परवाने का प्रेम शमा से, भ्रमर का मोह सुगन्धि से, मछली जल से, हाथी का स्पर्श से तथा हरि का मोह स्वर से है।

मोहों में सबसे अधिक शक्तिशाली रूप का मोह होता है। जब रूप का मोह ही प्रेम नहीं हो सकता तो फिर सुगन्धि आदि के मोह को प्रेम कैसे कहा जा सकता है? यदि प्रेम मणि के समान है तो मोह शीशे के समान है। प्रेम की महिमा मोह की अपेक्षा अत्यन्त मधुर तथा अपूर्व है।

दोनों ... ... व्यामोहकारो ॥७१-७२॥

शब्दार्थ—व्यामोहकारी=मोहित करने वाला। हृत्तन्त्री=हृदय रूपी सितार। उर-जयी=हृदय को जीतने वाला।

भावार्थ—जिसको देख कर दोनों नेत्र कभी भी तृप्त नहीं होते व उसको जितना अधिक देखें, वह उतना अधिक सुन्दर जान पड़ता है। जो पृथ्वी पर लीलाओं का भंडार तथा अलौकिक पदार्थ है, उनका रूप पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान अत्यन्त आनन्द दायक है।

अनेकों बार उस प्रियतम का स्वर सुन कर पागलों की भाँति कानों की प्यास किंचित्मात्र भी कम नहीं हुई है और जो दिव्य संगीत के समान हृदय रूपी सितार को ध्वनित करता रहता है, ऐसा हृदय को जीतने वाला तथा संसार को मोहित करने वाला अपूर्व स्वर था।

पृष्ठ २४६—होता ... ... होगा ॥७३-७४॥

शब्दार्थ—अग-जग=जड़ तथा चेतन। विहित-विधि=उचित रीति।

भावार्थ—जड तथा चेतन—सभी सांसारिक पदार्थों के सब स्वरूपों में एक अपार मोहकता होती है अथवा उनमें सद्गुणों की मोहकता विद्यमान होती है। ये ही बातें उचित रूप से गंधों, रसों तथा स्पर्श आदि से भी प्रकट होती हैं।

श्रीकृष्ण के रूप में जो महानता प्राप्य है तथा उनकी वंशी अलौकिकता से पूर्ण हो मंत्रों आदि से युक्त है। उनमें सभी प्रमुख व अपूर्व गुण सात्विकता की प्रतिमा है अतः उनका प्रेम सभी के हृदयों में क्यों न व्याप्त रहेगा।

जो आसक्ता ... ... लालसायें ॥७५-७६॥

शब्दार्थ—रंजिता=रँगी हुई। पंथिनी=यात्रिणी।

भावार्थ—कृष्ण में अनुरक्त व्रजभूमि में जो अनेक बालिकाएँ हैं वे कृष्ण के प्रति प्रेम के रंग में रंगी हुई हैं। मैं उनमें से अधिकतर को मोह-मार्ग पर निमग्न समझती हूं पर फिर भी वे सब प्रेममार्ग की गामिनी हैं।

मेरे हृदय की अवस्था भी कुछ ऐसी ही है पर मैं कृष्ण को क्यों भुलाऊँ? अपने हृदय से कृष्ण की साँवली प्रतिमा कैसे निकालूं? जब तक मैं जीवित हूं तब तक उनकी मुरली की तान मेरा हृदय नहीं भूल सकता, तो प्रिय कृष्ण के दर्शन-लाभ की कामना कैसे शान्त होगी?

पृष्ठ २५० – ए आँखें ... ... आता ॥७७-७८॥

शब्दार्थ—रव=शब्द। पैठके=प्रविष्ट होकर। कौमुदी कान्त=सूर्य।

भावार्थ—ये नेत्र जिस ओर भी घूमते हैं, कृष्ण को ही देखना चाहते हैं। मेरे कान भी उनकी मुरली का मधुर स्वर सुनने के लिए सदा उत्कंठित रहते हैं। यदि कोई मेरे हृदय में प्रविष्ट होकर देखे, तो उसे वहाँ भी कृष्ण की छवि विराजमान मिलेगी।

जब कभी मैं आकाश में उदित कमलिनी के पति, सूर्य, को अथवा किसी विकसित पुष्प को देख लेती हूं अथवा किसी शोभाशाली श्याम वृक्ष को देख लेती हूं तो प्रिय कृष्ण का प्रसन्नता से खिला हुआ मुख याद आ जाता है।

कालिन्दी ... ... आता ॥७९-८०॥

शब्दार्थ—वारि स्रावी=पानी बहाने वाले। बक=बगुला।

भावार्थ—यदि मैं यमुना के किनारे अथवा सुन्दर तालाबों पर जा कर विकसित कमल-समूह को देख कर मुग्ध हो रही होती हूं तो प्रिय कृष्ण

के सुन्दर हाथों व अपूर्व पाँवों की सुन्दर शोभा मेरे अश्रु प्रवाहित करने वाले नेत्रों में छा जाती है।

यदि मैं सितारों से जगमग आकाश को कभी देखती हूँ अथवा बादलों में उड़ते आनन्दित बगुलों की कतारें देखती हूँ तो मैं आनन्द में निमग्न हो जाती हूँ और मुझे ऐसा प्रतीत होता है मानो कृष्ण का वक्षस्थल मोतियों की माला से शोभित हो।

छू देती ... ... लसाता ॥८१-८२॥

शब्दार्थ—वास=सुगन्ध। परस-सुधि=स्पर्श का स्मरण।

भावार्थ—यदि मधुर समीर निकट आकर मेरे शरीर को स्पर्श कर देती है तो मुझे प्रिय कृष्ण के हाथों का ध्यान आ जाता है। वह समीर पुष्पों की सुगन्धि लेकर कुजों में बहती है तो उस गन्ध से कृष्ण के मुख मे भरी सगुन्ध की याद आ जाती है।

पर्वत की ऊची चोटियाँ कृष्ण के हृदय की उदात्तता प्रकट कर देते हैं तो पर्वत मेरे नत्रों के सामने कृष्ण के चरित्र की अपार दृढ़ता ला देते हैं। जब अनेक क्रीढ़ाओं मे रत व छींटें उड़ाता हुआ झरना देख कर नेत्रों में हर्षित सुन्दर कृष्ण की क्रीड़ाओं का चित्र खिच जाता है।

पृष्ठ २५१—कालिन्दी ... ... में है ॥८३-८४॥

शब्दार्थ—ओप=कान्ति। आदित्य=सूर्य।

भावार्थ—यह यमुना मेरे तृषित नेत्रों के सम्मुख कृष्ण के साँवले शरीर को ही प्रकट नहीं करती है, अपितु अपने किनारे के माधुर्य से सम्पूर्ण उनकी लीलाएँ अनेकों पवित्र भावों सहित हृदय में सुशोभित करती हैं।

इस खिली हुई सन्ध्या में मेरे प्रिय कृष्ण की शोभा ही दिखाई देती है। रात्रि के साँवलेपन में श्रीकृष्ण की श्यामता दिखाई देती है। उषा की लालिमा में उनके प्रेम का रंग भरा हुआ प्रतीत होता है और सूर्य के तेज में उन्हीं के समान सुन्दर मुख दृष्टिगोचर होता है।

मैं पाती ... ... दिखाती ॥८५-८६॥

शब्दार्थ—अलक=बाल। खंजन= पक्षी। गुल्फ=टखने। कलभ =हाथी।

भावार्थ—मुझे भ्रमरों की पंक्तियों में श्रीकृष्ण के केशों का सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है तो खंजन पक्षी व मृगों में उनके सुन्दर नेत्रों की शोभा दिखाई देती है। हाथी की सूंड देख कर कृष्ण की दोनों विशाल भुजाओं की स्मृति हो आती है। तोते की चोंच में उनकी सुन्दर नासिका की शोभा लक्षित होती है।

अनार के दानों में मुझे कृष्ण के दाँतों की शोभा प्रतीत होती है जबकि रक्त वर्ण बिम्बा फल में कृष्ण के होठों की श्रेष्ठ लालिमा झलकती है। मैं केलों में कृष्ण की दोनों जंघाओं की शोभा देखती हूँ तथा उनके टखनों जैसा सौन्दर्य मुझे गुलाबों में दृष्टिगोचर होता है।

नेत्रो मादी ... ... की ॥८७-८८॥

शब्दार्थ—मुदमयी=आनन्द दायक। वन्हि=अग्नि।

भावार्थ—इस अपूर्व नीले आकाश में आँखों को मस्त करने वाली व बहुत आनन्ददायक श्रीकृष्ण के शरीर की नीलिमा विराज रही है। पृथ्वी में शोभा, जल में सुन्दर रस और अग्नि में अनुपम तेजस्विता भी मेरे प्यारे कृष्ण की ही दिखाई देती है।

प्रात: तथा सायकाल अनेक प्रकार के मधुर स्वरों से पक्षी चहचहाते हैं। वे मस्त होकर अनेक प्रकार की मधुर ध्वनियाँ सुनाया करते हैं। मुझे पक्षियों की चहचहाट की मधुर ध्वनि में प्रिय कृष्ण की मनमोहक मुरली की सुरीली तानें सुनाई पड़ती हैं।

पृष्ठ २५२—मेरी ... ... होगा ॥८९-९०॥

शब्दार्थ—भावत:=प्रेम से। इक्षु=ईख। प्रसृत=दूर।

भावार्थ—ऊद्धव जी ! मेरी बातें सुन सुन कर आप परेशान हो रहे होंगे और समझने लगेंगे कि मैं मोह में निमग्न होकर विवश हो गई हूँ। सत्य तो यह है कि मैं अपने सुख की कामना से मोह में निमग्न नहीं हुई हूँ अपितु मैं तो प्रेम की मर्यादा की रक्षा में प्रेम से प्रयत्नशील हूँ।

विधाता के निर्मित्त करने से ही गन्ने में मिठास व पुष्प की पंखुडी में सुन्दर रंग आता है तो जब तक ईख का इक्षुत्व और पुष्प का पुष्पत्व रहेगा, तब तक उनकी वह मधुरता और सुगन्ध कैसे नष्ट हो सकती है। इसी प्रकार मेरे हृदय से भी मेरे प्राणाधार कृष्ण की शोभा कैसे दूर हो सकती है।

क्यों मोहेंगे ... ... कहेंगे ॥९१-९२॥

शब्दार्थ—आरंजित=रंगा हुआ, युक्त। विवधु=ज्ञानी। धाता=विधाता। चित्र=विचित्र।

भावार्थ—सौन्दर्य की प्रतिमाओं को देख कर नेत्र क्यों न मुग्ध होंगे? मधुर स्वरों को सुन कर कान मोहित क्यों नहीं होंगे? प्रेम के रंग में रंगे हुए प्राणियों के प्रीति से क्यों न रंगे जायेंगे क्योंकि विधाता के द्वारा रचित शरीर के ये धर्म ही हैं।

जिस प्रकार यदि शीशे तथा जल में दूसरे पदार्थों का प्रतिबिम्ब पड़े तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है? आश्चर्य की बात तो तब होगी यदि उनमें प्रतिबिम्ब नहीं पड़ेगा। इसी प्रकार आँख, कान हृदय पर यदि रूप आदि का प्रभाव न पड़े तो ज्ञानी व विद्वान लोग इन अंगों को स्वस्थ नहीं कह सकते।

पाई ... ... त्रिधा है ॥९३-९४॥

शब्दार्थ—प्रभृति=आदि। शुचितावान=पवित्र। अर्थी=धन का लोभी। त्रिधा=तीन प्रकार का।

भावार्थ - सुनने-सुनने में भी भेद हुआ करता है तथा विश्व में देखने आदि में भी अनेक भेद होते हैं। कोई तो वासना में मग्न होकर दोषों में फँस जाता है जबकि कोई अत्यन्त पवित्र और संयमित जीवन व्यतीत करने वाला होता है।

सुन्दर पुष्प को खिला हुआ देख कर पक्षी प्रसन्न हो उठता है जबकि भ्रमर उसकी छवि विलोक कर, रस ले-लेकर मस्त हो-होकर गूंजता है। परन्तु धन का लोभी माली उसी पुष्प की सुन्दरता से आनन्दित होने पर

भी उसे तोड़ लेता है। इस प्रकार तीनों एक ही पुष्प को तीन विभिन्न दृष्टियों से देखते हैं।

पृष्ठ २५३—लोकोल्लासी ... भिन्नता है ॥९५-९६॥

शब्दार्थ—रूप उद्भासिता=सौन्दर्य से चमकती हुई। प्रचुर=बहुत। प्रखरा=तीव्र। व्याधा=पक्षी पकड़ने वाला।

भावार्थ—किसी सौन्दर्य से दमकती हुई स्त्री की आनन्ददायक शोभा देख कर कोई तो कामातुर हो उठता है और कोई आनन्दमग्न हो जाता है जबकि कोई उसके निर्मात्ता परमेश्वर का यशोगान करने लगता है। इस प्रकार इन तीनों की तीव्र दृष्टियाँ भिन्न-भिन्न ढंग से देखती हैं।

सुन्दर वृक्षों पर सुशोभित पक्षियों की मधुर ध्वनियाँ सुन कर ज्ञानी व्यक्ति परमब्रह्म भगवान के प्रेम के पाठ पढ़ता है तो शिकारी की उन पक्षियों को मारने की इच्छा और भी वृद्धि पाती है। इस प्रकार दोनों व्यक्ति पक्षियों की मधुर ध्वनि को अलग-अलग प्रकार से सुनते हैं।

योंही ... ... न आवें ॥९७-९८॥

शब्दार्थ—पात्र=व्यक्ति। ठंडे=शान्त।

भावार्थ - इसी प्रकार खाने, सूँघने तथा स्पर्श करने में भी अन्तर होता है। व्यक्तियों के स्वभाव की विभिन्नता के कारण सदा ही इन सब में अन्तर दृष्टिगत होता है। इसी प्रकार हृदय में स्थित मनोभावों में बहुत बहुत विभिन्नताएँ होती हैं। अच्छे भावा के कारण पृथ्वी भी स्वर्ग के समान बन जाती है।

(मेरे मन में कभी तो यह विचार उठता है कि) कृष्ण आयें, मधुर वार्त्तालाप करें तथा प्रेम सहित गोद में बैठाएँ जिससे मेरे नेत्रों को शीतलता प्राप्त हो व मैं आनन्द पाऊँ और कभी मेरे हृदय में ये विचार उठते हैं कि प्रिय घर आयें अथवा नहीं, पर जीवित रह कर विश्वकल्याण करते रहें।

जो होता ... ... ही है ॥९९-१००॥

शब्दार्थ—लोकोपतापी=संसार को तपाने वाला। छिद्रान्वेषी=दूसरे के दोष ढूँढ़ने वाला भोगोपरत=भोग रहित।

भावार्थ—हृदय का जो विचार विश्व को कष्ट पहुंचाने वाला, दूसरों के दोषों की खोज करने वाला व कुटिल है, उसे तामसी भाव कहते हैं। जो भाव अनेक प्रकार के भोग विलासों में निर्लिप्त, विभिन्न वासनाओं में निमग्न व स्वार्थों से भरपूर होता है, उसे राजसी वृत्ति कहा जाता है।

पर जो भाव इच्छा रहित, विश्व कल्याणकारी, संसार-प्रेमी व भोग-विलासों से रहित होता है, उसे सात्विक भाव कहते हैं। इस प्रकार देखना सुनना आदि भी सात्विक, राजसी व तामसी—तीन प्रकार का—होता है। आत्म त्याग करना हृदय की सात्विक-वृत्ति ही है।

पृष्ठ २५४—जिह्वा ... ... उन्हें पा ॥१०१-१०२॥

शब्दार्थ—शरीरी=शरीर सहित, जीवित। विधु=चन्द्रमा।

भावार्थ—जीभ, नासिका, कान अथवा नेत्र आदि अंग शरीर के भाग होते हुए अपने स्वभाव को कैसे छोड़ सकते हैं तथा अपने कार्यों को कैसे त्याग सकते हैं? मेरे हृदय की आकांक्षाएं भी कैसे शान्त हो सकती है? अतः मैं इन सब को सात्विक वृत्ति का बना रही हूँ।

पहले मैं कमलों या विकसित चन्द्रमा का सौन्दर्य अपने नेत्रों से देख कर अथवा पक्षियों की मधुर ध्वनि की चहचहाट अपने कानों से सुन कर बहुत व्याकुल होती थी परन्तु अब मैं कमलों को श्रीकृष्ण के चरणों के समान, चन्द्रमा को उनके मुख के समान तथा पक्षियों की मधुर ध्वनि को मुरली का स्वर मान कर शान्ति व आनन्द प्राप्त करती हूँ।

योंही ... ... ही में ॥१०३-१०४॥

शब्दार्थ—गरिमा=गौरव। साम्य=समता। संभूत=उत्पन्न।

भावार्थ—इस प्रकार पृथ्वी और आकाश में जो कुछ भी अलौकिक व प्रिय वस्तुएं हैं, उन्हें मैं स्पर्श करके, सुन कर, देख कर तथा सूंघ कर प्रसन्न होती हूँ। उन पदार्थों में कृष्ण की अपूर्व कान्ति, गुण-गौरव तथा अंगों से उत्पन्न साम्य पाती हूँ।

हृदय में ऐसे दो अनुपम भाव आ जाने से मुझे बहुत ही अपूर्व तथा अत्यन्त गौरवशाली दो लाभ हुए। प्रथम तो मेरे हृदय में अनुपम विश्व

प्रेम जागृत हो गया तथा दूसरे मैंने अपने प्राणेश्वर कृष्ण में परमब्रह्म के दर्शन कर लिए।

पाई — — — — क्यों ॥१०५-१०६॥

शब्दार्थ—अमित=बहुत से। इन्द्रियातीत=जिसे ज्ञानेन्द्रियों द्वारा न जाना जा सके। अव्यक्त=अप्रकट।

भावार्थ—विश्व में जितने भी पदार्थ पाये जाते हैं, मैं उन सम्पूर्ण पदार्थों को प्रियतम के अपार रंग और रूपों में देखती हूँ तो भला मैं उन सब को हृदय से प्यार क्यों नहीं करूँगी ? इस प्रकार मेरे हृदय में विश्व-प्रेम जागृत हो गया।

जो ईश्वर मनुष्य के मन से भी परे है और बुद्धि से भी परे है, जो भावों का विषय नहीं है तथा प्रतिदिन ही अप्रकट रहता है, जिसको ज्ञानी नहीं समझ सकता तथा जो इन्द्रियों की पहुंच से दूर है; वह ब्रह्म कैसा ? उसे भला मैं बुद्धिहीन स्त्री कैसे समझ सकती हूँ ?

पृष्ठ २५५—शास्त्रों ... ... अतः है ॥१०७-१०८॥

शब्दार्थ विशद=विस्तृत। भूरि-संख्यावती=बड़ी संख्या वाली।

भावार्थ—शास्त्रों में वर्णन है कि ईश्वर के अनेक सिर, नेत्र, पाँव तथा हस्त हैं। इस प्रकार वह मुख, नेत्र, नासिका आदि के न होने पर भी स्पर्श करता है, सुनता है, देखता है तथा सूंघता है।

विद्वानों ने इस रहस्य का विस्तृत विवेचन करके बताया है कि इस सारे विश्व में सम्पूर्ण प्राणी उसी ईश्वर की ही प्रतिमाएँ हैं। इस तरह उसके असंख्य आँख, कान आदि होते हैं अतः ईश्वर अनेक नेत्र आदि वाला कहा गया है।

निष्प्राणों ... ... की ही ॥१०९-११०॥

शब्दार्थ—गात्रेन्द्रियां=शरीर की इन्द्रियां। तिमिर-हर=सूर्य। विद्युल्लता=बिजली।

भावार्थ—प्राणहीन जीवों की सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियां व्यर्थ हो जाती हैं। वास्तव में, इन्द्रियों के कार्य कोई दूसरी ही शक्ति कर रही है। यह

नासिका, नेत्र, जिह्वा आदि इन्द्रियाँ ईश्वर के अंश ही हैं अतः वह नाक-कान बिना भी स्पर्श आदि कार्य करता है।

सितारों व सूर्य में, अग्नि तथा बिजली मे, अनेक रत्नों तथा विभिन्न मणियों में उसी की ज्योति प्रकाशित हो रही है। मैं पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, वृक्ष तथा पक्षी, विश्व में सर्वत्र उसी की सर्व-व्यापक प्रभुता फैली देखती हूँ।

प्यारी ... ... विलोका ॥१११-११२॥

शब्दार्थ - ज्ञान-गर्भा=ज्ञान से भरी हुई। जगत-गत=संसार में व्याप्त, ब्रह्म।

भावार्थ—सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त ब्रह्म का प्रिय-शासन जो प्रतिदिन लीला किया करता है, वह स्नेह से भरा, अत्यन्त मधुर, पवित्रता में मग्न, अत्यन्त उच्च कोटिका, अपूर्व, सरल, रसयुक्त, ज्ञानपूर्ण, मनोहर, पूजनीय, मान्य, उज्जवल तथा हृदय को आनन्दित करने वाला है।

मैंने शास्त्रों में वर्णित जितनी बातें कही हैं, वे सब बातें सिद्ध करती हैं कि ब्रह्म सारे विश्व में व्याप्त है। मैं विश्व में प्रिय कृष्ण को तथा कृष्ण में विश्व को व्याप्त पाती हूं, इस प्रकार मैंने ईश्वर को भी कृष्ण में ही पाया है।

पृष्ठ २५६—शास्त्रों ... ... अभिन्ना ॥११३॥

शब्दार्थ—दिव्य=महान। संसिद्धियों से=विभूतियों से।

भावार्थ—शास्त्रों में उल्लेख है कि ईश्वर की जो निष्काम भक्ति है, वह मनुष्य शरीर की सब विभुतियों में श्रेष्ठ है। मैं जब इस बात को तात्विक दृष्टि से देखती हूँ तो प्रिय कृष्ण की व परम-ब्रह्म की भक्ति को एक समान पाती हूँ।

जगत ... ... भक्ति है ॥११४-११५॥

शब्दार्थ अकाम=निष्काम। आत्म-निवेदन=मन के उद्‌गारों का वर्णन। निगदिता=मानी गई

भावार्थ—विश्व के जीवन, प्राण व स्वरूप अर्थात् ईश्वर को, अपने माता-पिता व गुरु आदि को तथा प्रियतम को प्रसन्न करने का उपाय भक्ति ही है। वह निष्काम तथा अत्यन्त मनोरम है।

ईश्वर की भक्ति करने के नौ प्रकार प्रतिष्ठित हैं। वे हैं—उसके गुणों को सुनना, कीर्त्तन करना प्रार्थना तथा याचना करना, स्मरण करना तथा मन के उद्गारों का वर्णन करना, अर्चना करना, सख्य भाव रखना तथा पाद-पूजा करना।

बना ... ... अर्चनादि के ॥११६॥

शब्दार्थ—पद-अर्चनादि = चरणों की पूजा आदि।

भावार्थ—कोई व्यक्ति यदि किसी की कल्पित प्रतिमा बना कर उसके चरणों की पूजा आदि करे तो वह उस स्वयं (ईश्वर) के चरणों की पूजा आदि के समान श्रेष्ठ नहीं होगा, ऐसा बुद्धि से ज्ञात होता है।

विश्वात्मा ... ... सज्जनो में ॥११७-११८॥

शब्दार्थ—भावोपेता = प्रेमसहित। आर्त्त = दुःखी। लोक-उन्नायक = विश्व को उन्नत बनाने वाले। सच्छास्त्रों = पवित्रशास्त्र। अभिधा = नाम।

भावार्थ—सम्पूर्ण जीव, नदी, पर्वत, लता, बेलें तथा अनेक वृक्ष-सभी पदार्थ उस परम-ब्रह्म परमेश्वर, जो विश्व भर में व्याप्त है, के रूप हैं। उनकी समुचित रक्षा व आराधना तथा प्रयत्नपूर्वक सेवा-सम्मान करना ही उस ब्रह्म की सर्वश्रेष्ठ भावमयी भक्ति है।

दुःखी, पीड़ित व रोगी जीवों, कष्ट में पड़े मनुष्यों तथा विश्व को उन्नत-शिखर पर ले जाने वालों के कथन ध्यानपूर्वक सुनना। पवित्र ग्रन्थों तथा सत्संगियों के वाक्यों को सुनना ही सज्जनों में श्रवण नायक भक्ति मानी जाती है।

पृष्ठ २५७—सोये ... वन्दनाख्या ॥११९-१२०॥

शब्दार्थ—उन्मेष = प्रकाश। सद्विग्रहों = पवित्र शरीर वाले।

भावार्थ—उन दिव्य तथा अपूर्व गुणों का गायन करना व कथन करना ईश्वर की कीर्त्तन नामक प्रिय भक्ति है जिससे मोह में सोये व्यक्ति जाग उठें, अज्ञान के अंधकार में पड़े हुए व्यक्तियों में ज्ञान का उदय हो जाये, भटके हुए व्यक्ति सद्मार्ग पर चलने लगें तथा ज्ञान का प्रकाश हो जाये।

विद्वान, गुरुजन, देशभक्त, ज्ञानी, दानी, सदाचारी, गुणी, तेजस्वी आत्म-त्यागी व बुद्धिमान व्यक्तियों तथा देवताओं जैसे पवित्र सन्तों के सम्मुख झुक कर नमस्कार करना ईश्वर की वन्दना भक्ति कहलाती है।

जो बातें ... ... भावुकों में ॥१२१-१२२॥

शब्दार्थ—भव-हितकारी=संसार का मंगल करने वाली। संज्ञका=नामक।

भावार्थ—जो कार्य विश्व के लिए मंगलकारी हैं, सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाले हैं और जिन कार्यों से पतित जातियों का उत्थान होता है, ऐसे कार्यों के निमित्त स्वयं को न्यौछावर कर देने के लिए प्रस्तुत रहना उस विश्वरूप ईश्वर की दासता नामक भक्ति है।

निधनों, लाचार विधवाओं, अनाथों आश्रितों व दुःख से घबराये हुए व्यक्तियों का ध्यान करना तथा उन्हें शरण देना, शुभकार्यों तथा दूसरे के कष्टों का स्मरण करते रहना स्मरण नामक भक्ति कहलाती है।

विपद ... ... — भक्ति है ॥१२३॥

शब्दार्थ—प्रथित=प्रसिद्ध। वृन्द=समूह।

भावार्थ—विपत्तियों के सागर में डूबे हुए जन-समुदाय के कष्ट-निवारण के निमित्त तथा मंगल के लिए अपने शरीर व प्राणों को न्यौछावर कर देना आत्म-निवेदन नाम से प्रसिद्ध भक्ति है।

संत्रस्तों ... ... नाम्नी ॥१२४-१२५॥

शब्दार्थ—संत्रस्त=डरे हुए। निबोध=मूर्ख। सुहृद=मित्र। दूर्वा=दूब।

भावार्थ— भयभीत लोगों को शरण देना। सन्तप्त लोगों को मधुर शान्ति देना, मूर्खों को उचित ज्ञान देना, रोगियों को औषधि देना, प्यासों को जल तथा भूखों को अन्न देना उस परमेश्वर की अति मधुर अर्चना नामक भक्ति है।

अनेक प्रकार के प्राणी, वृक्ष, पर्वत तथा लता आदि की तो बात ही क्या है आकाश में सूर्य से लेकर पृथ्वी पर घास तक (जितने भी छोटे-बड़े पदार्थ हैं) उन सब से सद्भावनापूर्वक काम लेना तथा उनका सच्चा मित्र होना, सख्य नामक भक्ति कहलाती है।

पृष्ठ २५८—जो प्राणी ... --- सेवनाख्या ॥१२६॥

शब्दार्थ— निपीड़न=पीड़ा। वपु=शरीर।

भावार्थ—जो प्राणि-समूह अपने कार्यों की विषमता के कारण समाज रूपी शरीर के पावों के समान नीचे पड़ा है अर्थात् पतित है उन्हें शरण देना तथा प्रयत्नपूर्वक सम्मान दिलाना उस परमेश्वर की पद-सेवा नामक भक्ति कहलाती है।

कह चुकी ... --- ... --- हुई १२७-१२८॥

शब्दार्थ—मणि-कांचन-योग=दो श्रेष्ठ वस्तुओं का सम्बन्ध। सुयोग=सुअवसर।

भावार्थ—भगवान की साधना करने के उपायों का मैंने वर्णन कर दिया। ये ही उपाय प्रिय कृष्ण की साधना के हैं अतः मेरे लिए कृष्ण की व परमेश्वर की भक्ति अत्यन्त पवित्र तथा एक ही है।

मुझे यह मणि व स्वर्ण के मिलने के समान तथा सुगन्धित सोने के समान सुअवसर बड़े पुण्यों से मिला है। अतः मैं इस पृथ्वी पर बहुत ही सौभाग्यशालिनी हूं।

जो इच्छा ... --- ... ... होवे ॥१२९-१३०॥

शब्दार्थ— अनुज्ञा=आज्ञा। अछत=रहते हुए। दत्तचित्ता=संलग्न।

भावार्थ—मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण की जो इच्छा है तथा उनसे मुझे जो आदेश मिला है, मैं प्राणों के रहते हुए उन्हें नहीं भूल सकती। यों तो ये सब बातें मेरे लिए एक श्रेष्ठ व्रत के समान ही थीं, पर अब और भी अधिक संलग्न होकर मैं इन कार्यों में लग जाऊँगी।

यद्यपि मैं यह स्वीकार करती हूं कि मुझ में मोह की मात्रा अभी शेष है तथापि मैं प्रेम के रंग में दिन प्रतिदिन अधिक लीन होती जा रही हूं। इन पवित्र कार्यों में अब मैं इस प्रकार मग्न हो जाऊँगी कि मेरे हृदय में प्रेमपूर्णतया व्याप्त हो जाए।

पृष्ठ २५६—मैंने ... — दुःखों से ॥१३१-१३२॥

शब्दार्थ—सौजन्य=सज्जनता। जिज्ञासा=उत्सुकता।

भावार्थ—मैंने भक्ति अधिकतर कृष्ण के निकट बैठ कर अतः उन्हीं से सीखी है। उत्सुकता होने के कारण मैंने भक्ति का रहस्य भी जान लिया। अब मैं अपनी बुद्धि द्वारा निरन्तर प्रयत्न करके इस व्रत के पवित्र कार्यों को बिना भूले पूर्ण करूँगी।

हे ऊद्धव ! आप मथुरा जाकर मेरे प्रिय कृष्ण से बड़ी सज्जनता तथा विनम्रता से यह निवेदन करना कि मैं अपने स्वयं के कष्टों से इतनी अधिक व्यथित नहीं हूं जितनी ब्रजवासियों के कष्टों को देख कर पीड़ित होती हूं।

गोपी ... — ... — होगा ॥१३३-१३४॥

शब्दार्थ—पुष्पानुपम=पुष्प के समान अनुपम। दाहते=जलाते। सद्वाक्य=श्रेष्ठ वचन।

भावार्थ—प्राणों के समान प्यारे कृष्ण एक बार आकर गोप-गोपियों, ब्रज के व्याकुल बालक व बालिकाओं को पुष्प के समान अपूर्व मुख का दर्शन करा दें। यदि आने से उनके सुन्दर कर्त्तव्य में कोई विघ्न न पड़े तो वे आकर अपने माता-पिता की शोकावस्था देख जायें।

मैं यह स्वीकार करती हूँ कि किसी वस्तु की प्राप्ति होने पर उसकी

इच्छा बढ़ती ही जाती है तब भी कृष्ण के आने से यह लाभ होगा कि अनेक भ्रम व अनुचित धारणाएँ दूर हो जायेंगी। कृष्ण से मिलने की उत्सुकता से उत्पन्न अनेक कष्ट हृदयों को जला रहे हैं, उनके आने से कष्टों का यह तीव्र प्रवाह भी शान्त हो जायेगा।

सत्कर्मी ... ... होवे ॥१३५॥

शब्दार्थ—सनय=नीति युक्त। कौमार-व्रत=आजीवन कुमारी रहने का निश्चय।

भावार्थ—हे ऊद्धव जी! आप पवित्र कार्यों के कर्त्ता हैं, अत्यन्त पवित्र तथा बुद्धिमान हैं। यदि आप श्रीकृष्ण से नीतिपूर्वक यही कामना करें तो बहुत अच्छा होगा। मैं तो यही चाहती हूँ कि प्राणेश्वर के आदेश को नहीं भूलूं, इस विश्व के लिए उपयोगी बनूं तथा संसार में मेरा कौमार्य व्रत सफल हो।

चुप ... ... विदा हुए ॥१३६॥

शब्दार्थ—हरि-बन्धु=ऊद्धव।

भावार्थ—यह सब कह तथा हर्षमग्न हो ब्रज की शोभा कृष्ण की आभूषण राधा चुप हो गईं। कृष्ण भ्राता ऊद्धव भी राधा के चरणों की धूलि लेकर अत्यन्त शांति सहित वहाँ से विदा हुए।

———

सप्तदश सर्ग

पृष्ठ २६०—ऊधो ... आता ॥१-२॥

शब्दार्थ—निधन=मृत्यु।

भावार्थ—ऊद्धव ब्रज में दो दिनों अर्थात थोड़े समय के लिए ही आए थे अतः वे मथुरा लौट गए। उन्हें लौटे कई मास हो गए पर न तो कृष्ण और न ही अन्य कोई ब्रज में आया। ब्रजवासियों के रात-दिन धीरे-धीरे व्याकुलता से व्यतीत होने लगे।

कुछ दिन बीतने पर ब्रजभूमि में एक समाचार आया। कृष्ण द्वारा कंस की मृत्यु का समाचार राजकन्याओं से सुन कर (अतः मथुरा को निर्बल समझता हुआ) जरासन्ध अपनी सेना सहित अनेक गाँवो, नगरों आदि को नष्ट करता हुआ तथा पृथ्वी को कँपाता हुआ मथुरा पर आक्रमण करने आ रहा है।

ए बातें ... ... का ॥३-४॥

शब्दार्थ—व्यापमाना=फैली हुई। तर्कनाएँ=विचार। घोटक=घोड़ा। उत्थिता=उठती हुई। शतधा=सैकड़ों खंड।

भावार्थ जब ये समाचार ब्रजभूमि में फैले तो सभी लोग बहुत व्याकुल हो गए तथा शोक में निमग्न हो गए। 'अब क्या होगा? प्रिय कृष्ण की विपत्ति कैसे दूर होगी?' सभी के हृदयों में प्रत्येक क्षण यह विचार उठता रहता था।

यदि आकाश में यों ही धूल उठती दिखाई देती तो भी ब्रजवासी भय से पागल से हो जाते थे। यदि कहीं भी घोड़ों की टापों का ध्वनि सुनाई पड़ती तो ब्रज के गोप-गोपियों के हृदयों के सैकड़ों खंड हो जाते।

पृष्ठ २६१—धीरे-धीरे ... ... की ॥५-६॥

शब्दार्थ—निहत=हताहत।

भावार्थ—धीरे-धीरे ये कष्टपूर्ण दिन बहुत भय सहित समाप्त हो गए। लोगों द्वारा यह शुभ समाचार सब घरों में फैल गया कि कृष्ण ने शत्रु की सम्पूर्ण सेना को हताहत कर दिया। मगधराज जरासन्ध घबराकर अपने प्राण बचाकर भागा।

ब्रजभूमि को कँपा देने वाले जरासन्ध के आक्रमण के समाचार सत्रह बार फैले। परन्तु आक्रमण का समाचार जब अठारहवीं बार ब्रजभूमि में आया तो गोप-गोपियों की सम्पूर्ण आशा खंड-खंड हो गई।

हा! हाथों ... ... निराशा ॥७-८॥

शब्दार्थ—उत्पात=उपद्रव। स्वाती-सेवी=स्वाति नक्षत्र का जल पीने वाला।

भावार्थ—हाय ! इस बार सब का कलेजा अत्यन्त व्याकुल हो गया। विलाप करते हुए सम्पूर्ण ब्रजवासियों को यह कष्टप्रद समाचार मिला कि मगधराज जरासन्ध के उपद्रवों से बेचैन होकर कृष्ण ने प्यारा नगर मथुरा त्याग दिया और द्वारिका जाकर रहने लगे।

जिस प्रकार शरद् ऋतु के बीत जाने पर, केवल स्वाति नक्षत्र के जल को ग्रहण करने वाला अत्यन्त प्यासा पपीहा, निराश हो जाता है; उसी प्रकार श्रीकृष्ण के द्वारिका गमन से सारी ब्रजभूमि में सर्वत्र निराशा व्याप्त हो गई है।

अलंकार—उदाहरण।

प्राणी ... ... में था ॥९-१०॥

शब्दार्थ—वीची=लहर। जीवनांबोधि=जीवन रूपी समुद्र।

भावार्थ—मनुष्य आशा के कमल जैसे चरणों को कभी नहीं छोड़ पाता। यह आशा जीवन रूपी समुद्र में लहरों के समान सुशोभित रहती है। जब हृदय रूपी पृथ्वी पर निराशा रूपी अन्धकार व्याप्त होता है तो वहाँ भी आशा रूपी किरणें धुन्धला सा प्रकाश देती ही हैं।

ब्रजवासियों ने निराशा में मग्न होकर भी आशा की किरण नहीं त्यागी। आज भी लाखों लोगों के नेत्र कृष्ण का मार्ग देखा करते थे। शोक, दुःखादि की मात्रा बहुत बढ़ गई थी तथा व्याकुल नेत्रों से जल के स्थान पर रक्त प्रवाहित हो रहा था।

अलंकार—९वें पद में रूपक तथा उपमा। १०वें पद में अतिशयोक्ति।

पृष्ठ २२२—कोई ... ... जलों की ॥११-१२॥

शब्दार्थ नखत=नक्षत्र। विरत=रहित। खचित=जड़ा हुआ।

भावार्थ—कोई भी व्यक्ति कब तक उदास बैठा रह सकता है? अपने टूटे हुए हृदय को पकड़ कर कोई व्यक्ति कब तक अश्रु गिराता रह

सकता है ? अपने हृदय का दमन करके, तारे गिन-गिन कर, ऊब कर, विरहाग्नि में जल कर कोई कब तक अपने सांसारिक सुखों से रहित रह सकता है ?

यहाँ सूर्य और चन्द्रमा की अनुपम कान्ति वाली किरणें, तारों से जड़े आकाश की नीलिमा, मेघ-समूह, वृक्षों तथा सुन्दर लताओं की छवि है। तालाब, नदी व झरनों के जल सुन्दर क्रीडाएँ यहाँ करते रहते हैं।

मीठी ... ... सहस्रों ॥१३-१४॥

शब्दार्थ—वाद्यादिक=बाजे आदि। आख्यान=कथा।

भावार्थ—गाने-बजाने की सुन्दर मधुर तानें, पक्षी-समूह की प्यारी चहचहाहट, बालकों की क्रीडाएँ, सुन्दर ऋतुओं पर्वों तथा उत्सवों की सम्पूर्ण छवि, विचित्र वस्तुओं से भरी हुई भूमि और संसार की सम्पदा देख कर चित्त प्रसन्न होता है।

अनेक कष्टों से दुःखी तथा पीड़ित लोग दृष्टिगत होते हैं उन्हें देख कर इन नेत्रों के सम्मुख इस कुटिल-विश्व का चित्र आ जाता है। सज्जन व्यक्ति विविध सुन्दर कथाओं से उन्हें समझाते हैं। उन्हें संतान का स्वाभाविक प्रेम भी है तथा जीवन के हजारों कार्य हैं।

हैं प्राणी ... ... ही थी ॥१५-१६॥

शब्दार्थ—चित्तोन्मादी=चित्त को पागल कर देने वाली। न्यूनप्राथः=बहुत कम।

भावार्थ—(ऊपर वर्णित सांसारिक सौन्दर्य तथा कार्य) प्राणियों के हृदय को मोहित करके फेर देते हैं तथा धीरे-धीरे प्रबल दुःख की तीव्रता भी कम हो जाती है। अनेक भावों के साथ अपनी सर्व-व्यापक मोहकता से दुःखी हृदयों के दुःखों को वे प्रायः दूर कर देते हैं।

गोप-गोपियाँ, नन्द व यशोदा, बालक व बालिकाओं का चित्त को पागल कर देने वाला तीव्र कष्ट भी समय पाकर कम हो गया, यद्यपि शोक

धीरे-धीरे कम होता-होता लगभग समाप्त हो गया तथापि कृष्ण की साँवली प्रतिमा सभी के हृदयों में विद्यमान रही।

पृष्ठ २६३—वे गाते ... ... राधिका ने ॥१७-१८॥

शब्दार्थ— किल्विष=मलिनता। निरता=लीना। जनिता=उत्पन्न।

भावार्थ—वे लोग यदि गाते थे तो मधुर स्वर से कृष्ण का यशोगान करते थे। अधिकतर कृष्ण के विषय में ही वार्त्तालाप होता रहता था। पर्व और उत्सव मनाने के लिए वे दिन अच्छे माने जाते थे जिन तिथितों को राधा व कृष्ण ने सुन्दर क्रीड़ाएँ की थीं।

विरह से उत्पन्न पीड़ा को नष्ट कराने में, मलिनता दूर करने में, पीडित हृदय में शान्ति उत्पन्न कराने में, प्रतीक्षा में व्याकुल नन्द व यशोदा को समझाने में सब से अधिक प्रयत्न कृष्ण की प्रियतमा राधा ने ही किया।

चिन्ता-ग्रस्ता ... ... अनेकों ॥१९-२०॥

शब्दार्थ—केकी=मोर। नटित=नाचता हुआ। केकिनी=मोरनी।

भावार्थ—चिन्ता में निमग्न, विरह की भावना से ओत-प्रोत जो अनेकों बालिकाएँ आजन्म कुमारी रहने का निश्चय किए हुए थीं वे प्रतिदिन राधा के चरण-कमलों के निकट आ बैठती थीं तथा बहुत उपकृत अनुभव करती थीं।

यदि आकाश में मेघ समूह घिर आते और मोर अपनी मोरनी के साथ क्रीड़ा करता हुआ नाचता अथवा पपीहा वर्षा की उत्सुकता से पी-पी पुकारता तो वे अनेकों बालिकाएँ पागलों के समान हो जाती थीं।

ये बातें ... ... दीखती हैं ॥२१-२२॥

शब्दार्थ—सलिल-धर=जलधर, मेघ। पर्जन्य=दूसरे के लिए शरीर धारण करने वाला, बादल। त्रिविध=तीन प्रकार की।

भावार्थ—वे बहुत उदास होकर जल भरे मेघ को सम्बोधित करके कहती थीं—तू हमारे प्रियतम जैसे शरीर वाला (काला) है अतः हमारी

पीड़ा को क्यों बढ़ाता है। जलधर और पर्जन्य तेरे नाम हैं अर्थात् तू शीतलता प्रदान करने वाला तथा दूसरों के लिए जन्म लेने वाला है, पर तू मेरे हृदय को शीतलता प्रदान क्यों नहीं करता ?

तू अपनी शोभा दिखाकर मोर को बहुत आनन्दित कर देता है, पर पपीहा तुझे देखकर उतना ही प्रसन्न नहीं होता (अर्थात् प्रसन्न तो होता है, पर उतना नहीं)। तेरे श्यामवर्ण को देखकर मेरा हृदय बहुत कष्ट पाता है। ऐ मेघ ! इस प्रकार तू तीन प्रकार के रूप क्यों दर्शाता है।

पृष्ठ २६४—ऐसी ... --- व्यथा का ॥२३-२४॥

शब्दार्थ—पक्षाभा=पंख की छवि। कलापी=मोर।

भावार्थ—राधा प्रायः ऐसे स्थानों पर पहुंच जाती थी और प्रसन्न होकर बड़ी चतुरता से उस खिन्न बालिका से कहती थी—ओ प्रिय बहिन ! यदि तुम्हें अपने हृदय में शान्ति स्थापित करने की थोड़ी भी आकांक्षा है तो इस विश्व को प्रेम की दृष्टि से देखो।

मेघ हमारे नेत्रों के सम्मुख प्रिय कृष्ण की सुन्दर छवि प्रकट कर देता है। मोर अपने पंख द्वारा कृष्ण के मुकुट की शोभा दर्शाता है। पपीहा हमारे हृदय में प्रियतम का सच्चा प्रेम अंकित कर देता है। ये सब बातें तो आनन्द दायक हैं, इनमें दुःखी होने की तो बात ही क्या है ?

होती ... ... --- पाती ॥२५॥

शब्दार्थ—विपन्ना=दुःखी। इन्दु=चन्द्रमा।

भावार्थ—यदि कोई बालिका पूर्णिमा के निर्मल चन्द्रमा को देख कर दुःखी होती तो राधा बड़े मृदु स्वर से उसे इस प्रकार समझाती थीं—हे बहिन ! तेरा इस प्रकार व्याकुल होना बुद्धिमानी नहीं है। क्या तुझे चन्द्रमा में कृष्ण के मुख की शोभा दृष्टिगत नहीं होती ?

जब कुसुमित ... — ... कोकिलायें ॥२६-२७॥

शब्दार्थ— ऋतुपति=वसंत। मनसिज=कामदेव। प्रसूता=उत्पन्न।

भावार्थ—जब वसन्त-ऋतु में ग्राम में बौर लगने लगते, लता-बेलें पुष्पों से लद जाती, पृथ्वी बड़ी सरस और मनोहर हो जाती तथा कामदेव लोगों के हृदयों में मस्ती उत्पन्न कर देता··· ।

जब मलयाचल से उत्पन्न सुगन्धित पवन प्रवाहित होती, वृक्ष कलियों तथा कोंपलों से बड़ा मनोरम लगता, जब भ्रमरों के समूह कुंजों में गूंजते, जब आनन्दित कोयलें कूकने लगतीं······।

पृष्ठ २६५—तब — ··· ··· वनों में ॥२८-२९॥

शब्दार्थ—उनींदी=ऊँघती।

भावार्थ—उस समय सम्पूर्ण ब्रजभूमि व्याकुलता की साक्षात् प्रतिमा बन जाती थी। प्रत्येक मनुष्य के हृदय में पीड़ा बढ़ जाती थी। घरों में व मार्गों पर, वनों में व कुंजों में अर्थात् सर्वत्र बहुत व्याकुल, (नींद न आने के कारण) ऊँघती व खिन्न बालिकाएँ दृष्टिगत होती थीं।

विभिन्न पीड़ाओं से ग्रस्त इन दिनों में एक अत्यन्त सरल स्वभाव की सुन्दर बालिका (राधा) प्रेममग्न होकर रात-दिन इन घरों, मार्गों, वाटिकाओं, कुंजों तथा वनों में घूमती फिरती थी।

वह सहृदयता ··· ··· ··· लगाती ॥३०-३१॥

शब्दार्थ—व्यजन=पंखा। कुबलय=कमल। बीछे=शैया।

भावार्थ वह किसी मूर्छित बालिका को हार्दिक प्रेम से प्रयत्नपूर्वक अपनी गोदी में लिटाती थी। कभी उसके मुख पर जल के छींटे देती थी तो कभी सुन्दर पंखा झलने में मग्न हो जाती थी।

अपने सुन्दर हाथों से पृथ्वी पर कमलदलों, पुष्पों व पत्तों की शैया बिछाती थी। उस शैया पर विरहाग्नि से तप्त किसी बालिका को सुला कर वह अपने हाथों से शीतल लेप लगाती थी।

यदि प्रति ... ... सुलाती ॥३२-३३॥

शब्दार्थ—ढिग=निकट। बोधती=समझाती।

भावार्थ—यदि कोई बालिका अत्यन्त व्याकुल तथा खिन्न होती तो वह उसके पास कुंज में जाकर मधुर-मधुर स्वर से समझाती थी। यदि कोई पागल सी हो रही बालिका वन में मारी-मारी फिर रही होती तो वह छाया के समान उसके साथ रह कर उसका कष्ट हरती थी।

किसी विरहिणि को पृथ्वी पर लेटती हुई देखती तो उसे छाती से लगाती तथा उसके शरीर की धूलि पोंछती थी। मोह में रमी, नींद से भरी किसी अन्य बालिका का सिर सहला कर उसे गोद में सुलाती थी।

पृष्ठ २६६—सुन कर ... ... सार्थता से ॥३४-३५॥

शब्दार्थ—कश्चिदार्त्ता=कोई दु:खिया। सिधाती=पहुंचती।

भावार्थ—यदि किसी घर से किसी विरहिणि की दर्द भरी आह सुन लेती तो वह तत्काल वहाँ जाती थी। तत्पश्चात् मधुर वचनों व मोहक कथन कह कर उसकी पीडा की तीव्रता को कम करती थी।

यदि कोई दु:खिया रात भर आँसू बहा-बहाकर अथवा तारे गिन-गिन कर अपनी रातें काटती होती, तो वह उसके पास रात में ही पहुंच जाती और अपने अपूर्व नाम राधा की सार्थकता को सिद्ध करती थी।

राधा जाती ... ... पोंछ देती ॥३६-३७॥

शब्दार्थ—नन्दांगना=यशोदा।

भावार्थ—राधा प्रतिदिन यशोदा के पास जाती थी। विभिन्न बातें कह कर उन्हें समझाती थी। यदि वे अत्यन्त पीड़ित, दु:खी अथवा मूर्च्छित हो जातीं तो वह आठों पहर उनकी सेवा मे लगा देतीं।

राधा जी घंटों यशोदा की गोद में बैठी रहती थीं और उन्हें शोक में लिप्त पाकर उन्हें प्रसन्न करने के अनेकों प्रयत्न करती थीं। वे धीरे-धीरे

उनके चरणों को सहलाती थीं और उनके हृदय की व्यथा को नष्ट करती थी। वह यशोदा के दोनों नेत्रों से अपने हाथों द्वारा अश्रुजल पोंछती थी।

हो उद्विग्ना ... ... बेटी ॥३८-३९॥

शब्दार्थ—बिलख=रोना। विनीता=विनम्र होकर।

भावार्थ—जब बहुत व्याकुल होकर व बिलख बिलख कर रोकर यशोदा पूछती थी कि क्या मेरे प्राणाधार कृष्ण ब्रज में कभी नहीं आवेंगे? तब अत्यन्त विनम्र होकर बड़ी मृदुता से राधा यशोदा को बतातीं कि वे अवश्य आवेंगे। आखिर इस व्याकुल ब्रज को वह कैसे त्याग सकते हैं?

इस तरह की बातें कहते-कहते राधा के नेत्रों में जल भर आता जो कभी-कभी उनके गालों पर टपकने लगता था। यदि कभी यशोदा उस अश्रुजल को देख लेतीं तो धीरे से राधा से कहतीं थी बेटी, तू उदास मत हो।

पृष्ठ २६७—होके — — — सुनातीं ॥४०-४१॥

शब्दार्थ—क्लान्ति=क्लेश। जग-विभव=संसार का ऐश्वर्य। भूरि=बहुत।

भावार्थ—राधा नम्रतापूर्वक कहने लगती—मैं रो थोड़े ही रही हूं। मेरे दोनों नेत्रों से तो आनन्द के अश्रु बह रहे हैं। आपकी सुन्दर सेवा करके मुझे जो आनन्द होता है, वही मेरे नेत्रों में जल द्वारा प्रकट होता है।

राधा प्राय: राजा नन्द के पास उत्सुकतावश जाती, उनकी सेवा करती और उनके क्लेश दूर करती। बातों ही बातों में वह सांसारिक ऐश्वर्य की तुच्छता सिद्ध करती थी और यदि वे व्याकुल होते तो उन्हें अनेक शास्त्रादि ग्रन्थ पढ़कर सुनाती थी।

होती मारे — — — प्रेमिकों के ॥४२-४३॥

शब्दार्थ—यत्नतः=प्रयत्नपूर्वक।

भावार्थ—यदि कहीं गोप-समूह उदास बैठा दिखाई देता अथवा कोई ग्वाला व्याकुल दृष्टिगत होता तो वे बड़े प्रयत्नों से उन्हें किसी कार्य में लगा देती और बड़ी गम्भीरतापूर्वक कहने लगती—

यदि आप सब हृदय से श्रीकृष्ण को प्रेम करते हैं तो इस पृथ्वी पर पुरुष शरीर को प्राप्त करके भी उदास न बैठें। परिश्रमी बन कर रुचि-पूर्वक ऐसे कार्य करो जो कार्य अत्यन्त प्रिय कृष्ण को तथा सभी विश्व-प्रेमियों को अच्छे लगें।

जो वे ... ... बोध देतीं ॥४४-४५॥

शब्दार्थ—तदगता=तल्लीन।

भावार्थ—यदि वे गोपों के बालकों को उदास होता देखती, तो उन्हें पुष्पों के बने सुन्दर खिलौने बनाकर देतीं। उन्हें अनेक शिक्षाएँ देकर उनसे कृष्ण की लीलाएँ कराती थीं तथा स्वयं भी बड़े चाव से तल्लीन होकर घन्टों उस लीला को देखती थीं।

और भी जितनी गोपिकाएँ दुःखी थीं, राधा उन्हें भी उचित ढंग से सुखी बनाती थी। अपने प्रियतम श्रीकृष्ण की लीला गाकर, वंशी और वीणा बजाकर तथा मधुर वार्त्तालाप द्वारा वे उन्हें सान्त्वना देती थीं।

पृष्ठ २८८—संलग्ना ... ... बहाती ॥४६-४७॥

शब्दार्थ—आधि=मानसिक चिन्ता। कालिमा=कालिख। भावज्ञता=भाव प्रवणता।

भावार्थ—इस प्रकार विभिन्न सान्त्वना देने वाले कार्यों में निमग्न रहने पर भी वृद्ध व रोगी व्यक्तियों की निरन्तर सेवा करती रहती थीं। वे दीन-हीन व्यक्तियों, निर्बल मनुष्यों व विधवा आदि का सम्मान करती थी इसलिए व्रजभूमि में वह देवियों के समान पूजी जाती थीं।

वह लड़ाई-झगड़ों के क्लेश के कारणों से उत्पन्न चिन्ताओं के दुर्गुणों को नष्ट कर देती थी। वे मनों में फैले हुए दोषों को भी धो डालती थी।

वे हृदयों में भावुकता की बीज रोप देती थीं। वे चिन्ता से ग्रसित घरों में शान्ति की धारा प्रवाहित करती थीं।

आटा ... — — की थीं ॥४८-४९॥

शब्दार्थ—भूत=सम्वर्द्धना=सब प्राणियों की वृद्धि।

भावार्थ—वह चीटियों को आटा तथा पक्षियों को अन्न व जल देती थीं। उनकी दया दृष्टि कीट-पतंगों में पड़ी दिखाई देती थी। वे वृक्ष के पत्तों को भी व्यर्थ में नहीं तोड़ती थीं। इस प्रकार वे निरन्तर सब प्राणियों की वृद्धि व उन्नति में निमग्न रहती थीं।

वे सज्जन व्यक्तियों की रक्षक तथा दुष्टों की शासिका थीं। वे निर्धनों के लिए परम धन तथा रोगियों के लिए औषध के समान थीं। वे दीन व्यक्तियों की बहिन तथा अनाथों आदि के लिए माता के समान थीं। ब्रजभूमि के लिए वह आराध्य देवी थीं। समस्त विश्व के प्राणियों को प्रेम अर्पण करने वाली थीं।

जैसा ... ... गई थीं ॥५०-५१॥

शब्दार्थ—तामसी=अँधेरी रात। मोहावरित=मोह से युक्त।

भावार्थ—श्रीकृष्ण के विरह के कारण गोप-गोपियों का दुःख जितना अधिक व्यापक था, उतनी ही स्नेह की मूर्त्ति व सहृदया राधा थीं। मोह में ग्रस्त ब्रज के लिए जैसी दुःखभरी अँधेरी रात आई थी, उसमें वैसी ही चाँदनी के समान राधा सुशोभित थीं।

जिन बालिकाओं ने आजन्म कुमारी रहने का निश्चय किया था, वे भी समय मिलने पर ब्रज में शान्ति फैलाने का कार्य करती थीं। राधा के आत्मिक बल, अलौकिक गुणों तथा शिक्षा के प्रभाव से वे वास्तव में उनकी छाया के समान उन्हीं जैसी हो गई थीं।

पृष्ठ २६९—तो भी ... ... अंकिता है ॥५२-५३॥

शब्दार्थ—सोत=प्रवाह।

भावार्थ—तब भी ब्रज में वह बीता हुआ समय नहीं आया और न वैसे सुखद दिन आए। वैसी शीतल वायु ब्रज में पुनः प्रवाहित नहीं हुई। वे बादल वहाँ फिर कभी नहीं घिरे जो अमृतधारा सी बहाते। मस्त बना देने वाले मधुर स्वर से कोयल ने पुनः नहीं गाया।

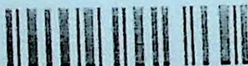
ब्रजभूमि के उत्सुक प्राणी जीते-जी अपने हृदय से प्रिय घनश्याम को व उनकी लीलाओं को न भूले। बाद में उनके वंशजों में विरह की जो छाया व्याप्त हो गई, सत्य तो यह है, कि वह आज भी ब्रजवासियों में अंकित है।

सच्चे ... ... होवे ॥५४॥

शब्दार्थ—भरत-भुव=भारत।

भावार्थ—हे परमेश्वर! कृष्ण जैसे महापुरुष देश में तथा पृथ्वी पर व राधा जैसी दयालु हृदय वाली व विश्व प्रेम में अनुराग रखने वाली भारत भूमि में अनेक विभूतियाँ जन्म लें किन्तु ऐसे विस्तृत विरह की घटना पुनः घटित न होवे।





पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

हमारे अन्य प्रकाशन

टीकायें

१—साकेत (सम्पूर्ण)	६·५०
२—साकेत—सर्ग १, ८, ६ १० तथा १२	४·००
३—साकेत—सर्ग ६, १०, ११ और १२	३·५०
४—साकेत—सर्ग प्रथम तथा नवम्	२·५०
५—कामायनी (सम्पूर्ण)	७·००
६—कामायनी (चिन्ता, आशा, श्रद्धा और लज्जा सर्ग)	४·००
७—कामायनी आपकी आवश्यकतानुसार सर्गों में	
८—उद्धव शतक—सम्पूर्ण टीका एवं आलोचना	३·५०
६—प्रिय प्रवास—सम्पूर्ण टीका	४·५०
१०—रश्मिबंध—सम्पूर्ण टीका एवं आलोचना	४·००
११—राम की शक्ति पूजा—टीका एवं आलोचना	४·००

सटीक ग्रन्थ

१—संक्षिप्त राम चन्द्रिका	४·२५
२—बिहारी सतसई सार (आगरा वि० वि० संस्कर्ण)	३·५०
३—बिहारी सतसई (केवल प्रथम दो सौ दोहे-रत्नाकर संस्करण के)	३·५०
४—कबीर सखी सार	३·५०
५—कबीर कविता कौस्तुभ	४·००
६—भ्रमर गीत सार	६·७५
७—विनय पत्रिका	६·२५
८—जायसी पद्मावत	१२·००
६—चन्दवरदाई पद्मावती समय	२·५०
१०—कयमास वध	२·००
११—विद्यापति वैभव	३·००
१२—विद्यापति का अमर काव्य	४·००

स्टूडेन्ट स्टोर, बरेली।